अभिनेत्री की आत्मकथा
—अर्जुन जोशी

अभिनेत्री की आत्म कथा

अर्जुन जोशी

दिनेश पब्लिशिंग हाऊस
घीया मंडी मथुरा, ।

अभिनेत्री की आत्म कथा ※ उपंयास
अर्जुन जोशी ※ लेखक
१९६९ ※ प्रकाशन वर्ष
जय भारत प्रिंटिंग प्रेस, ※ मुद्रक
दिनेश पब्लिशिंग हाऊस ※ प्रकाशक
दो रुपया पचास पैसा ※ मूल्य

Abhinetri ki atma katha : Story Arjun Joshi : Rs. 2/50

अपनी बात

फिल्म संसार में बीस साल। इन बीस सालों में न जाने कितने परिवर्तन हुए। कई साधारण कलाकार प्रसिद्धि के शिखर पर पहुँचे और कई विलीन हो गए। बनने-बदलने का क्रम आज भी जारी है। देश के हजारों-लाखों युवकों-युवतियों के लिए आज भी फिल्म संसार विचित्रताओं-आशाओं से भरा पूरा संसार है।

गत बीस साल से मैं फिल्म संसार में हूँ। सैकड़ों-हजारों परिचितों-मित्रों के प्यार भरे अनुभवों ने मुझे बहुत कुछ सिखाया है। ये प्यार भरे अनुभव मेरे जीवन की अनमोल निधि हैं। फिल्म संसार ने जो अनुभव मुझे दिये वे अनुभव केवल मेरे अनुभव न रह जांय इसी उद्देश्य से मैंने अभिनेत्री की आत्मकथा के रूप में इन अनुभवों को प्रस्तुत किया है।

फिल्म निर्माण का क्षेत्र आम लोगों के लिए बड़ा ही रहस्य भरा क्षेत्र लगता है। इस क्षेत्र के अभिनेता, संगीत निर्माता लेखक, दिग्दर्शक व एक्ट्रा कलाकार आम लोगों के लिए ऐसे परिचित हैं जो परिचित रहते हुए भी अपरिचित रहते हैं। मेरी यह कृति इन परिचित-अपरिचितों के अंत रंग को देखने-समझने के लिए सरल व समधुर माध्यम है।

फिल्म संसार में एक निर्माता, व लेखक के रूप में मैंने अपने जीवन के चंद साल बिताये हैं और आज भी इसी संसार के प्राणी रूप में कार्य कर रहा हूँ। न जाने कितने दिग्दर्शक

समरेश, लेखक रेवाकिशन, फायनेन्सर कचरालाल, नीता, कृष्णा, और हीरोइन प्रतिभा मेरे परिचय के क्षेत्र में आए और अपनी विशेषताओं की छाप मेरे मन में छोड़ गए। मैं ऐसे सरल और पेचीदा प्रकृति के प्राणियों की सहृदयता का आभारी, सदैव रहूँगा।

फिल्म संसार के अंतरंग को सहानुभूति से समझ कर प्रस्तुत करने के प्रयास नहीं से ही हुए हैं। या तो कोई फिल्म संसार की कटु शब्दों में भर्त्सना करता है या फिर उसे टाल देने का प्रयास करता है। इस संसार की गहराई में जाने की मानों किसी को फुर्सत ही नहीं है मेरा उपन्यास आत्मकथा के रूप में फिल्म संसार की तथाकथित रहस्यमयता के पर्दों को दूर करके पाठक को उसके अंतरंग में प्रविष्ठ कराता है और तब पाठक इस संसार के प्राणियों को अपने ही परिचितों, मित्रों, व सम्बन्धियों के रूप में समझने व अंगीकार करने लगता है।

'अभिनेत्री की आत्म कथा' इन्दौर के साप्ताहिक सीनेमा एक्सप्रेस में लगातार छः माह तक धारावाहिक रूप में प्रकाशित होता रहा और हजारों पाठकों ने इसका रसास्वादान किया।

मैं दावे के साथ कहता हूँ कि मेरा यह उपन्यास अपने आप में निराला है। आज तक किसी भी लेखक ने फिल्मी कलाकारों के जीवन को इस गहराई में पैठ कर, इतनी सहानुभूति के साथ प्रस्तुत करने का प्रयास नहीं किया। यह मेरे वर्षों के गहरे अनुभवों का परिणाम है कि मैं फिल्म संसार के प्राणियों के जीवन को इतने विस्तार और इतनी सूक्ष्मता से प्रस्तुत कर पाया हूँ।

इस उपन्यास के प्रकाशन में मेरे कई मित्रों का सक्रिय सहयोग मिला है। अगर मैं उनका आभार प्रदर्शित न करूं तो वह मेरी कृतघ्नता होगी। श्री बाबूलाल दिलोदरे ने सारे उपन्यास को टाइप किया। श्री जगदीश अग्रवाल और श्री हरिओम अग्रवाल ने इसे प्रकाशित करने का बीड़ा उठाया। श्री दामोदर कानूनगो ने इसे अपने सीनेमा एक्सप्रेस में धारा-वाहिक रूप में प्रकाशित किया।

मैं उन हजारों पाठकों का आभारी हूँ जिन्होंने इस उपन्यास को बड़े प्रेम, सुरुचि और लगन से धारावाहिक रूप में पढ़ा और इसकी प्रशंसा की।

विनीत
अर्जुन जोशी

सुरेश सदन
e/४–फिल्म कालोनी
इन्दौर (म० प्र०)

आभिनेत्री की आत्मकथा

लेखक—श्री अर्जुन जोशी

मुझे आज सब कुछ सूना-सूना सा महसूस हो रहा था। ऐसा लग रहा था कि किसी अमूल्य निधि को खो बैठी हूँ और उसे पुनः प्राप्त करने की कोई तरकीब याद ही नहीं आ है। बगीचे की मखमली दूब पर चलते पाँव मन-मन भर के पत्थर से बने जा रहे थे। पांवों को उठाना दूभर होता जा रहा था। हवा के एक हल्के से झोंके ने सामने के पौधे पर खिले सूरजमुखी के फूलों को दुलराया और मेरी नजर एक सूरजमुखी के मुस्कराते चेहरे में गढ़ गई। दूसरे क्षण मुझे ऐसा महसूस हुआ कि सूरजमुखी का फूल मुस्कराता २ जोरों से हंस पड़ा, खिलखिला कर हंस पड़ा। मुझे लगा वह मुझ पर ही हँस पड़ा है। मेरे नीरस जीवन पर व्यंग करता हुआ हंस पड़ा है। मेरा मन मुरझा कर सिकुड़ने लगा, सूरजमुखी के हंसते हुए चेहरे में धीरे-धीरे उसका चेहरा सामने आने लगा। वही चेहरा, चौड़ा विशाल ललाट, वही बड़ी-बड़ी नशे में डुबी सी आँखें, तीखी सूए की चौंच सी नाक, पतले-पतले होंठ, चतुर शिल्पी की छैनी से तराशी हुई सुडौल ठुड्डी। मानों किसी ग्रीक देवता की जीवित जाग्रत प्रतिमा हो। धीरे-धीरे लेकिन बड़े

संतुलित लहजे से वह बोलता जा रहा था– "क्या नाम बतलाया ? प्रतिभा ! अवश्य प्रतिभा तो है मगर राख की ढेरो से दबी हुई। किन्हीं अजड़, असंस्कृत पैरों से रोदी जा रही है। देखा नहीं, छाया बिटिया को उर्वशी का अभिनय बतलाते-बतलाते स्वयं उर्वशी बन गई थी। लेकिन दूसरे क्षण मानों बादलों की अंधियारी घटा ने उसे अपने आवरण से ढकना शुरू कर दिया। प्रतिभा की प्रतिभा बिजली की रेखा सी कौंधी और फिर किन्हीं सुनहरे कोटरों में छिप गई। रीता ! तुम इन बंधनों में आबद्ध प्रतिभा को मुक्त करो। यह तुम्हारी सहेली है न ?

धीरे-धीरे वह चेहरा लुप्त हो गया। सूरजमखी का फूल अपनी प्रकृत स्थिति में मुस्कराता हुआ डाली के हिंडोले पर झूलता जा रहा था। मुझे इस बार सूरजमुखी के चेहरे पर व्यंग भरी मुस्कान के स्थान पर सहानभूति पूर्ण मुद्रा दिखाई दे रही थी · तो इस फूल को भी मेरी स्थिति पर दया आ रही है। समरेश बोस ने मुझे इतनी सी देर में जान लिया। मेरे मन की गहराइयों का इतने से परिचय के बाद ही उसने ठीक-ठीक विश्लेषण कर डाला। कैसी गहरी और पैनी दृष्टि थी उसकी ! मैं उस दिन बड़े सवेरे अपनी सहेली रीता बोस के यहाँ पहुँच गई। एक दिन पहले उसकी छोटी बेटी छाया घर आ गई थी और जिद करने लगी थी– मौसी तुमको जरूर आना पड़ेगा। मेरे कालेज में ड्रामा है मुझे उर्वशी का काम करना है। तुमने मुझे समझाया नहीं तो सारा गुड़ गोवर हो जायगा। कालेज में मेरी फजीहत होगी। सब लड़के-लड़कियाँ फब्तियां कसेंगे–चली थी बनने उर्वशी और बन बैठी इन्द्र-लोक की घसियारिन। मैंने उसे टालने की कोशिश करते समझाया–पर बेटी मैं तो सब कुछ भुल गई। वे तो कालेज की बातें थी और कालेज में ही रह गई। चार साल बीत गये हैं। स्टेज

पर कदम नहीं रखा। मैं एक्टिंग क्या खाक बतलाऊंगी। पर छाया मचल पड़ी। गले में दोनों बाहें डालकर मिन्नतें करने लगी–मौसी मेरी अच्छी मौसी। तुम प्रतिभा हो, केवल नाम के लिये ही नहीं, साक्षात् प्रतिभा हो। तुम्हारे लिये यह सब बांये हाथ का खेल है। मैं अंतर्मुखी हो गई। कालेज के दिनों का वातावरण आंखों के सामने घूम गया। पर्दा उठा और दुष्यंत के रूप में बीरेन का प्रवेश हुआ। शकुंतला बनी मैं लाजवन्ती सी सिमटने लगी। बीरेन धीरे-धीरे कदम बढ़ाता हुआ मेरी ओर बढ़ा। मेरे अंग-अंग में विचित्र सी सिरहन दौड़ गई। रोंये-रोंये उठ खड़े हुए। विस्फारित आंखें नीचे झुकीं और जमीन में गढ़ गई। बीरेन मेरे पास आ पहुँचा था। वीरेन नहीं दुष्यंत–मैं प्रतिभा नहीं, शकुन्तला। मैं अपनी भूतकाल की स्मृतियों के सागर में और गहरी उतरती जा रही थी कि छाया ने मुझे झकझोर दिया–"मौसी मौसी मौन क्यों हो गई! कोई नया बहाना ढूंढ रही हो मुझे टाल देने का।" और मेरी तन्द्रा टूट गई। मुझे लगा कि छाया ने मुझे बहाना ढूंढने का रास्ता दिखा दिया है। मैंने झटपट अपनी पूर्वस्थिति में आकर बहाना ढूंढ ही लिया–"छाया तू अपनी मां को पकड़ती क्यों नहीं। अरी वह भी तो कालेज में ड्रामे में भाग लेती थी। वह भी साधारण कलाकार थोड़ी ही है।"

"वाह मौसी बहुत खूब! बहाना बनाने में भी तुम अब्वल कलाकार हो। कैसा ढूंढ निकाला रास्ता। मैं मां के पास जाऊं और फिर उससे दो-चार तीखी-तिरछी बातें सुनूं। कहेगी-तुझे पड़ी है एक्टिंग की। दिन भर घर में कम एक्टिंग करना पड़ता है। तेरे पिताजी की आज्ञाओं का पालन करने में, नीलू को रिझाने में, पीलू को पुचकारने में, बबलू को सुलाने में और टबलू को खिलाने में। "और छाया मेरे गले में फंदा सा बन कर लटक गई। रुआंसी होकर कहने लगी– "मौसी, मौसी–

प्रतिभा मौसी। बस केवल एक बार फिर कभी तुम्हें तंग नहीं करूंगी। तुम्हारी कसम। मां की कसम। भगवान की कसम।

मेरे लिए स्वीकारोक्ति के अलावा और कोई चारा नहीं था। आखिर मुझे कहना ही पड़ा–"चल भाग पगली कहीं की। इतनी सी बात पर कसमों की झड़ी लगा बैठी। ऐसी कसमों की क्या जरूरत पड़ी थी। चल हट।

"लेकिन मौसी, हां तो कह दो"। छाया गला छोड़ने को तैयार ही नहीं थी। मैंने कहा– "हां, हां, हां। बस अब तो हुई राजी। अब तो मिली तुझे तसल्ली। अब तो पिंड छोड़।" छाया मृगशाविका सी उछलती हुई कमरे के बाहर हो गई। मैं उसकी ओर देखती जा रही थी। मन कह रहा था,– रीता के कैसी प्यारी बिटिया है। मेरे भी ऐसी ही बिटिया हो तो। "बगीचे के फाटक को जोर से बंद करती छाया बाहर ही से चिल्लाई"– अरी प्रतिभा मौसी। हमारे घर पर, पक्की बात। हाँ, देखो कोई बहाना नहीं। नहीं तो मैं भूख हड़ताल कर दूंगी। सच्ची ! समझी मैंने जोर से हंसकर हामी भरी। सोचा इस पगली से छुटकारा पाना मेरे बस की बात नहीं है। और फिर सुबह-सुबह रीता से भी तो भेंट हो जायेगी। एक सप्ताह हुआ है। उसके बबलू को बुखार आ रहा था तो भी नहीं जा सकी। वह भी क्या समझ बैठी होगी। कैसी सहेली है, घर की चहार दीवारी में ही बंद रहती है। पिजड़े की मैना। और तब मुझे महसूस हुआ। कालेज में बीरेन से शादी करने का इरादा करते-करते जीवन में वो कैसे आ गये। शायद उनकी तड़क-भड़क, मोटर कार, होटल-पार्टी और सुन्दर, सुडौल भोले-भाले रूप ही ने मुझे उनकी ओर आकर्षित किया था। वीरेन ने सब कुछ भांपने में देरी नहीं की और धीरे-धीरे मुझसे दूर

होता गया। दूर, बहुत दूर, मेरी दृष्टि से, मेरे नाम से, बहुत दूर। मैं प्रतिभा दास से प्रतिभा भादुड़ी बन गई। अजय भादुड़ी की पत्नी श्री मती प्रतिभा भादुड़ी। कालेज के उन्मुक्त वातावरण से आगई इस बंगले की कांटेदार सीमाओं में। उन्मुक्त वन्य देश का पुष्प कटकर आ गिरा और कांटेदार तारों में घिरे पौधों से बंध गया। कहाँ वह आजादी का जीवन और कहां घरेलू पचड़ों में बन्दी ये दिन रात। मैं अपनी उधेड़बुन में दरवाजे से सटी न जाने कब तक खडी रही। मुझे कुछ भान नहीं था। किसी ने पीछे से कंधे पर धीरे से हाथ रखा। मैं चौंक पड़ी। मुड़कर देखा, सामने वो थे। वही सुन्दर सुडोल, भोला-भाला चेहरा, लेकिन संगमरमर की मूर्ति सा, जीवन के स्पंदन से हीन। मुझे उनका इस प्रकार से छूना कुछ जंचा नहीं, मुझे कुछ अटपटा सा लग रहा था लेकिन बरबस होठों पर हल्की सी मुस्कान दौड़ गई। बरफ सी ठंडी मूर्ति के होंठ मानों हिले और वे बोले, "क्यों अकेली खड़ी-खड़ी क्या सोच रही थी? क्यों किसी की याद आ रही थी?" मैं मुड़ी और अपने कमरे की ओर चल दी। पत्थर की सुन्दर, प्रतिभा को कैसे समझाया जाता कि जीवन का स्पन्दन क्या है, यादों की गुनगुनाहट क्या है।" मैं सोफे पर जाकर पड़ रही।

दूसरे दिन रीता के मकान की गेलरी में घूमते हुए उसे देखा। साक्षात् ग्रीक देवता था। अपने आप में डूबा हुआ वह।

× × ×

मेरे मन में विचित्र उथल पुथल मच रही थी। मैं अपने आपको समझ पाने में असमर्थ थी। रीता से पुनः लौटने का वादा कर घर आई थी। लेकिन दो दिन बीत गये, उसके यहाँ गई ही नहीं। घर पर अजय की उपस्थिति दूभर महसूस

होती । ऐसा लग रहा था, अजय के साथ बंधकर जीवन को कुंठित कर दिया । अजय के साथ जीवन के चार साल और इन चार सालों में क्या किया था । मैंने, कुछ भी तो नहीं । अजय अपने पिता का इकलौता बेटा है । न काम की चिंता और न कमाने की फिकर । दिन भर मोटर में इधर-उधर दोस्तों के साथ भागता रहता था । कभी-कभी दिन भर घर में ही बैठा रहता । विवाह का पहला वर्ष तो दौड़ते-भागते बीत गया लेकिन बाद के तीन-वर्ष ओफ । सिर फटने लगा ! अजय के निष्क्रिय जीवन ने मेरा जीवन भी रसहीन बना दिया था । नृत्य और संगीत की शिक्षा बेकार हो गई थी । लेकिन रीता के यहां मुझे महसूस हुआ कि मुझमें अभी भी जीवन का स्पंदन शेष है, मैं निठल्ली-निष्क्रिय रहने के लिये नहीं बनी हूँ । मेरा उपयोगी जीवन यूं ही बरबाद होने के लिये नहीं है । छाया को अभिनय का पाठ पढ़ाते-पढ़ाते मैं अपने आप में ऐसी डूब गई कि न जाने क्या-क्या करती रही कुछ पता ही न रहा । न जाने कब ड्राइंग रूम में रीता और समरेश आये और कोने में पड़े हुए सोफे पर बैठ गये । जब छाया ने कहा-मौसी इतना भर कर पाई हो कालेज में वाहवाही बटोर लूंगी । और मैं सजग हुई । सामने नजर पड़ते ही रीता उछल पड़ी । वाह, कैसा कमाल का काम कर दिखाया । अरी तू तो साक्षात् कला की देवी है प्रतिभा ? और वह मुझसे लिपट गई ।

मैं झेंप सी गई थी । सामने अपरिचित आदमी था । रीता ने मेरी झेंप को ताड़ लिया । झट बोली, "अरे मुझसे बड़ी भूल हो गई । मैं भी कैसी बेवकूफ हूँ । समरेश भैय्या से तुम्हें परिचित ही नहीं कराया और फिर समरेश की ओर मुखातिब होकर कहती गई—ये है समरेश । मेरा मौसेरा भाई । कल ही बंबई से आया है अपने यूनिट के साथ । यहाँ रामटेक

पर लोकेशन शूटिंग के लिये आया है। बंबई का प्रसिद्ध फिल्म डायरेक्टर है। मैंने समरेश की ओर नजर उठाई और साथ ही नमस्कार के लिए दोनों हाथ भी। रीता बोलती गई," प्रतिभा का परिचय तो तुम्हें दे ही चुकी हूँ समरेश। मुझसे उम्र में कई साल छोटी है लेकिन फिर भी मेरी सहेली है। कालेज में ही परिचय हुआ और वहीं से मित्रता। समरेश कभी मेरी ओर, और कभी रीता की ओर देखता जाता और सिर हिला-हिलाकर रीता की बातों को अंगीकार भी करता जाता। रीता ने मेरा हाथ पकड़कर मुझे पास की कुर्सी पर बैठने का इशारा किया। समरेश मेरे नमस्कार का उत्तर नमस्कार में देकर मेरी और उत्सुक निगाह से देखता रहा। रीता को उसकी यह भाव भंगिमा कुछ विचित्र सी ही लगी। मुझे भी उसका इस प्रकार देखते जाना अजीब सा महसूस हुआ लेकिन मैं कुछ बोली नहीं और पास की कुर्सी पर हाथ रखकर बैठने का बहाना सा करने लगी। रीता चुप नहीं रही। उसने समरेश को झकझोरते हुए कहा, इस प्रकार क्या देख रहे हो। क्या किसी खोई चीज को याद कर रहे हो, या कोई खोया ख्याल वापिस लौट आया है और उसी को पकड़ रखने का प्रयास कर रहे हो? बोलो न?

समरेश मानों अपनी तन्द्रा से जागा, उसने कुछ रुककर पुन: मेरी ओर देखा और फिर रीता को ओर इंगित कर बोलने लगा– माफ करना रीता। एक उलझन में पड़ा था और उसी में चक्कर काटे जा रहा था कि अकस्मात् उलझन से निकलने का विचार हवा के झोंके की तरह आया और उसने मुझे मानो ताजगी प्रदान कर दी। "समरेश अपने आप में डूबा हुआ अपने आपमें कहता जा रहा है, ऐसा मुझे महसूस हुआ। मुझे उसका दार्शनिक सा यह रूप बड़ा आकर्षक मालूम हुआ।

मैं उसकी ओर नजर तो न गड़ा सकी लेकिन मेरे कान उसके शब्दों को बड़ी सजगता से ग्रहण करते जा रहे थे। वह कहता जा रहा था। मैं अपने नये चित्र के लिए कई दिनों से उपयुक्त पात्रों की खोज कर रहा हूँ। नायक के लिए तो पात्र मिल गया है लेकिन मेरी कल्पना को नायिका नहीं दिखाई दे रही थी। बंबई में वही लोग हैं जिनके साथ काम करते-करते अब तो मैं ऊब चुका हूँ। कोई नवीनता नहीं। मेरी नायिका है शकुंतला-उर्वशी का समन्वय। मेरी कल्पना की मूर्ति मानों साकार मुझे दिखाई दी और बस मैं लगातार उसे ही देखने में खो गया था। रीता को समरेश की यह भावुकता पूर्ण अभिव्यक्ति समझ में नहीं आ रही थी। वह बीच में ही बोल उठी" समरेश तू तो बैठा-बैठा कल्पना लोक में पहुँच जाता है और वहाँ तेरे सामने शकुंतला उर्वशी और न जाने कौन-कौन आने लगती हैं लेकिन मुझे तो तेरी सहेली सामने दिखाई दे रही है। मेरी तो यही शकुंतला-उर्वशी है। अब बतला तो सही कि तेरी नायिका है कौन ? तेरा नया चित्र कौन सा है ? समरेश की गंभीरता क्षण भर में ही हवा के क्षणिक झोंके सी गायब हो गई। और बाल सुलभ चंचलता उसके चेहरे पर दौड़ गई। वह कूदा और रीता के दोनों हाथ पकड़कर नाच उठा– "तूने मेरे मन की बात कह दी रीता। तूने मेरे मन की बात कह दी ! मैं कैसे कहूं यही मेरी समस्या थी, तूने मेरी समस्या हल कर दी रीता ? मेरी प्यारी बहिन ?" और वह रीता को नाच नचाता रुक गया और रीता चक्कर काटती धम्म से फर्श पर बैठती बोली "अरे बाप रे कैसा पगला है ? वही बचपन की आदत। इतना बड़ा हुआ है लेकिन बचपन फिर भी नहीं गया। रीता हांफती जा रही थी। समरेश फर्श में नजर गड़ाये न जाने क्या देखे जा रहा था। मैं हक्की-बक्की सी कभी रीता को और कभी समरेश को देखती जा रही थी। मुझे

कुछ समझ में ही नहीं आ रहा था। समरेश ने सीधा सा संकेत मेरी और किया था। लेकिन मुझमें ऐसी क्या विशेषतायें थीं जो एक चलचित्र की नायिका बनने में सहायक होतीं। मैं गृहस्थी के जंजाल में उलझी दिन भर घर में रहने वाली, पति की भोली-भाली सूरत में अपने आपको सदैव भुला देने वाली स्त्री। में किस बूते पर नायिका का कार्य करने में सफल हो सकती हूँ। यही विचार मेरे मन में चक्कर काटने लगे थे। प्रसन्नता; संकोच, अविश्वास, भय मेरे मानस में मेला लगा जा रहे थे। कभी में सोचती-समरेश कलाकार की दृष्टि रखता है। उसने अवश्य मेरे छिपे कलाकार मन को पहचाना है। कभी विचार उठता-नहीं, नहीं, में किसी योग्य नहीं हूँ। मैं व्यर्थ अपने बारे में सोच रही हूँ। समरेश के दिमाग में किसी और नायिका की मूर्ति होगी। दूसरे क्षण विचार आता अजय सुनेगा तो क्या कहेगा। शायद दो दिन भोजन नहीं करेगा। और बालक की तरह नाराज होकर रूठ जायगा। नहीं, नहीं मुझे अपने बारे में बहम ही हो गया है। मैं इस उधेड़बुन में ड्राइंग रूम में अधिक देर तक ठहरने का साहस नहीं कर सकी और कदम बढ़ाती हुई सामने की बालकनी में आकर खड़ी हो गई।

आसमान में बादल घिर आये थे। कबूतरों का एक जोड़ा उड़ान भरता बादलों के इस घिराव से मानों डर गया था और जल्दी-जल्दी अपने कोटर में छिपने के लिए उड़ा जा रहा था। मुझे अपनी स्थिति असमंजस में बड़ी कबतरी सी महसूस हुई जो उन्युक्त आसमान में उड़ान भरना तो चाहती है लेकिन बादलों के आगमन से डरकर अपने कोटर में विश्राम के लिए भी व्याकुल है। दूर कपड़ा मिल की चिमनी बेतहाशा धुंआं उगलती जा रही थी। मील जोरों से चीखी। सारा

वायुमंडल मानों आक्रोश कर चीख उठा। मजदूरों की टोलियां सड़क से गुजरने लगी। मेरी विचार श्रृंखला टूटी। ड्राइंग रूम में रीता और समरेश बातें कर रहे थे। और बरबस ही मेरे कान भी उसी ओर लग गये।

समरेश कह रहा था–"मेरी कल्पना की नायिका का साकार रूप तुम्हारी सहेली में मिल गया है मुझे। रीता, मेरा चित्र महान् चित्र बनेगा। अद्वितीय।"

"लेकिन समरेश प्रतिभा तो शादी-शुदा है। इसके ससुर बड़े कटटर विचारों के हैं। वे इस प्रकार के विचार को भी पास नहीं फटकने देंगे।" हां अजय के बारे में कुछ निश्चित नहीं कहा जा सकता। वह शायद ········ ।"

"शायद ·· ··· ...अजय ? अजय कौन है ?"

"प्रतिभा का पति। भोला-भाला युवक है। पिता की कमाई पर आश्रित है। उसे किस बात की चिंता है। यूं सोसायटी में घूमता-फिरता भी है।"

"तो उन्हीं को राजी किया जाय। रीता ? सारी जिम्मेदारी तुम पर··· तुम चाहो तो सब संभव हो सकेगा।"

"और लोगों से पहले प्रतिभा की खुद की तो राय जान ली जाय। वह तो देखो न बालकनी में खड़ी सारे नागपुर शहर को ही आत्मसात किए जा रही है।" रीता ने बैठे-बैठे ही जोर से पुकारा" प्रतिभा ? ओरी प्रतिभा। क्या आसमान की लंबाई नापने की योजना बना रही है। इधर आ न।"

मैंने जानबूझ कर सुना-अनसुना कर दिया। इस बार रीता उठकर मेरे पास आई और मेरा हाथ पकड़कर कमरे में खींच लाई। हम तीनों आमने-सामने बैठ गये। रीता ने समरेश की ओर देखकर कहा– "भैय्या तू ही अपना प्रस्ताव इसे समझा। मेरे पास न तो तेरे जैसी भाषा ही है और न विचार

की शक्ति ही मैं गृहस्थी के पचड़े में फंसी क्या जानूं कला के क्षेत्र को।" समरेश कुछ क्षण मौन रहा और फिर मेरी ओर देखकर कहने लगा– "माफ करना, इस छोटे से परिचय के बूते पर ही कुछ कहने की गुस्ताखी कर रहा हूँ। मेरे नये चलचित्र "अपरिचित" की नायिका के काम के लिये आप स्वीकृति दें तो मैं अपने को सौभाग्यशाली मानूंगा। उपयुक्त नायिका के न मिलने से मेरी सारी योजनायें लम्बे अर्से से खटाई में पड़ी हुई हैं। आपके इस छोटे से अभिनय से मुझे पूरा विश्वास हो गया है कि "अपरिचित" की नायिका आपके रूप में ही सजीव हो सकती है। "समरेश इतना कहकर चुप हो गया और कोट के बटन से अंगुलियों को उलझाता रहा। उसने अपना प्रस्ताव तो प्रस्तुत कर दिया था लेकिन वह मेरे मन को समझने में समर्थ नहीं हो पा रहा था। मैं क्या उत्तर दूं, कुछ मेरी समझ में नहीं आ रहा था। मैं अपने आपमें डूबी जा रही थी आखिर रीता ने ही मेरी सहायता की- "अभी कौन सी जल्दी है री। अभी-अभी फैसला करने के लिए तो समरेश कह नहीं रहा है। सोचने के लिए समय ले ले।" में कुछ भी बोल नहीं पाई। दीवार की घड़ी ने साढ़े बारह बजाये। मैं कुर्सी से उठ खड़ी हुई। मैंने समरेश को नमस्कार किया और दरवाजे की ओर चल पड़ी। रीता और मैं गैलरी को पार करती जा रही थीं। दोनों मौन दरवाजे पर आकर मैं रुकी। दूर ड्राइंग रूम के दरवाजे पर खड़ा-खड़ा समरेश हमारी ओर देख रहा था। मेंने रीता से कहा, "कल फिर आऊंगी और जल्दी से कदम बढाती हुई सड़क पर आ गई। दरवाजे पर खड़ी रीता ने भी पुनः याद दिलायी, "कल अवश्य आना भूल मत जाना।"

मैं विचार-शून्य सी कदम उठाती न जाने कब घर पहुँची, कब कपड़े बदले और पलंग पर पड़कर सो गई।

दो दिन हो गये। मैं रीता के यहां जाने की हिम्मत बटोर नहीं पा रही थी। दो दिनों में अजय ने कई बार बातें करने की कोशिश की, सिनेमा जाने का प्रस्ताव रखा लेकिन मुझे अजय के किसी भी प्रस्ताव से प्रसन्नता नहीं हो रही थी। मुझे अजय की हर बात अनुभव-शून्य बालक की बातों सी लग रही थी। मेरी यही इच्छा हो रही थी कि अजय फिलहाल मुझसे दूर, बहुत दूर चला जाये तो बहुत सुन्दर रहे। मैं अकेलापन चाहती थी। अपने आपके अलावा मुझे और किसी से मिलने की इच्छा नहीं थी। अपने बगीचे की हरियाली व महकते हंसते, फूलों से, मैं अपने आपको बहलाना चाहती थी और इसी उद्देश्य से मैं अपने भारीपन को लिये बगीचे में इधर-उधर चक्कर लगाती जा रही थी।

आसमान में कब बादल घिर आये और कब हल्की सी बूंदाबांदी शुरु हुई मुझे कुछ ज्ञात नहीं। किसी ने आकर मुझे झकझोरते हुए सजग किया– "अरी पगली अन्दर चल, भींग रही है कब से।" रीता मेरा हाथ पकड़े मुझे कमरे में ले जा रही थी।

नौकर को चाय लाने का आदेश देकर मैं सोफे पर बैठ गई। रीता से क्या बात करूं, कैसे बात करूं, कुछ तय नहीं कर पा रही थी। रीता से संकोच महसूस हो रहा था। उससे मिलने का वायदा करके भी दो दिन तक उसके यहां नहीं गई और आखिर उसे ही मेरे यहाँ आना पड़ा। न जाने इन दो दिन में मेरे बारे में क्या-क्या सोचती रही होगी वह। रीता सामने ही कुर्सी पर बैठी हुई थी। सामने के गोल टेबल पर फूलदान में नये-नये ताजे डहलियां के बड़े-बड़े रंग-बिरंगे फूल मुस्कराते जा रहे थे। मैं एक फूल की पंखड़ियों से उलझने का असफल प्रयास करने लगी। रीता मौन बैठी मेरी ओर देखती

जा रही थी। शायद बातचीत शुरु करने के लिए उपयुक्त शब्दों की तलाश कर रही थी। नौकर ने कमरे के मौन को भंग करते हुए चाय की ट्रे टेबल पर रखी। चाय के साथ और कुछ तो होना चाहिए। मुझे नौकर की बेवकूफी पर झुन्झलाहट आ रही थी। मैंने उसकी ओर देखते हुए कहा, "केवल चाय लाकर रखदी। तुम्हें समझ कब आयगी। जाओ। बिस्कुट और नाश्ता ले आओ। नौकर मन ही मन कुछ बड़बड़ाया। शायद कह रहा था, "आपने मुझे चाय का कहा और मैं चाय ही लाया, मैं क्या जानू कि नाश्ता भी लाना था। वह बड़बड़ाता हुआ कमरे के बाहर निकल ही रहा था कि रीता बोल उठी, "नहीं, नहीं नाश्ता वास्ता कुछ नहीं चाहिए। बस चाय ही काफी है। मैं घर से भोजन करके ही निकली हूँ। "नौकर दरवाजे पर ही रुक गया। और मेरे नये आदेश की राह देखने लगा। मुझे उसकी बेवकूफी पर गुस्सा आ रहा था। मैं लगभग चिल्ला ही उठी "तू क्या देख रहा है। जैसा कहा वैसा कर न। जल्दी नाश्ता ले आ।" और मैं चाय तैयार करने लगी। रीता ने कुर्सी नजदीक खींची और चाय के प्याले में शक्कर मिलाती हुई बोली, "तुझे क्या होगया है प्रतिभा। दो दिन तक सूरत ही नहीं दिखाई। मैंने सोचा कहीं बीमार तो नहीं पड़ गई। कम से कम संदेश तो भिजवा सकती थी। मैंने चाय का प्याला उठाते-उठाते रीता की ओर देखा लेकिन कोई उत्तर नहीं दे पाई। मन कह रहा था-क्या संदेश भेजती, कुछ समझ भी तो नहीं पा रही हूँ। रीता ने पुनः मेरी ओर देखा मानों पूँछ रही हो- अब भी बोलोगी या मौन ही रखोगी ?

मैंने बोलने की कोशिश की लेकिन शब्द होंठों तक आकर रुक गये। मैं कुछ भी बोल नहीं पा रही थी। रीता शायद मेरी हालत को समझ रही थी। उसने पैनी नजर से मेरी ओर देखा और पुनः चाय पीने लगी। मैंने पुनः बोलने का

प्रयत्न, किया, "रीता ......।" आगे मैं कुछ न बोल पाई। शब्द होंठों के बाहर निकल ही नहीं पा रहे थे। रीता ने चाय के प्याले को टेबिल पर रख दिया और कुर्सी से उठकर मेरे पास सोफे पर बैठ गई और मेरे कंधे पर हाथ रखते हुए बोलने लगी, "आज तुझे हो क्या गया है। बोलती-बोलती रुक गई। ऐसी कौन सी बात है जो तुझे मसोसे जा रही है। क्या मेरा आना ही अटपटा लग रहा है तुझे। अगर ऐसा ही कुछ हो तो, ले मैं चली।" और वह सोफे से उठ खड़ी हुई। अब मेरे होंठ बंद नहीं रह सके। शायद रीता मेरे व्यवहार से नाराज हो गई थी। मैंने रीता के दोनों हाथ पकड़ लिए और गिड़गिड़ाती सी बोली, "रीता तू जा कैसे सकती है। ठहर। तुझसे बहुत बातें करनी हैं दीदी। रीता पुनः सोफे पर बैठ गई, तो अब तेरा मौन टूटा। मैं भी तो यही कहने आई थी कि बहुत सी बातें करनी हैं। तेरी मुद्रा देखकर तो किस भले आदमी की बैठने की इच्छा होगी। "वह कुछ देर रुकी और पुनः बोलने लगी" यूं घर पर ही बैठी रहेगी या कहीं चलने की तैयारी भी करेगी।"

कहाँ चलना होगा, कुछ बतला तो सही दीदी। मैंने उसकी आंखों से आंखें मिलाने की असफल कोशिश करते हुए पूछा। रीता अब मेरी ओर नहीं देख रही थी। शायद जो कार्यक्रम दिमाग में था उसी के बारे में सोचकर कुछ कहना चाहती थी। लेकिन जब वह बोली तो मुझे अपनी धारणा की गलती समझ में आई। उसने बात का रूख ही बदल दिया। कहने लगी, तू तो आई ही नहीं। समरेश अपनी पार्टी के साथ रामटेक चला गया। छाया के पिताजी कल बंबई चले गये। मैं अकेली बच्चों के साथ रह गई हूँ। हाँ समरेश ने दावत दी है। कल बंबई से उसकी हीरोईन आ रही है। कल से हीरोईन के नृत्य का शूटिंग होगा। उसने रामटेक आने के लिए जोर देकर

कहा है। तुम्हें साथ में लाने के लिए जाते वक्त बार-बार कहता गया।

"पर दीदी, घर पर कोई नहीं है और फिर ......।"

"और फिर क्या।" तेरे ससुरजी कहाँ गये? कहीं बाहर गये हैं क्या?

"वे तो काफी दिनों से यहां नहीं है। पांडीचेरी गये हैं, माताजी के पास। शायद तीन चार माह वहीं रहेगें। लेकिन अजय ... ...।"

ओ हो। अजय को मैं राजी कर लूंगी। मुझे डर था तो केवल तेरे ससुर का। पुराने विचारों के बूढ़ों के सामने क्या कहा जाय। खैर जाने भी दो। अजय कहां गया है?

"शायद क्लब गये हैं। लौटते ही होंगे।

नौकर नाश्ता लेकर कमरे में आ रहा था। लेकिन हम दोनों सोफे से उठकर दरवाजे की ओर चल पड़ी थी। रीता ने नौकर को ओर मुड़कर कहा नाश्ते की जरुरत नहीं है बदलू। इसे वापिस ले जाओ।" और हम दोनों बरामदे में आ गई। आसमान में छाये बादल धीरे-धीरे बिखर गये थे। बूंदा-बूंदी बंद हो गई थी। हरी-हरी दूब पर पानी की छोटी-छोटी बूंदे ऐसी दिखाई दे रही थी मानों प्रकृति देवी ने अपने हार के मोतियों को इधर-उधर बिखेर दिया हो। मैंने बरामदे में पड़े मोढ़ों को खींच लिया और हम दानों मोढों पर ही बैठ गई। सामने आम के पेड़ पर तोतों का एक झुन्ड आकर बैठ गया, एक डाल से एक नर तोता फुदक कर दूसरी डाल पर बैठी मादा के पास आ बैठा और उससे चोंच लड़ाने लगा। मादा चौकन्नी हो चारों ओर देखती और फिर लपककर तोते के पंखों को अपने चोंच से खुजलाने लगती। पक्षियों में भी स्नेह की माला कितनी घनी है, मैं सोचती जा रही थी। रीता की नजर भी

उस प्रणय रत जोड़े पर पड़ी। वह मेरी ओर देखकर मुस्कराई और फिर थोड़ी देर ठहरकर बोली "देख तो दोनों कितने बेशर्म है सारे तोते आम की पत्तियों में उलझे हुए है और इन्हें मस्ती सूझी है।" मुझे रीता की बात पर हंसी आ गई। रीता भी जार से हंस पड़ी। हम दोनों काफी देर तक हंसती रही। हंसते-हंसते मेरी आंखों में आंसू छल छला आये। मैं आंचल से आंसू पोंछने लगी। रीता बोली, समरेश के प्रस्ताव को ठुकरा कर तूने ठीक नहीं किया। तेरी प्रतिभा यूं ही नष्ट हो रही है। कला के क्षेत्र में ही तू अपनी योग्यता बतला सकती है, खैर।

लेकिन मैंने तो अभी तक कुछ नहीं कहा, रीता। फिर तू जानती ही है। मैं फैसला लूं इतनी स्वतंत्रता कहां है। मैं क्या करूं, क्या नहीं करूं, मुझे कुछ समझ में नहीं पड़ रहा है।" अब मेरी जुबान खुली और मैं बोलती ही गई। "गत साल पूजा के अवसर पर गौरी नृत्य किया तो तूने नहीं देखा था। ससुरजी कितने नाराज हुए थे और अजय सब सुनते रहे, कुछ बोले नहीं। मैं अपने सगीत-नृत्य को शायद भूल ही जाऊं तो अच्छा है।"

क्या कह रही हो प्रतिभा। इसी उम्र में सब कुछ भुला देने को कह रही है। अभी तू है ही कितनी बड़ी। मुश्किल से २२ वर्ष की होगी। भुला देने को उम्र पड़ी है। पर अजय बोलता क्यों नहीं। पिता के पैसे से डरता है। कहीं सारी संपत्ति हाथ से न निकल जाय।"

"कुछ समझ में नहीं आता। अजय के दोस्त, क्लब और पार्टियां। बस इसके अलावा कुछ भीं नहीं। न किसी प्रकार की जिम्मेदारी महसूस करते हैं और न अपनी स्वतंत्र स्थिति बनाने का ख्याल करते हैं। अभी तक अपने को बालक ही समझते है।" अपने आपको दबाये रखना सम्भव नहीं हो

रहा था। रीता उम्र में मुझसे १० वर्ष बड़ी थी। फिर भी उससे गत २ साल से इतनी घनिष्टता थी कि उसके आगे कुछ भी छिपा रखना संभव नहीं था। पीहर में मां के अलावा कोई नहीं था। मां भी मेरी शादी के बाद वृन्दावन जाकर सदैव के लिये वहीं रह गई थी। मुझे अपने मन की बातें कहने के लिये रीता ही सहेली के रूप में मिल सकी थी। मैं यदा-कदा उसी को अपना हृदय खोलकर बतलाती।

"खैर समरेश के प्रस्ताव को तो जाने दे। समरेश ने राह देखी और जब तू वायदा करके भी दूसरे दिन नहीं लौटी तो उसने समझ लिया कि तेरी तरफ से प्रस्ताव अस्वीकृत हो गया।

"क्या समरेश बाबू ने कुछ जिक्र किया था ?"

"जिक्र क्या करता। आदमी के चेहरे से पता नहीं लग जाता। उसने अपने प्रस्ताव का उल्लेख ही नहीं किया और रामटेक जाते-जाते केवल यही कहा, "रीता रामटेक अवश्य आना और तुम्हारी सहेली भी आ सके तो उसे भी अवश्य लाना। मैं तो इससे ही समझ गई कि समरेश ने तेरी ओर से मान लिया है। अच्छा इस चर्चा को तो छोड़ो। कल रामटेक चलना हैं। तेरे ससुरजी तो यहां है ही नहीं। उनकी ओर से छुट्टी मिली। रहा अजय वह तो फिल्म शूटिंग के नाम से भागता चलेगा। रीता आगे बोलती-बोलती रुक गई। बगीचे के सामने मोटरकार की आवाज सुनाई दी। मोटर कार रुक गई। कार हमारी थी। बगीचे का दरवाजा खुला और अजय ने बगीचे में कदम रखा। मैंने धीरे से रीता को कहा, "लो वो आ गये। उन्हीं से बात कर लो।"

अजय ने रीता को दूर से ही देख लिया और वहीं से वह चिल्लाया "रीता जी नमस्कार। दादा की सेवा से फुर्सत मिलती ही नहीं क्या।" और अजय तेज कदम बढ़ाता हुआ

बरामदे में आ गया, रीता मोढ़े से उठ खड़ी हुई। मैं भी उसके साथ ही उठी और ड्राइंग रूम की ओर मुड़ी। रीता कह रही थी "मुझे फुरसत नहीं होती है या तुमको। देखो न, मैं तो तुम्हारे घर पर ही खड़ी हूँ। तुम कभी आते हो हमारी तरफ। बड़े कामकाजी आदमी जो ठहरे भाई।"

"कामकाजी ? हो ऽऽऽऽऽ और अजय जोर से बच्चों की तरह हंस पड़ा। मैं झटपट ड्राइंग रूम में आ गई।

बरामदे में अजय और रीता काफी देर तक बातें करते रहे। ड्राइंग रूम में सोफे पर आंखें मूंदे चुपचाप पड़ी रही। न जानें रीता कब चली गई। मुझे सोफे पर पड़े झपकी लग गयी। अजय ने मेरा सिर छुआ तो मैं चौंककर जाग गई। मैंने झटपट सोफे से उठने की कोशिश की पर अजय ने मुझे उठने ही नहीं दिया। वह स्वयं भी सोफे पर मुझसे सटकर बैठ गया। वह थोड़ी देर तक मेरे चेहरे को घूरता रहा और फिर बोला "मैं तो डर ही गया था।" मैं उसकी बातों को काटकर बोल उठी "क्यों क्या बात थी ? किससे डर गये थे।"

"वाह डर नहीं जाता। तुम सोफे पर इस प्रकार सो रही थी जैसे कोई बीमार पड़ा हो। मैंने समझा कहीं बुखार तो नहीं आ गया है। और इसीलिए तुम्हारे ललाट को छू लिया।"

"हमेशा ऐसी बालकों सी बातें करते हो, मैं बीमार क्यों पड़ने लगी।" मैंने रूखा सा उत्तर दिया।

"अच्छा, अच्छा मेरी भूल हुई। रीता दीदी भी तुम्हें यों ही सोते देख चली गई।" अजय बोलता-बोलता रुक गया और फिर सोचकर पुनः बोला "रीता दीदी ने एक कार्यक्रम बनाया है। तुम राजी हो तो शामिल होने की हामी भरूं।"

"कैसा कार्यक्रम ? फिर मेरे हां या न का प्रश्न ही कब आता है। कौन सा कार्यक्रम है ?

"रामटेक पर एक फिल्म की आउट डोर शूटिंग हो रही है। कल वहीं चलना है। रीता दीदी के मौसेरे भाई डायरेक्टर है। बंबई के प्रसिद्ध डायरेक्टर समरेश बसु। तुम राज़ी हो न।"

मैंने कोई उत्तर नहीं दिया। अजय झटपट रीता के प्रस्ताव पर राजी हो गया। मैं समझ नहीं पा रही थी। अगर में कोई प्रस्ताव रखती तो शायद ही राजी होता लेकिन रीता ने शायद कुछ इस तरीके से प्रस्ताव रखा कि अजय तत्काल राजी हो गया। मुझे मौन देखकर अजय ने मेरा हाथ पकड़कर मुझे झकझोर दिया क्या सोच रही हो। बाबा तो यहां है नहीं फिर डर किसका।

अब मैं मौन नहीं रह सकी। मुझे अजय की इस स्पष्टोक्ति से झुंझलाहट सी होने लगी थी। मैं व्यंगात्मक स्वर में बोलो, तो तुम्हें बाबा का भय ही खाये जा रहा है। क्यों, नहौ, हो। के तुम स्वयं तो कुछ कमाते नहीं, बाबा की कमाई पर ही जी रहे हो, फिर तुमसे आत्मविश्वास कहां से आए।"

मेरे शब्द अजय को चुभे तो सही लेकिन दूसरे ही क्षण वह अपने सदैव के स्वभाव अनुसार हँस पड़ा, "अच्छा, अच्छा। तुम्हारे ये तीर से शब्द हमेशा ही सुन लेता हूँ। मेरे ढाल से मजबूत हृदय पर कोई असर नहीं होगा समझी। और वह जोर से हंस पड़ा। फिर कुछ रुककर बोला, "तुम चिन्ता मत करो में शीघ्र ही अपना स्वतंत्र कारोबार शुरू करूंगा। पर सुनो, कल का रामटेक का कार्यक्रम पक्का है न। सुबह-सुबह ही तैयार हो जाना। रीता दीदी कार लेकर आ जायगी।

"तो यों कहो न, कार्यक्रम तो तय कर ही लिया था, मुझसे तो यूं ही पूछ रहे हो। चलो जो हुआ सो ठीक।" और मैं सोफे से उठकर रसोई घर की ओर चल दी। अजय मेरे पीछे-पीछे दौड़ता आया– "सुनो, मुझे गलत मत समझो, रीता दीदी ने प्रस्ताव रखा और मैं मना नहीं कर सका। और फिर ऐसा मौका बार-बार थोड़े ही मिलता है।"

मैंने उसकी बात का लम्बा उत्तर नहीं देते हुए कहा– "ठीक है। गलत नहीं, सही समझ लिया, अब तो राजी।"

और अजय हंसता-हंसता ड्राइंग रूम में लौट गया। मैं रसोई घर में घुसी। रसोइये के चेहरे पर विचित्र सी मुस्कराहट थी। हमारी बातचीत को उसने उत्सुकतापूर्वक सुना था। मैंने कठोर निगाह से उसकी ओर देखा। वह झेंप गया और बर्तन में उबलते चावलों से उलझने लगा। मैंने उसे लगभग डांटते हुए ही कहा– "रसोई बनाना अभी शुरु किया है। शाम हो गई। तुम्हें कुछ परवाह भी है।" उसने गिड़गिड़ाते उत्तर दिया– "अभी तैयार किये देता हूँ मालकिन। चावल तो तैयार ही समझो।"

"बातें खूब बनाना जानते हो। जल्दी करो।" रसोइये ने ही-ही करके दांत निकाल दिये। मैं उसकी ओर न देखने का भाव प्रदर्शित करती चल पड़ी।

× × ×

दूसरे दिन रामटेक पहुँच गये। एक नाले के पास ही शूटिंग की तैयारियां हो रही थीं। घनी अमराई के बीच छोटा सा नाला था और उस नाले पर लकडी के बड़े-बड़े लट्ठों का कच्चा पुल था। गोकुल की ग्वालिनियों के वेश में लड़कियों की दो टोलियां थी जो नाचती हुई पुल पर से गुजरती जाती थी कि कृष्ण के वेश में नायक ने एक का आंचल पकड़ा और

उसे पुल पर ही रोका और उससे छेड़छाड़ करने लगा। वह थी राधा के वेश में चित्र की नायिका। ग्वालिनियों की टोली गीत की एक पंक्ति गाती-गाती बार-बार पुल पर गुजरती, पास ही लाउड स्पीकर से गीत की पंक्ति गूंजती– "कान्हाँ हमसे करो न रार–हम तो गोकुल की भोली नार। कान्हां सुनो, हमसे करो ना रार।"

दूर एक आम के पेड़ के नीचे अपनी मोटर कार खड़ी करके हम लोग कुर्सियों पर बैठे लोगों के पास आ गये थे। लाउड स्पीकर की आवाज रुक गई थी समरेश ने हमें देखा और झट से नमस्कार किया। रीता ने अजय का परिचय देते हुए कहा– "आप हैं अजय भादुडी नागपुर के प्रसिद्ध रायबहादुर अमोघचन्द्र भादुड़ी के पुत्र। "और फिर मेरी ओर इंगित करके बोलती गई और आप हैं प्रतिभा भादुड़ी, अजय की पत्नी" पुनः समरेश की ओर मुड़कर बोली–"आप है समरेश बसु। प्रसिद्ध फिल्म डायरेक्टर। मेरे मौसेरे भाई।" समरेश ने हमें कुर्सियों पर बैठने का इशारा करते कहा– "आप लोगों से मिल कर बड़ी खुशी हुई। रीता ने आपका जिक्र तो किया था लेकिन नागपुर में मिलने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ।"

"रीता दी से आपके बारे में काफी सुना है और समाचार पत्रों में भी आपके बारे में काफी कुछ पढ़ा है। आप महान् कलाकार हैं। "अजय ने गंभीर बनने का भोंड़ा प्रयास करते-करते कहा। मुझे अजय की विचित्र भाव भंगिमा पर काफी झुंझलाहट आ रही थी। अजय क्यों झूंठी गम्भीरता बतलाने की चेष्टा कर रहा है। गंभीरता तो अजय के जीवन को कभी छू ही नहीं पाई। समरेश अजय की ओर देख तो रहा था लेकिन उसके विचार दुनियां में थे।

नौकर चाय ले आया था। हम चाय पीने लग गये। रीता के बच्चे दूर जंगल में भागकर खेलने लगे थे। छाया मेरे

पास ही बैठी थी। काफी देर तक हम बैठे रहे लेकिन पुनः शूटिंग का काम शुरु नहीं हो रहा था। नायिका सुस्त होकर समरेश के पास आई। समरेश ने अलग जाकर उससे कुछ बात की और पुनः कुर्सी पर आकर बैठ गया। एक सहयोगी उसके पास आया और उससे पूछा "दादा कैमरा पोजीशन देख लीजिये। मेडम लतिका तैयार हैं। मुझे तब मालूम हुआ कि हिरोइन लतिका है और समरेश हिरोइन को शायद उसके काम के बारे में ही समझा रहा था। समरेश उठा। रेल की छोटी-छोटी पटरियों पर ट्राली रखी थी और उस पर रखा था कैमरा। कैमरा मैन केमरे की आंख से देखता और ट्राली धीरे-धीरे रेल की पटरियों पर आगे बढ़ाई जाती। पुल पर से नाचती लड़कियां तो निकल जाती पर राधा को कृष्ण रोक लेता लाउड स्पीकर से गीत चलता:—

"नन्दजी के लाला हमको न छेड़ों, आंचल न पकड़ों हमार।
कान्हां सुनो, हमसे करो ना रार"

और नायिका राधा के होठों पर गीत के बोल थिरकने लगते। ट्राली धीरे-धीरे आगे बढ़कर कुछ देर रुकती और पुनः पीछे की ओर खींच ली जाती। यह क्रम काफी देर तक चलता रहा। केमरा मैंने ने आवाज दी- "सब ठीक है दादा। आप देख लीजिये" समरेश उठा और ट्राली पर बैठ गया। कैमरे की आंख में आंख डालकर देखने लगा। सहयोगी ने जोर से सीटी बजाई। लाउड स्पीकर पर गीत पुनः शुरु हुआ। लड़कियाँ नाच करती-करती पुल पार कर गई। राधा का कृष्ण ने आंचल पकड़ा, उसे छेड़ने लगा और राधा के होंठ पर गीत के बोल लहराने लगे। समरेश को लिए ट्राली भी बदस्तूर आगे ले जाकर पीछे खींच ली गई। उसने ट्राली से नीचे उतरते-उतरते कहा– "ओ के। अब टेक लो।" समरेश पीछे आकर कुर्सी के पास खड़ा हो गया।

पुनः वह क्रम जारी हुआ। एक सहयोगी ने आवाज लगाई– "सायलेन्स" दूर खड़े पात्रों के चेहरों पर रिफ्लेक्टरों से रोशनी डालने वालों को कैमरामैन के सहायक ने सावधान किया। एक सहायक ने कैमरा के सामने लकड़ी की एक काली तख्ती को किया और कूदकर पीछे हट गया। नाच और गाना प्रारंभ हुआ पर बीच में समरेश जोर से चिल्ला उठा– कट ऽऽऽ। और काम रुक गया। नायिका के पैर में कंकड़ चुभ गया था अतः वह गीत की पंक्ति नहीं गा पाई थी। पुनः वही क्रम शुरु हुआ लेकिन न जाने नायिका को क्या हो गया–बीच में ही कुछ गड़बड़ होती और समरेश चिल्लाता– कट ऽऽऽ। हम लोग समरेश के ठीक पीछे कुर्सियों पर बैठे थे। छाया को नायिका का नृत्य पसन्द नहीं आ रहा था। उसने धीरे से मेरे कान के पास मुंह लाकर फुसफुसाते कहा "मौसी इससे तो तुम अच्छा नाचती हो। यह कैसी हिरोइन है। मैं समरेश मामा से कहूँगी, यह कैसी हिरोइन चुनी है। "मैंने उसे डांटते हुए कहा– "चुप रह। पगली कहीं की।" अजय ने शायद सब कुछ सुन लिया था। छाया की ओर मुड़कर पूछने लगा– "क्या बात है छाया ? छाया झेंप गई फिर रुकती-रुकती बोली– "कुछ नहीं चाचा ? मौसी से यूं ही मजाक कर रही थी।"

"पर क्या मजाक था, मुझे भी तो बतला। मैं भी तो उसका आनन्द लूं।"

"ये तो पगली है। तुम इसकी बातें क्यों सुनते हो। मैंने बात को वहीं खत्म करने का प्रयास करते हुए कहा।

"नहीं, नहीं, कुछ बात अवश्य है। बोल छाया बिटिया, कह दे क्या बात थी। "और छाया ने हंसते-हंसते अपनी राय को दोहरा दिया। मैंने सोचा कि अजय छाया की बात सुनकर सुस्त हो जायगा लेकिन उसकी प्रतिक्रिया ठीक उल्टी हुई वह

मुस्कराता हुआ मेरी ओर रुख करके बोला– "छाया बिलकुल ठीक कह रही है। यह हिरोइन तुमसे नृत्य की जानकारी में बहुत पीछे है। तुम इससे निश्चित तौर से श्रेष्ठ हो।

रीता ने अजय की प्रतिक्रिया को सुन लिया था। उसने मेरी ओर देखा और मुस्कराई और फिर पुल पर चल रही शूटिंग को देखने लगी। मैंने भी अपनी नजर उसी ओर लगाई। शूटिंग का वही क्रम चल रहा था। समरेश को संतोश नहीं हो रहा था। हिराइन हर समय कुछ न कुछ भूल कर ही देती। इस प्रकार दो घंटे बीत गये। शूटिंग का काम मानों बढ़ ही नहीं रहा था। हीरोइन के चेहरे पर पसीने की बूंदे घिर आई थीं। वह एक दम थक गई थी। उसने समरेश के पास आकर कहा "समरेश बाबू आज शूटिंग कैंसिल कर दीजिए। मेरी मानसिक हालत कुछ ठीक नहीं है। मुझे माफ करिए। मुझे आराम की सख्त जरूरत है। समरेश को हिरोइन की बात से झटका सा लगा। वह सम्हल कर बोला "लतिका यह क्या कह रही हो। तुम्हें सुबह से हो क्या गया है। मैंने तुम्हें वायदा किया है। वह कुल पूरा हो जायेगा। लेकिन लतिका ने जैसे सुना ही नहीं। बोली मैं आराम करना चाहती हूँ। समरेश बाबू। और वह अपने कैम्प की ओर चल दी। समरेश का चेहरा लाल हो गया लेकिन वह कुछ बोला नहीं। सहायक को आवाज दी "धीरेन। मेरा पाइप दो।" धीरेन दौड़कर पाइप ले आया। समरेश ने पाइप जलाया और धुएं के गुब्बारे उड़ाने लगा।

लतिका धीरे-धीरे कदम उठाती आगे चली जा रही थी। पुल पर लड़कियां झुण्ड बनाकर खड़ी हो गयी थी। कैमरा मैंन ओर उसके सहायक इस नये नाटक को देखकर उदास हो गये थे। धीरेन दोड़ा-दौड़ा लतिका के पास पहुंचा। उसने

लतिका को समझाने की कोशिश की लेकिन लतिका ने उसकी बात न सुनी। वह उदास हो लौटा और समरेश से बोला! "मैडम कहती है, मुझे तो अभी के अभी चाहिए। कल की राह देखने को भी वह तैयार नहीं। "समरेश मानों अपने आपसे ही बोला—मैं अब उसके पीछे नहीं भागूंगा। हमेशा की मांगों को कहाँ से पूरा करूँ। "और पुनः पाइप से धुंए के गुब्बारे उड़ाने लगा। धीरेन पुनः लतिका की ओर चला। काफी देर हो गई लेकिन धीरेन नहीं लौटा। समरेश मौन बैठा-बैठा पाईप पीता रहा। थोड़ी देर पहले जहां खुशी ही खुशी नजर आ रही थी वहां अब अजीब तनाव ने स्थान ले लिया था। हम लोग भी मौन बैठे सब कुछ देखते जा रहे थे। आखिर रीता ने इस मौन को भंग किया। समरेश के पास अपनी कुर्सी ले जाकर वह उसके सामने वैठ गई। इस प्रकार रीता को सामने देखकर समरेश बोला-क्यों रीता !

"यह एकाएक क्या हो गया समरेश ! तुम्हारा काम क्यों बन्द हो गया। लतिका की तबियत खराब है क्या ?"

"कुछ नहीं रीता। ऐसा तो हमारी दुनियां में आये दिन होता ही रहता है। कोई खास बात नहीं है। अभी थोड़ी देर में काम शुरू हो जायगा। समरेश और भी आगे बोलता लेकिन धीरेन को लौटते हुए देख वह धीरेन की ओर देखने लगा। हम सबका ध्यान भी धीरेन की ओर गया। धीरेन तेज कदम उठाता हुआ समरेश के पास आया और व्यग् होता हुआ बोला "दादा आप स्वयं थोड़ी देर के लिए चलिए।"

क्यों ऐसी क्या वात है ? लतिका की तबियत अब भी ठीक नहीं हुई क्या ?" समरेश ने व्यंगात्मक स्वर में पूछा।

"नहीं दादा। अभी बम्बई से तार आया है। लतिका बाई की मां सख्त बीमार है। उन्हें एक दम रवाना होने के लिए लिखा है।"

अच्छा तो मामला यहां तक आ पहुँचा है। लतिका बम्बई से ही सब कुछ तय कर आई थी। मां को भी मौके पर तार दे देने की हिदायत दे रखी थी। खैर। चलो। "समरेश उठा और रीता व हमारी ओर देखकर बोला–मैं अभी वापस आया"। और वह लतिका के कैम्प की ओर चल पड़ा। धीरेन भी समरेश के पीछे चल पड़ा।

हम लोग इतना तो समझ पाये कि हीरोइन और डायरेक्टर में किसी बात को लेकर गैर समझ हो गई है लेकिन असलियत क्या है यह कुछ स्पष्ट नहीं हो रहा था। दूर जाते हुए समरेश को कुछ देर तक तो हम देखते रहे फिर छाया मेरे कान के पास मुंह लगाकर धीरे से बोली "मौसी हम लोग यहीं बैठे रहेगें क्या ? इनका तो कुछ झगड़ा हो गया है।" रीता ने छाया की बात सुन ली और उसे डांटते हुए कहा "छाया तुझे कितनी बार समझाया है कि चुप रहा कर। मौके वे मौके बोला मत कर।"

"लेकिन मम्मी मैंने तो मौसी से यू ही पूछा था"…… ।

रीता ने छाया को आगे बोलने नहीं दिया और जोर से पुन: डांटकर। कहा, "बस-बस। मुँह बन्द रख। बहुत बोलने की आदत है तेरी।" छाया रुँआसी हो गई। मुझे रीता का इस प्रकार से छाया को डांटना ठीक नहीं लगा। मैंने उसे टोकते हुए कहा "क्यों बेकार में इस पर गुस्सा हो रही है। इसने कुछ भी तो नहीं कहा था रीता।"

"नहीं प्रतिभा तू नहीं जानती। हमेशा कुछ न कुछ बोल देती है। इसे कई बार समझाया जहां बोलने की जरुरत हो वहीं बोला कर। अब यहां इनमें झगड़ा है या नहीं इससे हमें क्या मतलब। हमें तो मौन रहकर देखते रहना चाहिए लेकिन इससे बोले बिना रहा ही नहीं जाता।"

"अब इस बार तो इसे माफ कर दो दीदी।" और मैं छाया की आंखों में आंखें गढ़ाकर हंस पड़ी। उसने झटसे अपना सिर झुका लिया। रीता का भी क्षणिक गुस्सा शान्त हो गया। अजय मौन सिगरेट पी रहा था और इधर से उधर टहल रहा था। वह इतनी देर किस प्रकार मौन बैठा रहा मुझे इस पर आश्चर्य हो रहा था। ऐसे मौके पर वह झगड़े की असलियत की खोज बीन न करे ये कैसे हो सकता है। वह धीरे-धीरे कदम उठाता हुआ कैमरा मैन की ओर चल पड़ा।

समरेश को गये हुए लगभग आधा घंटा हो गया था। वातावरण में अजीव भारीपन आ गया था। हम तो मेहमान बनकर आये थे। लेकिन ऐसी विचित्र परिस्थिति में मेहमान की स्थिति बड़ी खराब होती है। न तो वास्तविकता से वह वाकिफ होता है और न वह कुछ बोल ही सकता है। केवल अंदाज लगाकर ही उसे मन ही मन में घुटते रहना पड़ता है। ऐसी स्थिति में कुर्सी पर मौन बैठे रहना मुझे दूभर महसूस हो रहा था। मैं भी उठ खड़ी हुई और कुछ दूर पर खड़े जंगली पौधों की ओर चलने का रुख किया। रीता की स्थिति भी मेरी जैसी हो रही थी। मुझे उठते देखकर वह भी उठ खडी हुई और मेरे कंधे पर हाथ रखकर मेरे साथ ही चल दी। दोनों ही मौन थी। एक पौधे के पास जाकर निरुद्देश्य खड़ी हो गई। रीता पौधों की पत्तियां तोड़-तोड़कर यूं ही फेंकने लगी। मैंने एक ऊँची डाल पर झूमते पीलेफूल की ओर हाथ बढ़ाया। मेरा हाथ फूल तक पहुँच नहीं पा रहा था। मैं लगातार प्रयास करती जाती थी और असफल होती जाती थी। रीता मेरी इस हालत को देखकर हंस पड़ी, अरी रहने भी दे न। विचारे फूल को डाल पर ही इठलाने दे। जंगली फूल है, तेरी पकड़ में नहीं आयेगा।" मैंने इस बार उछलकर फूल की ओर हाथ बढ़ाया पर पास की कंटीली झाड़ी में उलझ गई। रीता पुनः जोर से हंस

पड़ी मैं कांटों से सुलझने में लगी थी कि रीता ने हाथ बढ़ाकर डालीसे फूल तोड़ लिया और बोली, "ले तेरा फूल। अब तो खुश हुई।" फूल मेरे हाथ में थमा कर वह कांटों में उलझी मेरी साड़ी को सुलझाने लगी।

अजय, कैमरामैन व अन्य लोगों से बातें करके हमारी ओर ही आ रहा था। हम दोनों उसी की ओर देखने लगी। हमारे नजदीक पहुँचकर अजय बोला "समरेश बाबू बड़ी दुविधा में पड़ गये हैं।" कैमरामैन शर्मा बतला रहे थे कि लतिका ने काफी बड़ी रकम की मांग की है। उसकी मांग पूरी नहीं की गई तो वह काम नहीं करेगी।

"ओह अब समझ में आया। तो लतिका ने शुरूआत में समरेश से रुपयों के बारे में ही कहा था। लेकिन वह धीरेन तो कुछ और ही खबर लाया था न"। गीता और भी कुछ बोलती पर अजय की मुद्रा से ऐसा मालूम हो रहा था कि वह काफी जानकारी इकट्ठी करके लाया है और सबकी सब जानकारी उड़ेल कर ही वह रीता को आगे बोलने देगा।

"अरी रीता दी, तार तो लतिका के इशारे पर दिया हुआ है। बम्बई में तय कर आई थी। मौके-बे मौके वह ऐसी मांग कर बैठती है। यह तो उसकी रोजमर्रा की आदत है। दूसरे डायरेक्टरों प्रोडयूसरों के साथ भी वह ऐसा ही करती है। समरेश बाबू उसे काफी रकम दे चुके हैं। बेचारे बड़ी दुविधा में फंस गये हैं।"

"कैमरामैन और क्या-क्या कह रहा है रीता ने उत्सुकता भरी नजरों से अजय की ओर देखा।

"वह बोल रहा था। "लतिका के साथ उसकी दादी रहती है। बड़ी होशियार औरत है। वहीं कुछ न कुछ नया अड़ंगा खड़ा कर देती है। समरेश बाबू उसे ही राजी करने

गये हैं। लेकिन आराम से निबटने वाली नहीं है। अब वह शायद ही मानेगी।"

"पर अजय मुझे तो इस लतिका में कोई विशेषता दिखाई नहीं दी। न वो इतनी सुन्दर ही है। न इतना अच्छा नृत्य ही जानती है। फिर ऐसी प्रसिद्ध एक्ट्रेस कैसे बन गई। ऐसी कौन सी खास बात है उसमें ?"

रीता और अजय की बातें मैं सुनती जा रही थी। अजय रीता के प्रश्न को सुन थोड़ी देर रुका। शायद उपयुक्त उत्तर सोचने के लिए ही वह रुक गया था। उसने मेरी ओर नजर उठाकर देखा और यह निश्चित मानकर कि मैं भी उसको इस जानकारी को उत्सुकता के साथ सुना रही हूँ उत्तर दिया– "लतिका की विशेषता यही है कि उसके सारे चित्र सफल हुए है। जिस चित्र में उसने कार्य किया है वही चित्र काफी अर्से तक हर जगह प्रदर्शित हुआ है। और तो कोई कारण नहीं बताया शर्मा ने। शर्मा तो कह रहा था– इस लतिका से सब लोग तंग है। इस चित्र में समरेश बाबू ने जब उसे लिया था तो कई लोगों ने कहा था– समरेश बाबू सवधान रहिये, ये हीरोइन शुरू में ही तंग करना चालू न कर दे। और समरेश बाबू बड़ी लापरवाही से जबाब देते थे– "अजी औरों से कैसे भी पेश आये लेकिन मेरे साथ लतिका का व्यवहार बुरा नहीं हो सकेगा। आखिर मैं ही तो इसे सिनेमा के धंधे में लाया हूँ। और अब बेचारे समरेश बाबू खुद इससे तंग आ गये हैं।"

"तो समरेश क्यों परवाह करता है ऐसी मगरूर की। दे क्यों नहीं देता छुट्टी।" रीता ने कुछ गरम होकर कहा।

"छुट्टी देना सरल नहीं है रीता दीदी। चित्र की तीन रीलें बन चुकी हैं। लतिका को काफी रकम दी जा चुकी है।

उसे यूं ही छूट्टी देने से सारी रकम डूब जायेगी ।" अजय ने अनुभवी के लहजे में उत्तर दिया।

"ओफ फोर, तो ऐसी पेचीदा स्थिति है।" रीता ने इस प्रकार से सांस ली मानों समरेश की दुविधा पूर्ण स्थिति का काफी भार उसे ही उठाना पड़ रहा है। अजय रीता की इस प्रतिक्रिया को सुनकर भी कुछ मौन रहा। शायद कुछ सोच रहा था। वह कभी मेरी ओर देखता और कभी रीता की ओर। हम धीरे-धीरे कदम उठाते हुए कुर्सियों के पास पहुँच गये थे। दूर से समरेश भारी कदम उठाता हुआ धीरे-धीरे आ रहा था। हम कुर्सियों के पास ही खड़े रहे। एक कुर्सी पर हम दोनों हाथों का भार डालते हुये अजय ने मेरी ओर नजर डाली फिर रीता को ओर देखा और कुछ देर यूं ही खड़ा रहा। फिर एकाएक बड़े उत्साह से बोला "रीता दी तुम्हारा क्या ख्याल है इस लतिका से प्रतिभा नृत्य के मामले में ज्यादा प्रवीण नहीं ? "मैं अजय के इस विचित्र से प्रश्न को सुनकर चौंक उठी और एकाएक बोल उठी अजय।"

अजय मेरी प्रतिक्रिया की परवाह न करते पुनः रीता की ओर देख कर बोला " बोलो न रीता दी ?"

मुझे ऐसा लगा मानों अजय मेरी मजाक कर रहा है। लतिका जैसी प्रसिद्ध तारिका से मेरो तुलना करने में मेरा उपहास करने के आलावा अजय का और क्या उद्देश्य हो सकता है। मुझे अजय पर गुस्सा आ रहा था। पर दूसरे ही क्षण ख्याल आया अजय कभी-कभी ऊटपटांग कहता रहता है। आज भी कुछ ऐसा ही हो। अतः मैंने मौन रहना ही उचित समझा। रीता ने अजय के प्रश्न को सुना और मेरी ओर पैनी नजर से देखा। वह थोड़ी देर तक मेरी ओर देखती रही और फिर बोली "अजय तुम भी कैसा मुकावला करते हो। कहां

प्रतिभा और कहां लतिका। दोनों में कोई मुकाबला भी है।"
अजय शायद रीता के उत्तर को स्पष्टतः समझ नहीं पा रहा था। रीता ने उत्तर ही ऐसे ढंग से दिया था। लेकिन अजय को न जाने कैसी धुन सवार हो गई थी। वह उसी बात को आगे बढ़ाता बोला "तुम्हारा मतलब है प्रतिभा नाचना गाना यूं ही सीखी है। वह नौसिखिया है। साफ-साफ कहो न ?" अब मुझे ऐसा स्पष्ट होने लगा कि निस्संदेह अजय की मंशा मेरे नृत्य संगीत के शिक्षण का उपहास करना ही है। मैंने दूसरी ओर मुंह फिरा लिया। अजय ने मेरी ओर ध्यान ही नहीं दिया वह रीता के उत्तर की प्रतीक्षा में था। रीता पास की कुर्सी खींच बैठती हुई बोली– "अजय तुम प्रतिभा का नृत्य बहुत कम आंक रहे हो शायद। नृत्य में प्रतिभा इस लतिका से कहीं ज्यादा श्रेष्ठ है। लतिका को नृत्य थोड़े ही आता है। वह केवल उछल कूद करती है। प्रतिभा ने नृत्य और संगीत की नियमित शिक्षा ली है। तुम हो कि उसकी कला का मूल्य तक नहीं समझते। बिचारी की कला घुट-घुट कर मर रही है।"

रीता न जाने और भी क्या-क्या कहती जाती अगर मैं उसे बीच में ही न रोक देती। मुझे अपनी यह प्रसंशा और वह भी अजय के सामने अखर रही थी बात का कोई अर्थ नहीं उसको खीचने में क्या धरा है। मैं न तो कुछ जानती हूँ और न ही मेरा किसी कला से सरोकार है। मैं जैसी हूँ वैसी ही अच्छी हूँ और मैंने अपने पैर की ऊंगलियों से जमीन खोदना शुरू कर दी। मैं इस बातचीत को आगे सुनना नहीं चाहती थी। मैं पास की कुर्सी को खींचकर उस पर बैठ गई।

अजय खड़ा-खड़ा हम दोनों को देखता रहा। हमारी बातों को सुनने को छाया ने भी अपनी कुर्सी नजदीक खींचना

चाहा लेकिन रीता ने वक्रदृष्टि से उसकी ओर देखा और छाया को आगे बढ़ने की हिम्मत ही नहीं हुई। अजय कुछ देर तो मौन रहा और फिर रीता को संबोधित कर बोलने लगा– रीता दी, मैं नहीं समझता कि मुझे तुम सब लोग गलत क्यों समझ लेते हो। प्रतिभा का ख्याल है कि मैं उसका उपहास कर रहा हूं। तुम्हारा ख्याल है मैं प्रतिभा के विकास को रोक रहा हूँ। मैं वास्तव में कुछ और ही सोच रहा हूँ लेकिन जब तुम लोगों को मेरी बातों में तथ्य ही नहीं लगता तो लो मैं मौन ही धारण कर लेता हूँ।

अजय का बात कहने का ढंग गलत ही था। अजय आज गंभीर होकर कैसे बातें कर रहा था। यूँ कभी-कभी अजय के व्यवहार में उतार चढ़ाव आते रहते थे लेकिन अभी-अभी वह जो कुछ बोला था वह सदैव से भिन्न था। मैंने उसकी ओर देखा और फिर अपनी नजर जमीन में गड़ा ली। रीता मौन बैठी रही। बोली– "खड़े-खड़े कब तक कुछ कहते रहोगे। बठो तो सही।" अजय कुर्सी पर बैठ गया। रीता बोलती गई– अच्छा हम तुम्हें सही समझेंगे कुछ स्पष्ट कहो तो सही। तब कुछ समझ में आये। आखिर क्या कहना चाहते हो ?"

अजय ने कुर्सी पर इधर-उधर कंधे हिलाये, पैर लम्बे किये, ललाट पोंछा और अपनी शारीरिक और मानसिक थकावट को दूर करने का उपक्रम करते हुए धीरे-धीरे उसने नपे तुले शब्दों में कहना शुरू किया– "मानलो यह लतिका समरेश बाबू के मनाने से भी माननी नहीं तो रीता दी तुम उनके पास एक प्रस्ताव क्यों नहीं रखती·········अजय बोलता-बोलता रुक गया। रीता ने उसे रुकते देख कर कहा "रुक क्यों गये कहो न आगे बोलो न।"

"समरेश बाबू को जितने रुपयों की जरूरत हो, मैं नागपुर में उतनी व्यवस्था कर दूँगा।"

"और मान लो कि इसके बाद भी लतिका राजी न हो तो। उसकी माँ की बीमारी का तार सच हो तो। लतिका की जगह दूसरी नायिका तो उसे यहाँ नहीं मिल सकती।"

"क्या लतिका के बिना यह नृत्य का शूटिंग सम्भव नहीं हो सकता? "अजय ने कहा।" कैसी पागलपन की बात कहते हो। लतिका प्रमुख पात्र है राधा के रूप में वह जो नृत्य करेगी उसे क्या ये आलतू-फालतू लड़कियां करेंगी।"

"पर रीता दी, अगर केवल इतने नृत्य का ही प्रश्न है तो फिर प्रतिभा………। "मैंने अजय को आगे बोलने से रोक दिया। मैं चीख पड़ी– "अजय। तुम्हें आज हो क्या गया है। मेरा उपहास करते-करते तुम्हें आज हो क्या गया है। मेरा उपहास करते-करते तुम्हें अब भी संतोष नहीं हो रहा है। मुझे अभी का अभी नागपुर पहुंचा दो। "मुझे अजय के शब्दों में व्यंग और उपहास के आलावा कुछ भी महसूस नहीं हो रहा था। मुझे अजय पर, और अपने आप पर गुस्सा आ रहा था। मैं आगे बोलने में असमर्थ हो रही थी। मेरा रोम-रोम कांप रहा था। रीता मेरी उस अप्रत्याशित स्थति को देखकर चौंक पड़ी। उठकर मेरे पास आई– "प्रतिभा तुम्हें क्या हो रहा है। अजय को गलत मत समझो बहन। उसने तुम्हें कष्ट पहुँचाने के लिए कुछ कहा नहीं है। उसे सही माने में समरेश की दुविधा-जनक स्थिति से कष्ट हो रहा है इसलिये उसने कह दिया है। फिर मैं किसी तरह का प्रस्ताव समरेश के सामने थोड़े ही रखने वाली हूँ। "रीता की बातों से मुझे शान्ति मिल रही थी। अपने आपको संयत न रख पाने के लिए मुझे अपने आप पर ही क्रोध आने लगा। अजय खड़ा-खड़ा दूर आसमान में जाने क्या

देखता रहा था। मेरी इस प्रकार की प्रतिक्रिया से शायद वह घबड़ा गया था।

समरेश लतिका के कैम्प से लौटता-लौटता रास्ते में ही रुक गया था। धीरेन और समरेश काफी देर तक बातें करते रहे। धीरेन पुनः लतिका के कमरे की ओर लौट गया और समरेश हमारी ओर चल पड़ा।

समरेश को निकट आते देख हम अपनी कुर्सियों पर यथावत् बैठ गये। मैं अपनी पूर्व स्थति में आने का प्रयास करके झूठ-मूठ मुस्कराने लगीं। छाया भी कुर्सी को खींचकर हमारे नजदीक आ गई।

समरेश को आते हुए देखकर कैमरामैन शर्मा भी कदम उठाता हुआ हमारी ओर आ गया। समरेश ने पाइप निकाल कर जलाया और पाइप को दाँतों में पकड़े हुए ही रीता की ओर मुखातिब हो बोला— "रीता तुम लोग तो थक गये होगे इस नाटक से। हम तो आदी हो गये है ऐसे जीवन से। तुम्हें व्यर्थ ही यहाँ बुलाकर परेशान किया।"

"परेशान तो तुम हो रहे हो भैय्या। पर कुछ रास्ता भी निकला।" रीता ने समरेश की ओर देखकर पूछा।

"रास्ता तो निकालना पड़ा। क्या करता आखिर कब तक ये नाज उठाता इस मैडम के। मैंने ही इसे ऐसा बनाया और अब मुझ पर ही रौब गांठने लगी।"

"तो वह राजी हो गई? आ रही है क्या?" रीता ने पूछा।

"अब मुझे उसकी जरूरत ही नहीं है। अभी नोटिस देकर ही आ रहा हूँ। धीरेन आखिरी बार कहने गया है।"

"फिर तो सारा काम यूं ही रहने दोगे। वापस नागपुर चलोगे? रीता ने पुनः प्रश्न किया।

कैमरामैन शर्मा पास आ गया था समरेश ने उसे बैठने का इशारा किया और रीता का हाथ पकड़कर उसे एक ओर ले गया। रीता और समरेश में कुछ देर बातें होती रहीं और दोनों लौटकर हमारे पास आ गये। समरेश पुनः शर्मा को एक ओर ले जाकर बातें करने लगा। रीता ने अजय और मुझे एक ओर ले चलने का इशारा किया। हम तीनों पुनः उस झाड़ी की ओर चल पड़े। चलते-चलते रीता बोली– "समरेश और लतिका के बीच जोरदार झगड़ा हो गया है। लतिका अभी बंबई जा रही है। समरेश ने धीरेन को आखिरी बार समझाने के लिए भेजा है। अगर लतिका मान जाती है तो ठीक वरना लतिका को इस चित्र से निकाल देने का उसने निश्चय कर लिया है।"

"पर तब तो चित्र अधूरा रह जायेगा न ?" अजय ने प्रश्न किया। "काम बहुत काम कम हुआ है और समरेश उसके काम को काट कर फैंक सकता है। उसने एक प्रस्ताव रखा है। इस नृत्य के काम में अगर प्रतिभा तैयार हो जाये तो समरेश पुनः लतिका को राजी करने नहीं जायेगा। यह लोकेशन शूटिंग तो हो ही जायेगा, फिर आगे के बारे में वह नागपुर चल कर तय करेगा। "रीता इतना कहकर मौन रह गई। मैं उसकी ओर देख कर जमीन कुरेदने लगी। अजय ने मेरी ओर देखा और फिर रीता की ओर देखने लगा। तीनों मौन खड़े थे। किसी के मुंह से बोल नहीं निकल रहे थे।

रीता ने पुनः मेरी ओर देखा और मेरे कंधे पर हाथ रखा। मैंने नजर ऊंची उठाई लेकिन मेरे मुँह से कोई शब्द नहीं निकला। रीता ने पुनः अजय की ओर देखा। अजय भी कुछ बोल नहीं पाया। वह मेरी और देखने लगा। मानों कह रहा हो मैं क्या उत्तर दूं। पहले प्रतिभा की राय ही जान

लो।" रीता ने मौन को भंग करते हुए अजय और मुझे संबोधित करते हुए कहा– "अजय-प्रतिभा। मैं तो प्रस्ताव लाने तक संबंधित हूँ। अब प्रस्ताव तुम दोनों के सामने है। तुम जैसा तय करोगे वैसा ही मैं समरेश को कह दूँगी। तुम दोनों अलग जाकर तय करलो। मैं यहां से दूर हट जाती हूँ।" इतना कहकर रीता दूर आम के पेड़ की ओर चल दी। अब अजय और मैं दोनों ही रह गये थे। कुछ देर दोनों ही मौन खड़े रहे। अंत में अजय ही बोला– "प्रतिभा मैंने तो पहले ही सुझाव दिया था लेकिन तुम नाराज हो गई इसलिए कुछ बोलने की हिम्मत ही नहीं कर सका। मेरी राय तो यह है कि इस मौके को छोड़ना चाहिए। तुम्हारी योग्यता का उपयोग और कब हो सकेगा। समरेश बाबू कला के पारखी है। उन्हें परख है। उन्होंने जो प्रस्ताव रखा है वह अवश्य काफी सोच विचार के बाद ही रखा होगा। मेरी ओर से तुम्हें पूरा सहयोग है।"

मैं कुछ समझ नहीं पा रही थी। गत कुछ दिनों से मैं नसिक संघर्ष की अवस्था से गुजर रही थी। मुझे अजय से दूर-दूर रहने की इच्छा हो रही थी लेकिन अब अजय का दूसरा रूप ही सामने था। मुझे ऐसा लग रहा था कि अजय के हृदय में सहानभूति है अजय मेरी आत्मा को जानता है। आखिर अजय में भी जीवन का स्पन्दन शेष है। लेकिन मेरे ससुर ! वे क्या कहेंगे ! क्या अजय उनके सामने बोल सकेगा ! क्या अपने पिताको इच्छा के विरूद्ध जाने का साहस बटोर पायेगी ? मैं कुछ समझ नहीं पा रही थी। अजय लगातार मेरी ओर देखता जा रहा था। शायद उसने मेरे मन की भावनाओं को समझ लिया था वह बोला– "प्रतिभा तुम संकोच कर रही हो। तुम्हें शायद किसी का भय है। तुम मेरी

ओर से तो निश्चित होकर रहो। मैं तुम्हारी प्रगति में बाधक नहीं बनूंगा। बोलो, अपने मन की बात स्पष्ट कह दो।"

मैंने पुनः अजय की ओर देखा ओर फिर नजर झुकाकर कहा– "तुम तो हाँ कहते हो, लेकिन पिताजी। वे लौटकर क्या कहेंगे ?" मैं आगे बोल नहीं पा रही थी।

"पिताजी को मैं सम्हाल लूँगा। मैं निठल्ला बैठा हूँ इससे– पिताजी की नाराजगी है। मैं भी अब उनकी कमाई पर जीवन बसर नहीं करना चाहता। मैं भी अपने स्वतंत्र जीवन का नया रास्ता बनाऊँगा। तुम्हारी प्रतिभा को मैं यूं ही बरबाद नहीं होने दूंगा।" अजय के शब्दों में मेरी अन्तरात्मा को हिला दिया। मेरे रंग-रंग में विचित्र सी लहर दौड़ पड़ी। मेरा हृदय भर आया और मेरी आंखों से आँसू लुढ़क गये। अजय ने आगे बढ़ कर मुझे अपनी बाहों में भर लिया। मैंने अपना मुंह अजय की बाहों में छिपा दिया। मेरी आंखों से लगातार आंसुओं की धारा बहती चली जा रही थी।

× × ×

रीता ने समरेश को हमारा फैसला सुना दिया। समरेश खुशी से नाच उठा। उसने अजय को और मुझे बहुत धन्यवाद दिया और बोला– "आपने मेरी दुविधा को दूर कर दिया। मुझे हजारों रुपयो की बरबादी से बचा लिया। उसने धीरेन को बुलाया और पूछा– "क्या लतिका अब रवाना हो रही है ?

उसे कह दो कि अभी की अभी रवाना हो जाये। मुझे उसकी जरूरत नहीं है।"

दूर लतिका के केम्प के आगे लतिका के नौकर उसकी

मोटर कार में सामान लद रहे थे। लतिका के जाने की तैयारियाँ हो रही थीं।

समरेश ने कैमरामैन शर्मा को बुलाकर कहा– "शर्माजी पुन: तैयारियां शुरू करिये। लतिका बाई की अब जरूरत नहीं है।" शर्मा को मेरे बारे में पता लग गया था। शर्मा के द्वारा सब लोगों को पता लग गया था लोकेशन शूटिंग की प्रमुख पात्र अब मैं हूँ। सारे के सारे लोग टोली बना कर मेरा अभिवादन करते आ रहे थे।

समरेश ने धीरेन को बुलाकर आदेश दिया– "धीरेन सलमा ड्रेस इंचार्ज को ड्रेस तैयारी करने को कह दो और मेरिया को प्रतिभा देवी के मेकअप के लिए आज्ञा दे दो।"

धीरेन "हाँ दादा" कह कर भागा। यूनिट की बैचेनी दूर हो गई थी। पुन: चारों ओर चहल-पहल शुरू हो गई थी मेरे मेकअप और ड्रेस की तैयारियाँ हो रही थी। मेरे एक्ट्रेस के जीवन की शुरुआत हो रही थी।

मैं ज्यों ही कैमरे के सामने खडी हुई मेरा दिल धड़कने लगा। सारे वातावरण में अजीव सी नवीनता महसूस होने लगी। ऐसा महसूस होने लगा मानो सारे लोगों की नजरें मुझ पर ही गडी हुई है और वे मेरे प्रत्येक अंग की गतिविधि की खूबी और खराबी की आलोचना को तैयार है। समरेश ने बड़े गौर से मेरे नये रूप को देखा। कैमरे की आंख में आंख डालकर उसने आदेश दिया "चेहरे को धीरे-धीरे दायी और ले जाओ, रुक जाओ। ठीक है। हां, फिर घुमाओ। बस ठीक हैं। "मैं काफी देर तक अपने चेहरे को दांये-बांयें घुमाती रही। पुन: कैमरामैन शर्मा ने कैमरे से देखना शुरू किया और फिर समरेश की ओर देखकर बोला" दादा

हालीवुड है। एकदम एक्सलेन्ट।" शर्मा के कथन पर यूनिट के सब लोग हँस पड़े। समरेश भी मुस्करा उठा। मुझे शर्मा के कथन का अर्थ समझ में नहीं आया। ट्राली पर बैठे-बैठे शर्मा जोर से चिल्लाया– "अबे गोरखनाथ ? ट्राली को पीछे खींच ले।" ट्रालीमैन ने धीरे-धीरे ट्राली पीछे खींच ली। शर्मा पुन: धीरे से बोला– बालक ? अब बसकर। ट्राली रुक गई। मैं किंकर्तव्य विमुढ़ सी अपनी जगह पर खड़ी की खड़ी रही। शर्मा के विचित्र कथन-हालीवुड, गोरखनाथ और बालक का मुझे कुछ भी अर्थ समझ में नहीं आ रहा था। समरेश ने शर्मा की तरफ नजर डाली और उससे पूछा "क्या ख्याल है शर्माजी ? लतिका की कमी महसूस होगी क्या ?"

अरे दादा ? लतिका तो एकदम घोंचू थी। ये बस एकदम हालीवुड है। एकदम एक्सलैन्ट।" समरेश शर्मा के इस कथन पर पुन: मुस्करा उठा।

मेरी ओर देखकर समरेश बोला– "प्रतिभा देवी, आप शर्माजी के तकिया कलाम सुनकर घबड़ाइयेगा नहीं। यूनिट के लोग तो बड़े आनन्द से सुनते है शर्माजी के नित्य नये गढ़े जाने वाले कथनों को। थोड़े दिन यूनिट के साथ रहिये तब आपको पता चलेगा कि नये शब्द घड़ने में शर्माजी कैसे नामी शब्दकार है।" शर्मा की ओर मुड़कर समरेश हंसा और बोला– "क्यों शर्माजी हालीवुड बात कहीं न मैंने।" शर्मा हंस पड़ा। सारे यूनिट के लोग ठहाका मारकर जोर से हंस पड़े। शर्माजी की हंसी एक दम रुक गई। वह जोर से चिल्लाया "अबे गोरखनाथ ! काम भी करोगे कि हंसते ही रहोगे।" शर्मा के इस नकली गुस्से से पुन: जोर की हंसी का फब्बारा फूट गया। अब मुझे समझ में आया। शर्मा को जब कोई काम पसन्द आता है, वह उसे हालीवुड कहता है। जब किसी के काम से

परेशान होता है वह चीख कर उस आदमी को गोरखनाथ की उपाधि से विभूषित करता है। किसी को प्यार से पुकारता है तो उसे बालक कह कर सम्बोधित करता है। शर्मा के इन शब्दों के नये अर्थ का बोध होते ही मैं भी सबके साथ हंसी में शरीक हो गई। मुझे हंसते देख शर्मा मौन हो गया और फिर कुछ क्षण ठहर कर मेरी ओर देखने लगा। उसकी नजरों से ऐसा लगा कि वह कुछ विचित्र सी बात कहने वाला है। मेरी हंसी रुक गई। शर्मा ने गम्भीर होकर कहा– "प्रतिभा देवी, यूनिट के तो सबके सब पगले हैं, देखो न हो-हो-हो करके हंसते हैं। आप तो समझदार हैं। इनके साथ हंसी से शामिल होकर अपने आप को भी··· ।" शर्मा आगे कहता कहता रुक गया। समरेश ने रिक्त स्थान की पूर्ति कर दी। "पागलों में शुमार करवा रही है।" सारे लोग समरेश के कथन पर पुनः हंस पड़े।

शर्मा चारों ओर की हंसी के गुल गपाड़े के बीच कहता गया—प्रतिभा देवी, मेरी यह मंशा नहीं थी। दादा ने झूठ मूठ अपनी ओर से जोड़ दिया। मैं क्या यह कहने की गुस्ताखी कर सकता हूँ ? लेकिन शर्मा की आवाज जोरों की हंसी के बीच डूब गई थी। पेड़ों पर बैठे तोतों के झुन्ड हंसी की इस फुहार से पहले तो चौंके और जब हंसी की फुहार ने बढ़ कर बात्याचक्र का सा रूप ले लिया तो तोतों के झुन्ड घबड़ा कर दिशा भूले से इधर उधर उड़ने लगे। सारी अमराई में विभिन्न प्रकार की ध्वनियों का विचित्र मेला लग गया।

पुनः सब लोग काम के लिए तत्पर हो गये थे। सलमा भागती हुई आई। मेरे बाल बिखर गये थे। झट से कंघी करके मेरे बाल ठीक कर दिये। भागकर मेरिया भी आ गई थी। चेहरे का मेकअप शायद बिगड़ गया था। हंसते हंसते मेरी आँखें भर आई थीं और इसी से मेकअप उतर गया था। मेरिया ने झटपट पाउडर लगाया और फिर मेरे चेहरे के सामने शीशे को

लाकर बोली—"देख लीजिये, मेडम ! ठीक तो है न !" सब ठीक था। मैंने शीशा हटाने को इशारा किया लेकिन मेरिया मेरे चेहरे की ओर ही देखती जा रही थी। पीछे शर्मा जी की चीख सुनाई दी—"गोल होजा गोरखनाथ। सब ठीक है।" मेरिया चौंक पड़ी और पुनः सजग होकर शर्मा की ओर मुड़कर बोली—"शर्माजी मैं तो गोल हुई जाती हूँ लेकिन मैं गोरखनाथ हूं या गोरखनाथिन।" शर्मा उत्तर के लिए सोच में पड़ गया। मेरिया झट से केमरे की ओट में हो गई। केमरे के पीछे से धीरेन ने धीमे से कहा—बालिका ने समस्या खड़ी कर दी शर्मा जी। धीरेन के धीमे से कहे गये शब्दों को भी सबके कानों ने सुन लिया था। शर्मा गरम होकर बोला—"तू चुप भी रहेगा गोरखनाथ। काम के वक्त भी बेकार की चकल्लसबाजी करता है।

धीरेन झेंप गया। शर्मा धीरेन की झेंप को ताड़ गया। उसे महसूस हुआ शायद धीरेन बुरा मान गया है। केमरे से आँख हटा कर ट्राली पर बैठे धीरेन के चेहरे पर हाथ फिरा कर, पुचकारते हुए शर्मा ने कहा—"झेंप गया, अरे बालक ऽऽऽऽऽ।' शर्मा के बालक के उच्चारण में कुछ ऐसी विचित्रता थी कि धीरेन के चेहरे पर मुस्कराहट की लहर दौड़ गई। शायद यूनिट के लोग पुनः ठहाका लगा कर हंसने की तैयारी कर रहे थे और शर्मा ने इसे ताड़ लिया था। उसने जोर से चीख कर कहा—"कोई गोरखनाथ हँसेगा नहीं। अब काम से काम।" और शर्मा ने पुनः केमरे की आँख में आँख डाल कर कहा—"दादा। सब ठीक है। एकदम अप-टू-डेट।"

धीरेन ने जोर से आवाज लगाई—"साइलेन्स ······।" सारी अमराई में मानो शान्ति छा गई। एक सहयोगी ने मेरे चेहरे के सामने लकड़ी की तख्ती से खट ऽऽऽऽ की आवाज की ओर बोला, 'टेस्ट वन, टेक वन। और लपक कर एक किनारे पर होगया। मैं कमरे के सामने मुँह किये खड़ी रही। कैमरे के पीछे से समरेश के हाथ से इशारा किया और मैंने धीरे धीरे

चेहरे की दाहिने से बांई ओर घुमाया और पुनः पूर्ववत अवस्था में निश्चेल खड़ी हो गई। समरेश ने आदेश दिया, "धीमे धीमे मुस्कराओ, और ज्यादा, और ज्यादा, हंसो, जोर से हंसो। मौन हो जाओ। हां, ठीक है। उदासी। थोड़ी गहरी उदासी।" मैं समरेश के कथनानुसार चेहरे पर भावों में परिवर्तन लाने का प्रयास करती रही। समरेश ने आदेश दिया—"कट, कट ऽ ऽ ऽ।' और केमरा रुक गया। शर्मा ने धीरेन से पूछा—"शर्माजी फूटेजा ?"

"तीन सौ दो।" शर्मा ने उत्तर दिया।

"तीन सौ दो ? समरेश ने प्रश्न करते पूछा।

"हां दादा। तीन सौ दो फीट है यह टेस्ट।" धीरेन ने उत्तर दिया।

"एक टेक और ले लो। पुनः वही का वही कार्य चालू हुआ। दांये, बांये, मुस्कराना व उदास होना और फिर समरेश का आदेश कट-कट ऽ ऽ ऽ ऽ।

चारों ओर पुनः घबराहट शुरू हो गई। नौकर मेरे लिए कुर्सी ले आया था लेकिन मेरी तो बैठने की इच्छा ही नहीं हो रही थी। अभी तो कुछ हुआ ही नहीं था। मेरे मनमें न जाने कहाँ से अदृष्ट उत्साह पैदा हो गया था। मैं लगातार केमरे के सामने खड़ी रह कर अपनी भाव भंगिमाओं का प्रदर्शन करना चाहती थी। केमरे के सामने खड़े खड़े मुझे समरेश के अलावा कोई दिखाई नहीं दे रहा था। ऐसा लग रहा था कि समरेश ही केवल जीवित प्राणी है और सब तो चित्र हैं, पर्दे पर के चित्र। केवल समरेश के इंगित मात्र से ही मेरे अंग अंग परिचालित हो रहे थे। मैं यांत्रिक खिलौने की तरह, जो पतले धागे से बंधा घूमता जा रहा हो, परिचालित हो रही थी। समरेश के इंगित मात्र में न जाने कैसी अनिर्वचनीय विद्युत शक्ति थी कि मैं सब कुछ समझने का प्रयास करती हुई भी समझ पाने में असमर्थ सिद्ध हो रही थी।

तेज कदम उठाती हुई रीता आई और मुझसे पूछने लगी-"क्यों री ? केमरे के सामने कैसा महसूस होता है ?"

"कुछ भी तो नहीं रीता दी।"

"नहीं, नहीं। तू छिपाती है। कुछ तो विचित्र सा अनुभव होता ही होगा।"

"रीता दी, क्या कहूँ कैसे कहूँ, मेरे पास शब्द ही नहीं है अभिव्यक्ति के लिए। हाँ, यह भय लगा रहता है कि कुछ उल्टा सीधा तो नहीं कर बैठी।"

रीता को मेरे कथन से संतोष नहीं हुआ। मुझे भी अपने कथन से तो संतोष नहीं ही हुआ लेकिन मैं यह कैसे बतलाती कि समरेश के इशारों में विचित्र चुम्बकीय आकर्षण है। और मैं उसी आकर्षण के प्रभाव से यन्त्रवत् कार्य करती रही। मैं मौन कुर्सी पर बैठ गई।

समरेश दूर कुर्सी पर बैठे अजय के पास पहुँच गया था। अजय और समरेश घुल मिल कर बातें कर रहे थे। कभी अजय उत्साह से कुछ कहता कभी समरेश की किसी बात पर मुस्कराता और कभी अपनी झूठी गम्भीरता का प्रदर्शन करता, उत्तर देता। मेरा ध्यान उन लोगों की ओर ही आकृष्ट हो रहा था। रीता यूं ही मौन खड़ी थी। मेरे कन्धों पर उसके दोनों हाथ थे। वह भी शायद अजय और समरेश की ओर ही देख रही थी। थोड़ी देर मौन रह कर रीता बोली—"अजय बड़ा प्रसन्न नजर आ रहा है। तुमने गौर से देखा प्रतिभा।"

"क्या कहा दी ?" मैंने जानबूझ कर अनजान बनने का उपक्रम करते कहा।

रीता झुंझला उठी और मेरे कन्धों को झकझोरती हुई बोली—"कह दिया तेरा सिर। कहाँ खोई खोई उड़ी जा रही है। बस इतनी सी ही देर में खोई खोई सी बनने लगी। आगे चल कर तो न जाने क्या होगा। भगवान ही जाने।"

अब मुझे अपने अनजान बनने की भूल महसूस हुई। रीता के और किसी नये व्यंगवाण को सुनने को मेरी तैयारी नहीं थी। मैं झट कुर्सी से उठ खड़ी हुई और रीता के दोनों हाथ अपने हाथों में लेकर उसे एक ओर खींच कर ले गई और बोली— "अब कहो दीदी। क्या कहती थी उस समय।"

"कहती थी कि अजय तो बांसों उछलने लगा है। ऐसा लग रहा है उसके लिए तो तुम एक दिन में ही प्रसिद्ध तारिका बन गई हो।" रीता ने बड़े उत्साह से कहा और मेरी प्रतिक्रिया के लिये मेरी आँखों में आँखें गढ़ा कर देखने लगी। मैं मौन खड़ी रही। रीता ने ज्यादा देर मेरे उत्तर की प्रतीक्षा नहीं की और बोली—"देखो न किस उत्साह से अजय बातें कर रहा है समरेश के साथ। ऐसा लगता है कि आज ही कोई लम्बी चौड़ी योजना तैयार कर लेगा वह। देखो न उसकी ओर।"

रीता ने मेरी कमर में अपनी अंगुलियाँ गड़ा कर अजय की ओर देखने के लिए मजबूर कर दिया। मैंने अजय की ओर नजर उठाई थी कि समरेश ने मुड़कर देखा। मेरी नजर समरेश की नजर से टकरा गई। मैंने झट से नजर को जमीन में गड़ा दिया। मुझे ऐसा महसूस हुआ कि समरेश की नजर में एक विशिष्ट आकर्षण है जो मुझ उसकी ओर खींच रहा है। मैं जमीन पर पड़े चन्द सूखे पत्तों से ही उलझने का झूठा प्रयास करने लगी।

× × ×

उस दिन राधा-कृष्ण नृत्य का शूटिंग सफलता के साथ पूरा हो गया। नृत्य दिग्दर्शक छज्जू महाराज के थोड़ी देर तक रिहर्सल कराने के पश्चात् ही नृत्य के हाव भाव समझने में मुझे किसी प्रकार की कठिनाई नहीं हुई। हाँ, लाउडस्पीकर की आवाज के साथ आवाज मिलाने में, होठों को हिलाने में, प्रारम्भ में काफी कठिनाई हुई लेकिन छज्जू महाराज के लगातार उत्साह

दिलाने से व समरेश की प्रेरणा से मुझे उस प्रक्रिया को समझने में भी सफलता मिल गई। लड़कियों के दल के साथ सांझ होने तक मैं लगातार नाचती-भागती रही। सूरज का प्रकाश मन्द पड़ने पर शूटिंग समाप्त हुआ। समरेश ने रामटेक से केम्प हटा कर नागपुर लौटने का फैसला किया और जल्दी जल्दी यूनिट के लोग नागपुर लौटने की तैयारी करने लगे।

रामटेक में लोकेशन शूटिंग एक सप्ताह तक चालू रखने का समरेश का निश्चय था लेकिन लतिका के व्यवहार से उसने अपना इरादा बदल दिया था। उसने बतलाया रामटेक जैसी ही नागपुर में अम्बाझरी के पास एक जगह है। वहीं अब सारा लोकेशन शूटिंग का कार्य करेंगे। नागपुर में और भी काफी सुविधायें रहेंगी।

हम लोग उस दिन काफी रात को नागपुर लौटे।

× × ×

चार दिन बीत गये। समरेश हमेशा हमारे यहाँ आता और अजय को साथ लेकर घूमने निकल जाता। मैं कभी रीता के यहाँ चली जाती तो कभी रीता मेरे यहाँ आ जाती। इन दिनों में मुझे ऐसा लग रहा था मानो युग बीत गये हों। रामटेक का शूटिंग–परीकथा की घटना सी लग रही थी। मानो घटना घटी और फिर सब यथावत। सोमवार था। मैं सोमवार को व्रत रखती थी। सुबह सुबह पूजा पाठ से निवृत हो जैसे ही बगीचे की दूब पर पैर रखा कि अजय ने कुर्सी से फाटक खोल कर बगीचे में प्रवेश किया। फाटक के पास से ही चिल्लाता हुआ आगे बढ़ा—"प्रतिभा जल्दी तैयार हो जाओ, सब तुम्हारी राह देख रहे हैं। जल्दी करो, फौरन।"

"क्यों कहाँ चलना है ? सब लोग कौन-कौन हैं ?"

"लिबर्टी सिनेमा चलना है। समरेश बाबू, व यूनिट के ..न लोग थियेटर में हैं। रीता दीदी को लेना है।"

"क्यों कोई नया अँग्रेजी खेल लगा है ? पर आज तो सोमवार है, खेल बदलेगा कैसे ?"

"नया खेल नहीं है। उसदिन के शूटिंग की रील बम्बई से तैयार होकर आगई है उसी का ट्रायल है।" और अजय मेरा हाथ पकड़ कर मुझे लगभग घसीटता हुआ ही ड्राइंग रूम में ले आया। आज अजय बड़े उत्साह में था। न जाने कहाँ से उसमें इतनी फुर्ती, ऐसी सजीवता आ गई थी। वह मुझे यों ही खड़ी देख झुंझलाया और बोला—"यूँ ही खड़ी रहोगी या कपड़े पहनोगी भी।" मैंने जल्दी से भाग कर कपड़े बदले और दोनों रीता के यहाँ पहुँचे। रीता को पहले से ही सूचना मिल गई थी। वह हमारी ही राह देख रही थी। जल्दी जल्दी तीनों मोटरकार को भगाते हुए लिबर्टी पहुँच गये। सब लोग हमारी ही राह देख रहे थे।

× × ×

हाल में अँधेरा घुप्प। पर्दे पर वही लौकेशन-शूटिंग के दृश्य चलते जा रहे थे। मैं अपने रूप को यों ही देखती जा रही थी और अपने आप में खोई जा रही थी। राधा के रूप में कितनी सुन्दर दिखाई दे रही थी मैं। कहाँ गोपियों की टोली और कहाँ मैं राधा बनी हुई। मुझे विश्वास ही नहीं हो रहा था कि मैं इतनी सुन्दर हो सकती हूँ। चित्रों में वीनस को देखा था, मोनालीसा को देखा था। बेजोड़ सौंदर्य–साकार सौंदर्य। लेकिन जैसे ही मेरा क्लोजअप पर्दे पर आया, मुझे महसूस हुआ कि मैं भी किसी सूरत में कम सौंदर्यवान नहीं हूँ। मन अनिर्वचनीय प्रसन्नता से नाचता जा रहा था। परदे पर के चित्र लगातार चलते जा रहे थे और मैं अपने आप में डूबी सोचती जा रही थी—"तो क्या मैं इतनी सुन्दर हूँ। मुझसे अपना सौंदर्य ही आज तक अज्ञात रहा। मैं अपने आपको जान ही नहीं पाई।" शायद मुझे अपने आप से ही प्यार होने लगा था।

न जाने कब पर्दे के चित्र समाप्त हो गये। हाल में बिजली की बत्तियाँ जल उठी। पास बैठी रीता ने मेरे एकान्त को भंग करते हुए मेरे कन्धे पर हाथ रख कर कहा—"वन्डरफुल, प्रतिमा वन्डरफुल ! राधा को सजीव कर दिया तुमने। और तुम में यह सब कुछ छिपा पड़ा था। समरेश ने सब खोज निकाला। और वह समरेश की ओर मुड़ कर बोलती गई—"समरेश अपनी नई खोज में तुम सफल हुए भैया। कहाँ वह मोटी नाक वाली लतिका और कहाँ यह इन्द्रपुरी की अप्सरा सी प्रतिभा बधाई है भैया बधाई !"

"बधाई की पात्र तो तुम हो दीदी ! और फिर पास खड़े अजय को देख कर समरेश को ऐसा लगा मानो अजय कोई गलत अर्थ न लगाये। उसने अजय की ओर इशारा करते कहा "और सबसे ज्यादा बधाई के पात्र है अजय बाबू और प्रतिभा देवी।"

समरेश के शब्दों को सुन कर अजय बड़े उत्साह से मुस्कराया और औपचारिकता का प्रदर्शन करते करते उसने समरेश को बधाई दी।

यूनिट के सारे सदस्यों की नजरें मेरी ओर थी। मैं ही उनके लिये केन्द्र बिन्दु बनी हुई थी। लेकिन मैं तो अपने आप में खोई हुई थी। मुझे तो अपनी सुन्दरता पर ही आश्चर्य हो रहा था। सचाई यह थी कि मैं अपनी सुन्दरता पर रीझ गई थी। मन के एक कोने में कोई पुकार पुकार कर कहता जा रहा था—"अपनी सुन्दरता को एक बार पूरी तौर से देख तो ले। तूने अपने आप को अभी तक देखा ही कहाँ है। नख से शिख तक अपनी सुन्दरता को देख और फिर तू जानेगी कि तेरी सुन्दरता में क्या है।" मन रह रह कर उतावला हो रहा था घर जाने के लिये। याद आया अपने पहिली मंजिल के ड्रेसिंग रूम का आदमकद शीशा। सदैव बालों में कंघी करते अपने लम्बे लम्बे केशों को देखती रही थी लेकिन कभी अपने रूप लावण्य

की ओर ख्याल ही नहीं गया। जाता भी कैसे। अजय ने कभी यह नहीं कहा —"प्रतिभा तुम सुन्दर हो। और मैं तुम्हें पाकर कितना भाग्यवान हूँ।" अजय मैं रूप को समझने का तब तक शायद ज्ञान ही नहीं आया हो। अपने आप को वह बालक सा ही समझता रहा हो लेकिन आज वह अवश्य मेरे रूप की प्रशंसा करेगा। मेरे रूप पर पागल होकर नाच उठेगा। मुझ पर रीझ जायेगा। मैं सोचती ही जा रही थी। मुझे महसूस हो रहा था कि ड्रेसिंग रूम का आदमकद शीशा मेरी राह देख रहा है। मैं कब घर पहूंचूँ। कब ड्रेसिंग रूम में जाऊँ और अपने साथी आदमकद शीशे में अपने सच्चे सौंदर्य को देखूँ। जी भर कर देखूँ और तब तक देखती रहूँ जब तक कि अजय आकर मुझे बाहों में न भर ले। मैं तब अजय की बाहों में अपने आपको खो दूँ। अजय और मैं एक दूसरे में समा जायें।

मैं न जाने कब तक अन्तर्मुखी बनी रहती, लेकिन समरेश ने मुझे सजग करते कहा—"चलिये प्रतिभा देवी! थियेटर के फोयर में टी पार्टी है।" मैं चल पड़ी।

अजय समरेश से बातचीत करने के लिये लिबर्टी में ही रुक गया था। मैं रीता को उसके घर छोड़ कर लौट आई। मोटर कार को गेरिज में छोड़ने का नौकर को आदेश देकर मैं तेजी से सीढ़ियाँ लांघती हुई ड्रेसिंग रूम में पहुंची दरवाजा खोलते ही सामने की दीवार पर टंगे हुए विशाल तैल चित्र पर नजर पड़ी। उपवन में खड़ी शकुन्तला और उसे पुष्प समझ रस लूटने के लिये लालायित पागल भौंरा। शकुन्तला मानों भौंरे के पागलपन से तंग है लेकिन भौंरा उसे उपवन का सर्वोत्तम पुष्प समझ कर उसका पीछा ही नहीं छोड़ रहा है। एक कोने में खड़ी आश्रम की ऋषि कन्यायें शकुन्तला को उलझनों में पड़ा देख कर मुस्करा रहीं हैं।

न जाने कब से यह तैल चित्र इसी स्थान पर लगा हुआ था

लेकिन मुझे इस चित्र ने इतना प्रभावित कभी नहीं किया। मैं लगातार चित्र की ओर देखती जा रही थी। धीरे-धीरे शकुन्तला की जगह मेरा चेहरा भी उभर आया और मुझे ऐसा महसूस होने लगा कि मेरी सुन्दरता से प्रभावित भौंरा मेरे चेहरे पर ही मंडरा रहा है। मैं इस ख्याल में इस प्रकार डूब गई कि एक हाथ से कल्पित भौंरे को भगाने के लिये मैंने जैसे ही प्रयास किया मेरा हाथ पास के पलंग की मच्छरदानी के डंडे से टकरा गया। मैं तत्काल होश में आ गई। मन लगातार भटक जाने का प्रयास कर रहा था। मैं ड्रेसिंग रूम में आई थी कपड़े बदलने के लिये, लेकिन कपड़े बदलने का विचार दिमाग से कहीं गायब हो गया था। मुझे अपने बचपन की याद आने लगी थी। वह भी भौंरे सा ही पागल था, रस का लोभी। मेरी अवस्था दस या ग्यारह साल की होगी। नागपुर के पास ही काटोल कस्बा है। मैं अपनी मौसी के वहाँ गई थी। काटोल संतरों के लिये प्रसिद्ध है। मौसी ने माँ से कहा–"अपने बगीचे में इस साल जोरदार फसल आई है। तुम प्रतिभा को कुछ दिन यहीं रहने दो।" और माँ मुझे मौसी के यहाँ छोड़ कर नागपुर लौट गई।

मौसी के पड़ोस के मकान में वह रहता था। डाक्टर पिता का इकलौता बेटा। नाम था मधुकर। न जाने कैसे गली में खेलते २ वह मेरी ओर आकृष्ट हो गया। मेरे पास आया और हाथ पकड़ कर बोला—"तेरा नाम प्रतिभा है न।"

"क्यों तुझे कैसे मालूम हुआ रे।" मैंने रूखा सा उत्तर दिया।

"कल चाची तुझे इसी नाम से बुला रही थी न, इससे ही मुझे पता लग गया।" उसने मुस्कराते हुए उत्तर दिया।

हाँ, मेरा नाम प्रतिभा ही है। पर तुझे क्या करना है मेरे नाम को लेकर।" मैंने पुनः तेज स्वर में पूछा।

"बड़ा प्यारा नाम है, प्रतिभा। मुझसे मित्रता कर ले न।" उसने अनुनय के स्वर में कहा।

"लेकिन तू लड़की थोड़ा ही है। मैं तो लड़कियों को ही सहेली बना सकती हूँ।" मैंने उसे चिढ़ाते हुए कहा।

"तो मान लो कि मैं लड़की ही हूँ। मुझे सहेली ही बना लो।" वह रुआंसा होकर कहता ही गया। मेरे साथ कोई लड़का नहीं खेलता। सब पिताजी से डरते हैं। तुम चाची के यहां आई हो न, तुम्हारे साथ खेलने में पिताजी नाराज नहीं होंगे।" वह न जाने और क्या कहता जाता। मुझे उसके अकेलेपन पर दया आ गई। मैंने उसका हाथ पकड़ लिया और उसके कथन पर जोर से हँस पड़ी। मेरी हँसी से मानो वह घबड़ा गया। रुकता रुकता बोला—"तुम हँस क्यों रही हो? मैं तुम्हें अच्छा नहीं लग रहा हूँ?" मैं हँसती हँसती रुक गई और बोली—"तुम लड़के से लड़की बन गई इसलिये मुझे हँसी आ गई। वसे तुम मुझे बहुत अच्छे लगते हो।" मेरी बात सुन कर वह भी मुस्करा उठा। उस दिन से हम दोनों मित्र हो गये।

मधुकर को उम्र लगभग १२ साल की होगी। हम दोनों सुबह शाम सन्तरों के बगीचे में, अमराई में, पास के जंगली पौधों के जङ्गल में तरह तरह के खेल खेलते रहते। कभी कभी तो खेलते खेलते इतनी देर हो जाती कि मौसी की नौकरानी और मधुकर का नौकर हमें अमराई के नाले के पास आकर पकड़ते और लौटा ले जाते। एक दिन मधुकर बोला—"प्रतिभा चलो आज तितलियाँ पकड़ने चलें।"

"कहाँ? दूर तो नहीं है जगह। मौसी चिल्लायेगी। मैंने डरने का अभिनय सा करते कहा।

"अरी चल तो सही। देखना कैसी कैसी रंग-बिरंगी तितलियाँ हैं। दौड़ते रहेंगे, पकड़ते रहेंगे। बड़ा मजा आयेगा।"

मैं उसके साथ चल दी। सन्तरे के बगीचे को पार करके अमराई में पहुँचे। वहाँ से आगे बढ़े। जङ्गली गेंदे की जबरदस्त झाड़ी। सारा प्रान्त ही मानो पीले मखमल के गलीचे से ढंक

गया हो। एक कोने में लाल कनेर के झुण्ड के झुण्ड तो दूसरी ओर जंगली गुलाबों की बड़ी सी जमात। तितलियों को इससे सुन्दर स्थान और कहाँ मिलता। हम तितलियाँ पकड़ने के लिये इधर से उधर दौड़ने लगे। एक सतरंगी तितली पर मधुकर पागल हो रहा था लेकिन वह हाथ नहीं आ रही थी। एक गेंदे पर बैठती और जैसे ही मधुकर धीरे-धीरे हाथ बढ़ाता वह झट से उड़ कर ऊँची डाली पर बैठ जाती। मधुकर तंग आ गया और निराश होकर तितली को गालियाँ देने लगा, साली इतरा रही है, नखरे कर रही है। मैं अभी ढेला मार कर साली की अकल ठिकाने ले आता हूँ। क्या समझ रही है अपने आप को। और उसने सचमुच ढेला उठा लिया। मैंने लपक कर उसका हाथ पकड़ लिया और उसे डाँटती हुई बोली, "धत् पागल कहीं का। इतनी सुन्दर चीज को ढेला मारा जाता है। ठहर मैं अभी लाती हूँ पकड़ कर उसे।" और मैं दबे पाँव गेंदे के पौधे के पास पहुँची। धीरे से हाथ बढ़ाया। तितली गेंदे के फूल पर बठी रही। मैंने उसके दोनों पंख पकड़ लिये और उसे हाथ में लिये मधुकर के पास आई। मधुकर उसे लेने के लिये मचल उठा। मैंने उसे समझाते हुए कहा—"बड़ी कोमल चीज है। प्यार से पकड़ में आती है, गुस्से से नहीं। समझे।" और मैंने तितली उसके हाथ में थमा दी। वह उसे गौर से देखता हुआ कहने लगा—"मैं भी तो ससुरी को प्यार करने के लिये ही तो ले रहा था लेकिन मेरी पकड़ में आने पर इसकी नानी मर रही थी। देखो न कैसी भोली बन कर बैठी है।"

मैं भी तितली की ओर देखती जा रही थी। घर लौटने को देर हो रही थी शायद नौकर नौकरानी ढूँढने नहीं निकल पड़े हों। हम दोनों तेज कदम उठाते हुए अमराई से सन्तरे के बगीचे की ओर चल पड़े। लेकिन नौकर नौकरानी को सन्तरों के पौधों के एक झुण्ड में विचित्र स्थिति में देख हम दोनों ठिठक

कर रुक गये। मधुकर का नौकर मौसी की नौकरानी को गोद में लिये उसे सहला रहा था। हम दोनों एक पेड़ की ओट में छिप कर उन दोनों को काफी देर तक मस्ती करते देख रहे। फिर दूर अमराई में लौट कर हमने जोर जोर से आवाजें लगानी शुरू की। नौकर और नौकरानी हाँफते-हाँफते हमारे पास आ पहुँचे। हमने ऐसी सूरतें बनाई कि मानो हमने कुछ देखा ही नहीं। दोनों हमको दूर भटक जाने के लिये डांटते डांटते घर ले गये।

दूसरे दिन हम नाश्ता करके पुनः जंगल में भाग निकले। नौकर नौकरानी का खेल दिमाग में चक्कर काट रहा था। मधुकर की भी मेरी जैसी ही स्थिति थी। हम दोनों भागते भागते दूर नाले के किनारे के एक बरगद की खोह में पहुँच गये। आज तितलियों का ख्याल दिमाग में फटक भी नहीं पाया। खोह में बैठते ही मधुकर ने मुझे खींच कर अपनी बाहों में ले लिया। मैं कहती रही—"क्या कर रहे हो मधुकर ? यह क्या पागलपन कर रहे हो।" लेकिन उस पर जैसे कोई भूत सवार हो रहा था। उसने मुझे अपनी बाहों में कस लिया था और लगातार मुझे जोरों से कसता ही रहा। हम दोनों न जाने कब तक उस खोह में बैठे ही रहे। जब दूर से नौकरों की आवाजें हमें सुनाई दीं, हमारी तन्द्रा टूटी। हम भाग कर घर पहुंच गये।

मुझे मधुकर के पागलपन से भय लगने लगा था। मैंने मन ही मन तय किया कि अब मधुकर के साथ खेलने नहीं जाऊँगी। लेकिन जब सुबह हुई। नाश्ता किया और अनमनी सी बरामदे में भटकने लगी तो मौसी ने पूछा—"क्यों री आज मधुकर नहीं आया। उसके साथ खेलने नहीं जायेगी ?" लेकिन मैंने कोई उत्तर नहीं दिया और अपनी पुस्तक लेकर कमरे में चली गई। पुस्तक लिये काफी देर तक बैठी रही पर पढ़ने में मन नहीं लग रहा था। पुस्तक को फेंक कर बिस्तर पर पड़ रही।

न जाने बिस्तर पर कब तक सोती रही। मौसी ने आकर झकझोरते हुए कहा–"प्रतिभा ? प्रतिभा बेटी ? चल तो डाक्टर साहब के यहाँ। मधुकर को सांप ने काट खाया है।"

मैं बिस्तर से उछल पड़ी और चिल्लाई "सांप, सांप कहाँ था ?"

"मधुकर नाले के पास के बरगद की खोह में बैठा खेल रहा था और वहीं सांप ने उसे काट लिया उसका नौकर ढौंढीबा उसे उठा लाया है।" मौसी ने मेरा हाथ पकड़ा और हम दोनों मधुकर के घर पहुँचे। मुझे न जाने क्या हो गया था कि मैं मधुकर को देख कर जोर से चीखी "मधुकर " और मैं मधुकर से लिपट गई। मधुकर में हाथ हिलाने की भी शक्ति नहीं थी। न जाने कितने लोग इकट्ठे हो गये थे। मुझे मौसी ने खींच कर दूर हटाया। मधुकर की माँ जोर से चीख पड़ी। मधुकर के होठ हिले लेकिन स्पष्ट शब्द बाहर नहीं निकल पाये। मुझे ऐसा लगा कि वह मुझसे ही कह रहा था, "प्रतिभा मैं तुम्हारी राह देखता रहा लेकिन तुम वहाँ नहीं आई, नहीं आई।' मुझे रुलाई आ गई। मैंने मौसी के आँचल में अपना मुँह छिपा लिया। हम घर लौट आये। दूसरे दिन मधुकर की मृत्यु होगई। मैं रोते रोते बेहाल हो रही थी। मौसी मेरी बैठी हालत देख कर घबड़ाई। माँ को तार दिया। माँ आई और मुझे नागपुर ले गई। मैं कई दिन बुखार में पड़ी रही। मधुकर का चेहरा मेरी आँखों से दूर ही नहीं हो रहा था। तितली के पीछे भागता मधुकर और मृत्यु के पंजों में कसा हुआ मधुकर। मेरा पहला प्यार। जीवन में पहली बार किया गया प्यार। अपनी स्मृति में आज भी संजोये हुए हूँ उस प्यार को। मानो किसी भिखारी के जीवन की बड़ी मेहनत से इकट्ठी की गई पूंजी हो। चित्र के भौरे में मानो मधुकर का रूप निखर आया और धीरे-धीरे लुप्त हो गया। चित्र अपनी प्रकृत अवस्था में सामने दिखाई दे

रहा था। मेरे रोयें खड़े हो गये थे। मैंने सजग हो कपड़े बदल शुरू किये।

मन शरीर का ऐसा अंग है जिसे काबू में रखना सम्भव हो ही नहीं सकता है। बुद्धि की लगाम से मन के घोड़े को अनुशासन में लाने का चाहे जितना ही प्रयत्न किया जाये आखिरकार बुद्धि की लगाम को ही ढीला पड़ना पड़ता है। मन का घोड़ा तो वायुवेग से भागता ही रहता है। मधुकर की स्मृति के साथ ही वीरेन की स्मृति ताजा हो गई। वीरेन मेरा कालेज का साथी। न जाने किन विचित्र परिस्थितियों में वीरेन से परिचय हो गया। बरसात के दिन थे, मैं छाता लाना भूल गई थी। कालेज की छुट्टी हुई। बादल उमड़ आये और धीमी-धीमी बूंदाबांदी शुरू हो गई। मैं इस बूंदाबांदी की परवाह न करके चल पड़ी। काफी लड़के लड़कियाँ यूँ ही आगे जा रहे थे। थोड़ी सी दूर गई थी कि जोरों की वर्षा शुरू हो गई। शाम हो रही थी। घर जल्दी पहुँचना था। कोई रिक्शा भी दिखाई नहीं दे रहा था। छाते थामे पास से गुजरते विद्यार्थी मुझे भीगती देख फब्तियाँ कसते चले जाते—"गोरी भीगने का आनन्द ले रही है। ओह वर्षा से भीगी सिकुड़ी देह कितनी सुन्दर दीख रही है।' मैं मन ही मन कुढ़ती तेज कदम बढ़ाती चलती ही जारही थी। तिलक पुतले तक पहुँची लेकिन एक भी रिक्शा नहीं दीखा। गुस्सा आ रहा था—क्या इन सब रिक्शा वालों को आज सांप सूँघ गया है। उसी समय पीछे से एक रिक्शा आया और मेरे पास ही रुक गया। मैंने मुड़ कर रिक्शा वाले से बात करने को मुँह खोला लेकिन रिक्शे में से उतरते हुए वीरेन ने कहा—"आप यूं भीगती कब तक पहुँचोगी घर। इस रिक्शे में चली जाइये।"

"लेकिन आप कैसे जायेंगे। वर्षा तो मूसलाधार है।" मैंने वीरेन की ओर देख कर कहा।

"मेरी फिकर छोड़िये। मैं और रिक्शा देख लूँगा। जल्दी करिये, रिक्शे में बैठ जाइये। मैं उस दूकान की छत के नीचे खड़ा रिक्शे की राह देख लूँगा।" इतना कह कर वीरेन सामने की दूकान की ओर भागा। मुझे वीरेन को इस प्रकार छोड़ स्वयं उसके रिक्शे में बैठ कर जाना उचित नहीं लगा। फिर कक्षा के सर्वश्रेष्ठ विद्यार्थी होने के नाते वीरेन से साधारण सा परिचय था। इस बूते पर इतनी गुस्ताखी कैसे करूँ। यही सोच रिक्शा-वाले को दूकान की ओर जाने का इशारा कर स्वयं वीरेन के पास पहुँची और बोली—"देखिये मैं तो ऐसे ही भीग चुकी हूँ। अब आप व्यर्थ में क्यों भीगना चाहते हैं। मुझे यूँ ही जाने दीजिये।"

"नहीं, नहीं। ऐसा क्योंकर हो सकता है। आप ऐसी घनघोर वर्षा में अकेली कैसे जायेंगी। मेरी चिन्ता छोड़िये।" वीरेन ने दृढ़ता से कहा। मैं कुछ देर खड़ी रही। मुझे मौन देख वीरेन ने कुछ कहना चाहा लेकिन मैंने उसे रुकने का इशारा करते हुए कहा—"तो मेरा एक सुझाव है। आप मुझे घर पर छोड़ दीजिये और फिर रिक्शा लेकर वहाँ से घर चले जाइये।" वीरेन पहले तो कुछ हिचकिचाया लेकिन मेरे बार बार दबाव डालने पर वह राजी हो गया। दोनों रिक्शे में बैठ गये। वीरेन दब कर एक कोने में बैठने का प्रयास करता लेकिन कहीं ऊबड़ खाबड़ सड़क आ जाने पर रिक्शा कूदता और हम दोनों एक दूसरे से टकरा जाते। मेरी बारिश से भीगी देह और वीरेन का सूखा शरीर मुझे उसके शरीर की गर्मी से विचित्र सा अनुभव होता। ऐसा लगता मानो क्षण भर के लिए किसी ने मेरे रग-रग में गर्मी प्रवाहित करने के यन्त्र को छू भर दिया। घनघोर वर्षा, अन्धकार, – टिमटिमाते बिजली के बल्ब और ऊपर से ढंका हुआ रिक्शे का छत। शांत और नीरव बैठा वीरेन। मैं वीरेन से सटी हुई। मुझे न जाने कैसा महसूस हो रहा था। राह भर

में हम दोनों में से किसी ने एक शब्द भी नहीं कहा, मेरा घर आ गया था। मैं नीचे उतरी और प्रणाम कर घर में घुस गई। वीरेन रिक्शा में बैठा बैठा एकटक मेरी ओर देख रहा था।

इस प्रथम परिचय के बाद परिचय इतना घना हो गया कि हम दोनों ने एक सूत्र में बंध जाने का लगभग निश्चय ही कर लिया। हाँ स्पष्ट शब्दों में न वीरेनने कभी प्रस्ताव रखने का साहस किया और न मैंने ही। कालेज के सालाना जल्से में अभिज्ञान शाकुन्तल नाटक समाप्त हुआ। दुष्यन्त के रूप में वीरेन और मैं शकुन्तला के रूप में। सारे लोगों ने दोनों के अभिनय की मुक्त कंठ से प्रशंसा की। जल्से के समारोह के पश्चात् वीरेन बोला—"प्रतिभा कहीं घूमने चलें।"

"कहाँ चलेंगे ?" मैंने वीरेन की आँखों में देख कर पूछा।

"आज कहीं एकान्त में भटक जाने का मन हो रहा है। दुष्यन्त के अभिनय ने मेरे मन में तूफान खड़ा कर दिया है। इस तूफान में कहीं भटक जाऊँ-बस भटक ही जाऊँ।" वीरेन बोलता-बोलता रुक गया।

मैं वीरेन की ओर एकाग्र हो देखती जा रही थी। वह कुछ देर तक खोया-खोया सा न जाने किस ओर देखता रहा और फिर बोला—"मैं कई दिनों से तुम्हें कुछ कहना चाहता हूँ लेकिन बात जवान पर आकर रुक जाती है। कैसे कहूँ, कुछ समझ में नहीं आता।" वह पुन: रुक गया। मैंने उसे झंझोरते हुए कहा—"कहो न, रुक क्यों गये।" मैं सोच रही थी कि वीरेन हमारी शादी के बारे में ही कुछ कहेगा और मैं उसके मुँह से शादी का प्रस्ताव ही सुनना चाहती थी। उसने रुकते कहा–"तो चलो कहीं एकान्त में चले चलें।"

हम रामदासपेठ की ओर साइकिलों पर टहलने निकल पड़े। काफी देर तक चलते रहने के बाद वीरेन ने साइकिल रोक दी। वह सायकल से नीचे उतर पड़ा। मैं भी सायकल से

नीचे उतरी। साइकिलें खड़ी करके दोनों एक पेड़ की ओर बढ़े।

इमली का विशाल पेड़। मोटा सा तना, वीरेन तने का सहारा लेकर खड़ा हो गया। सड़क के लेम्पपोस्ट की रोशनी से वीरेन के चेहरे का आधा भाग प्रकाशित था और आधा अन्धकार ग्रस्त। मुझे वीरेन का चेहरा चिन्ताग्रस्त दीख पड़ा। मैं घबड़ा गई। ऐसी क्या बात है जिसे कहने में वीरेन घबड़ा रहा है। मैंने उसका हाथ पकड़ कर उसे झिझोड़ा और पूछा—"क्या कहने को लाये हो मुझे यहाँ। मौन क्यों हो गये। कुछ कहोगे भी या यूँ ही मूर्ति बने रहोगे।" अब वीरेन के होंठ हिले "प्रतिभा, चाचाजी मुझे इंग्लैण्ड भेज रहे हैं बैरिस्टर बनने के लिये। दो साल रहना पड़ेगा। तुम मेरे लिये इस अर्से तक रुकोगी? किसी दूसरे की तो नहीं बन जाओगी। मैं तुम्हारे बिना जी नहीं सकूँगा।" कहता कहता वीरेन रुक गया। मैं उसके आगे बोलने की राह देखने लगी पर वह मौन हो बना रहा। अब मुझसे रहा नहीं गया। मैं भावावेश में बोल उठी "वीरेन तुम्हें मुझ पर विश्वास नहीं है? मैं दो तो क्या दो सौ साल तक भी तुम्हारी राह देखती रहूँगी। मैं तुम्हारी हूँ और तुम्हारी ही रहूँगी।" वीरेन ने मुझे आगे बोलने नहीं दिया। बाहों में बांध कर मेरे चेहरे पर चुम्बनों की बौछार कर दी। मैं अपने आप को भूली, वीरेन की बांहों में बधी न जाने कितनी देर तक खड़ी रही।

वीरेन इंग्लेण्ड चला गया लेकिन मैं उसको दी गई प्रतिज्ञा पर अटल नहीं रह सकी। अजय की तड़क भड़क से आकर्षित होकर सदैव के लिये अजय से बंध गई। वीरेन की स्मृति मेरे मन को सदैव कुरेदती रही है और निरन्तर कुरेदती रहेगी। यह ग्लानि मेरी आत्मा को सदैव खाती रहेगी।

मैं सोचती जा रही थी कि मेरी नजर सामने के आदमकद शीशे पर गिरी। भूतकाल की स्मृति में मन तो खोया खोया भटक गया था पर हाथ न जाने कैसे परिचालित होते रहे।

शरीर पर केवल बाडिस और पेटीकोट ही शेष रहे थे। न जाने कितनी देर से मैं इस अवस्था में ड्रेसिंग रूम में खड़ी खड़ी सोचती रही। शीशे में मेरे प्रतिरूप ने मुझे चौंका दिया। मेरी प्रतिच्छाया मानो कहना चाहती थी—"क्यों भूतकाल के भंवर जाल में भटकी जा रही है। अपने वर्तमान को देख। कितना सुखमय वर्तमान है कल रूपहरी पर्दे की रानी बन जायेगी और सारी दुनियाँ तेरी ओर देखेगी। अपने रूप को तो देख। कितनी सुन्दर है तू। कोई है भी तेरी सुन्दरता का मुकाबिला करने वाली!" मैं शीशे में खड़ी अपनी प्रतिच्छाया को पुनः गौर से देख कर मन ही मन मुस्करा उठी। मुझे महसूस हुआ। "मैं निश्चय ही बहुत सुन्दर हूँ। लेकिन अजय……उसे यह सुन्दरता दिखाई दे रही है। अगर अभी वह आकर मुझे बाहों में भर ले। मैं उसमें खो जाऊँ और वह मुझ में। मैं उसमें डूब जाऊँ और वह मुझ में डूब जाये। वह मेरे सौन्दर्य की वास्तविकता को समझ तो ले।"

बाहर से किसी ने दरवाजा खटखटाया। में उसी अवस्था में भागी। दरवाजा खोला तो सामने अजय। मेरे ऐसे रूप को देख कर चौंक पड़ा। ठिठक कर वह वहीं खड़ा रह गया। मैंने सोचा था, अजय कमरे में प्रवेश करके मुझसे आलिंगन करने को उतावला सा हो आगे बढ़ेगा। लेकिन मेरी भावनाओं को वहीं लकवा मार गया। मैं भागी भागी पलंग पर जाकर चादर में छिप कर पड़ी रही। अजय ने धीरे धीरे कमरे में प्रवेश किया। कपड़े फर्श पर बिखरे पड़े थे। वह पलंग के पास आकर खड़ा हो गया और बोला "प्रतिभा? क्या बात है? आज अनमनी क्यों हो? पार्टी से भी जल्दी भाग आई। क्या तबियत खराब है?" मुझे अपने आप पर, अजय पर, सारे वातावरण पर, गुस्सा आ रहा था। मेरी भावनाओं को कोई समझ नहीं पा रहा था। मैं सब लोगों के बीच रह कर भी एकांकी हूँ। किससे अपने

मन की व्यथा कहूँ ?" मैं मन को मसोसे चादर में दुबकी यूं ही पड़ी रही। अजय कहता गया, "बड़ी खुश खबर लाया हूँ। सुनोगी तो नाच उठोगी। समरेश से सारी बातें तय कर ली है। इस चित्र की तुम ही नायिका रहोगी। और कांट्रेक्ट की रकम भी तय कर ली है। बीस हजार रुपये।" अजय मेरी प्रतिक्रिया देखने के लिये रुक गया। मैंने धीरे धीरे चादर से मुँह बाहर निकाला। मुझे अजय की उपस्थिति अखर रही थी मैंने अपने आप को संयत रखते हुए धीरे से कहा, "तुम जरा बाहर जाओ न। मैं अपने कपड़े बदल लूं।" अजय कुछ कहना चाहता था लेकिन मेरी मुद्रा देख कर कमरे के बाहर चला गया। मैं झटपट पलंग पर से उठी। बिखरे कपड़ों को समेट कर अलमारी में रखा और अपने दूसरे कपड़े निकाल कर पहनने लगी।

अजय बाहर छत पर ही टहलता जा रहा था। मैं जान-बूझ कर धीरे-धीरे कपड़े बदल रही थी। मुझे अजय से बात करने की इच्छा नहीं हो रही थी। मैं चाहती थी कि वह मुझे अकेला ही छोड़ कर थोड़ी देर के लिये कहीं चला जाये लेकिन अजय में मानव मन के उतार चढ़ाव समझने का ज्ञान कहाँ था। वह तो छत पर घूमता ही जा रहा था।

× × ×

फरवरी का महीना था नागपुर से हम बम्बई आ गये। जुहू समुद्र तट के पास ही एक बंगला तय कर लिया गया था। हम वहीं रहने लगे। समरेश के साथ अजय ने सारी बातें तय कर ली थी। कांट्रेक्ट पर मैंने हस्ताक्षर कर दिये। वर्तमान चित्र के साथ ही समरेश के अन्य दो चित्र में नायिका का काम करने का अनुबन्ध भी किया गया।

समरेश ने चित्र की लगभग तीन रीलें तो तैयार कर ही ली थीं। बम्बई आने पर उसने कुछ नया निश्चय ही किया। हमें बम्बई आये एक सप्ताह ही हुआ। अभी तक तो मैंने स्टूडियो

का कोना तक भी नहीं देखा था। दिन भर बंगले को सजाने संवारने में लगी रहती। अजय लगातार समरेश के साथ ही रहता। शाम को हमेशा समरेश भी आ जाता। इधर उधर की बातें होती। घन्टा-आधा घन्टा बैठ कर वह चला जाता। शायद चित्र में रद्दोबदल करने का उसका इरादा था। वह लतिका के काम को इस प्रकार काट कर फैंकना चाहता था जिससे चित्र में किसी प्रकार की खराबी भी न आती और आसानी से मेरा काम भी शृंखलाबद्ध नजर आता।

रविवार की शाम थी। अजय और मैं जुहू के समुद्र तट पर घूम रहे थे। रविवार के दिन जुहू पर जोरदार भीड़ रहती है। बम्बई के कर्मसंकुल जीवन से राहत पाने के लिये असंख्य नरनारी जुहू के समुद्र तट पर मुक्त जीवन का आनन्द लेने के लिये निकल पड़ते हैं। हम दोनों भी निरुद्देश्य कदम उठाते चले जा रहे थे कि पीछे से समरेश की आवाज सुनाई दी – "अजय-बाबू ? अजय बाबू ? हम दोनों रुके और मुड़ कर देखा तो समरेश हाँफता हाँफता चला आ रहा था। हमारे नजदीक आकर वह रुका। हाँफता हाँफता ही बोला –"आप लोगों को बंगले में न पाकर इस ओर भागा भागा आ रहा हूँ। तेज चलने में सांस फूल गई। खैर, आप लोग मिल तो गये। इस भीड़भाड़ में तो किसी को ढूँढ निकलना बड़ा मुश्किल है।" समरेश रुक गया। मैंने समरेश को ओर देखा उसकी आँखें सूजी हुई थीं। ऐसा लग रहा था कि रात भर जागरण करता रहा है और दिन में भी सो नहीं पाया है। मैंने पूछ ही लिया—"समरेश बाबू यह कैसा हुलिया बना लिया है आज। ऐसा लगता है कि आप रात भर सोये नहीं।" मैं आगे क्या कहूँ यह सोच ही रही थी कि समरेश बोल उठा--"प्रतिभा, रात भर के जागरण के बाद ही अकल आई है। गत पांच दिनों से उलझा हुआ था और कुछ भी फैसला नहीं कर पा रहा था। कल रात भर जागता रहा।

मूवीओला और एडिटिंग टेबिल पर भिड़ा रहा। बेचारा एडीटर कुछ समझ नहीं पा रहा था कि मैं क्या करना चाहता हूँ। किसी प्रकार काट छांट करने के बाद पुरानी रीलें देखी तो ऐसा महसूस हुआ कि सब बकवास है। एकदम बकवास। पुराना शूटिंग बेकार था।" हम लोग समरेश के कथन को स्पष्ट समझ नहीं पा रहे थे। बस यह समझ में आ रहा था कि समरेश ने लतिका के काम को काट के फेंकने के लिए कुछ काटछांट की है। मैं समरेश के चेहरे की ओर देखती जा रही थी और अजय भी उसी की ओर देखता जा रहा था। समरेश कुछ क्षण ठहर गया था। समुद्र की लहरों की जवानी पूरे जोर पर थी। फेनिल लहरें बड़े वेग से उठ कर आगे बढ़ती और तटीय मैदान में आकर दूर दूर तक अपने हाथों को पसार देती। पुनः एक क्षण में ही अपनी सारी माया बटोर कर समुद्र में अपने आपको लुप्त कर देने के लिये तेजी से उलटे पांव लौट पड़ती। समरेश लहरों की इस दौड़ धूप को देखने लगा था। उसने अपनी नजर उठाई और क्षितिज के पार न जाने क्या खोजने का प्रयास करने लगा। मैं उसकी मुख मुद्रा को देख कर मौन खड़ी रही। अजय का ध्यान पास से गुजरते एक नारियल बेचने वाले की ओर गया। उसने आवाज दी। „ओ नारियल वाले। तीन नारियल देना।" नारियल वाला रुक गया। सिर पर की टोकरी गीली रेत पर रखते बोला, "कौन से वाले दूँ बाबू ? बड़े वाले या छोटे वाले।" और वह टोकरी में से नारियल निकालने लगा।

"जो भी अच्छे हों वही दे दो भैया।" और अजय इतना कह कर नारियल की ओर देखने लगा। क्षितिज के रहस्य में उलझे समरेश की तन्द्रा तब टूटी जब नारियल वाले ने नारियल फोड़कर उसके सामने लाते हुए कहा, "लेना बाबू साहब। फर्स्ट क्लास है।" उसने फर्स्ट क्लास कुछ इस लहजे में कहा कि समरेश हँस पड़ा। मुझे भी हंसी आ गई। समरेश के चेहरे पर

की गम्भीरता कुछ कम हुई। नारियल के पानी का पहला घूँट लेकर उसने मेरी ओर देखा और बोला, "प्रतिभा देवी। आज बहुत महत्व पूर्ण फैसला करके आया हूँ।" नारियल के ढेर से बड़ा सा नारियल हाथ में लेते अजय ने समरेश के शब्द सुने तो नारियल को टोकरी में डाल कर उठ खड़ा हुआ और समरेश से पूछा बैठा, "कैसा फैसला किया है समरेश बाबू ?"

"रात भर एडिटिंग करने के बाद ऐसा महसूस हुआ कि पुरानी रीलों में कुछ भी नहीं है। सारा का सारा शूटिंग बेकार ही किया। बस उन तीनों रीलों को रद्दी के टोकरे में डालने का तय किया। चित्र को-क-ख-ग से ही शुरू करना ठीक रहेगा।" समरेश नारियल का पानी पीने लगा। अजय ने समरेश से कुछ पूछना चाहा लेकिन न जाने क्यों उसके होठों पर शब्द आते जाते रुक गए। शायद उसके विचार स्पष्ट नहीं हो पाये थे। लेकिन मैंने अपने नारियल के पानी को समाप्त कर, नारियल को दूर फेंकते हुए पूछा, "पर समरेश बाबू इस प्रकार आपको कुछ कष्ट नहीं होगा ? इन तीन रीलों को तैयार करने में भी तो काफी समय और रुपये खर्च हुए होंगे ?"

"प्रतिभा देवी रुपये और समय का सवाल नहींहै। प्रश्न है चित्र की श्रेष्ठता का। पुरानी रीलों को देखने से ऐसा लगता है मानो काम करने वालों में जान ही नहीं है। मानो केवल कठपुतलियाँ इधर से उधर नाचती जा रही है। ऐसे कचरे को रखकर चित्र का सत्यानाश थोड़ा ही करना है। और अब तो आप नई तारिका के रूप में आ रही है। फिर सारा गुड़ गोबर क्यों बनाऊं।" समरेश बोलता रुक गया।

हमारे कदम बंगले की ओर ही बढ़ रहे थे। मुझे अब महसूस हुआ कि चित्र की नये ढंग से शुरूआत ही मेरे लिये लाभदायक है। फिर भी समरेश के बिचारों को स्पष्ट तौर पर सुनने पर ही सब कुछ मालूम हो सकता था। हम बंगले के लान

में आ गये। दूब पर कुर्सियाँ लगी थी। हम कुर्सियों पर बैठ गये। मैंने नौकर को चाय लाने का आदेश दिया। समरेश कुर्सी पर से उठ खड़ा हुआ और इधर उधर चहल कदमी करता हुआ बोला, "काफी सोच विचार के बाद ही निर्णय लिया है मैंने। आप लोगों से बातचीत करने के बाद अपने फायनेन्सीयर से मिलूंगा, यही सोच कर यहाँ आ गया।" अजय ने समरेश की ओर देखते हुए पूछा, "तो इस रद्दोबदल से कोई कष्ट तो नहीं होगा आपको? समरेश मुस्कराया और कुछ देर रुक कर जोर से हँसा और फिर बोला, "कष्ट! कैसा कष्ट? नये सिरे से काम करने में तो विशेष आनन्द आयेगा अजय बाबू! और मैं अपने इस चित्र को वर्ष का सर्व-श्रेष्ठ चित्र बना कर रख दूँगा। सारा फिल्म संसार दांतों तले अँगुली दबायेगा। अजय ने पुनः कुछ प्रश्न करने के लिए आँखें ऊँची उठाई और समरेश की ओर देखा। लेकिन समरेश बोलता ही गया। पट-कथा को ठीक करना है। कुछ परिवर्तन आवश्यक है। बस इतना ही।"

नौकर चाय ले आया था। मैं चाय तैयार करने लगी। समरेश टहलता टहलता मेरी कुर्सी के पास रुक गया और बोलने लगा, "सुनिये, अब लतिका से तो माथा पच्ची करनी है नहीं। फिर कष्ट किस बात का रहेगा। लगातार तीस दिन की शूटिंग का कार्यक्रम बना डालूंगा। तीस दिन का शूटिंग और चित्र तैयार।" मैं प्यालों में चाय उड़ेल चुकी थी। कुर्सी पर झुके समरेश की ओर मुड़कर देखा और पूछा शक्कर कितने चम्मच "एक या दो?" पूछते पूछते समरेश की आँखों में देख लिया। तभी मुझे ऐसा महसूस हुआ–समरेश की आँखें किसी कल्पनातीत आनन्द के नशे में मस्त हो रही है। शायद ऐसी स्थिति काफी चिन्तन करने के बाद महत्वपूर्ण निर्णय लेने पर ही हो सकती है। समरेश सामने की कुर्सी पर बैठकर बोला, "दो सप्ताह में ही पटकथा को तैयार कर लूँगा। और फिर लगातार शूटिंग

का कार्यक्रम। बिना किसी रुकावट के।" उसने चाय के प्याले में दूध मिलाया और चम्मच को प्याले में घुमाने लगा। अजय और मैं समरेश की ओर देखे जा रहे थे। समरेश ने प्याले को उठाया और चाय का पहला घूट गले के नीचे उतार कर कहा, "पंचांग देखा तो मालूम पड़ा पहली मार्च बड़ा शुभ दिन है। गुरुवार है। मुहूर्त के लिए इससे उत्तम दिन और दूसरा तो सामने नहीं है। चित्र का मुहूर्त प्रथम मार्च-गुरवार को ही करेंगे।" समरेश ने अजय की ओर देख कर पूछा, "क्यों अजय-बाबू आपका क्या ख्याल है?" फिर उसने मेरी ओर नजर उठाकर देखा और मौन रहते हुए भी इस प्रकार देखा कि मुझसे कुछ कहते न बना। अजय ने सड़प् से चाय का घूंट लिया और कुछ विचारपूर्ण मुद्रा में बोला, "आपने काफी सोच-विचार के बाद ही निर्णय लिया है समरेश बाबू, फिर हमारी राय भिन्न कैसे रह सकती है। रहा सवाल मुहूर्त का–सो मैंतो पंचांग और ज्योतिष से अनभिज्ञ ठहरा। इतना जानता हूँ कि गुरुवार का दिन शुभ होता है। आपने पंचांग देखा है, तो पहला मार्च उत्तम दिन ही है।" अजय को औपचारिकता का दिखावा करने के लिये इतना कहना पड़ा था अन्यथा उसके कहने में मुझे अर्थ-हीनता ही महसूस हुई। लेकिन अजय को कौन कहे कि तुम्हारे कथन में कहीं गम्भीरता का लवलेश नहीं है। अजय जब भी समझदार बनने का प्रयत्न करता मुझे वह व्यंगचित्र सा मालूम होने लगता। समरेश ने पुनः मेरी ओर मुखातिब होकर कहा, "प्रतिभा देवी, आपने तो कोई राय ही नहीं दी। तो कहिये आप भी।"

"ठीक है। आपने सोचकर फैसला लिया है। मेरी भी इसमें सहमति ही है। और क्या कहूँ।" मैंने पुनः चाय का घूंट लिया।

समरेश ने चाय की प्याली को टेबल पर रख दिया और

कुर्सी पर से उठ खड़ा हुआ और बोला, कल सुबह फिर आऊँगा ।······फायसेन्सीयर सेठ कचरालाल को समय दे दिया है। अब उससे मिलने चलूँ ।

हम दोनों भी उठ खड़े हुए। समरेश फाटक की ओर बढ़ गया। अजय पीछे पीछे मोटर तक उसे छोड़ने के लिये गया ।

तीन चार दिन बीते। मैं अभी अभी बिस्तर से उठी ही थी । नौकर ने ढेर सारे अखबार टेबल पर लाकर रख दिये और रसोईघर की ओर चल पड़ा। अजय बड़े सबेरे उठ कर समुद्र तट पर घूमने चला गया था और अभी तक लौटा नहीं था। मैंने उबासी ली, आलस्य भगाने के लिये आँखों को मल दिया और नौकर को पानी का ग्लास लाने का आदेश देकर सामने पड़े चित्र लोक को उठाया । प्रथम पृष्ठ पर ही संवाद था, प्रसिद्ध समरेश बसु की नई खोज ।

समरेश बसु अपने नये चित्र "स्वर संगम" में नई खोज प्रतिभा देवी को प्रमुख नायिका के रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं। लतिका से मन मुटाव हो जाने के बाद समरेश ने नागपुर के प्रतिष्ठित भादूड़ी परिवार की प्रतिभा देवी को अपनी नायिका के कार्य के लिये खोज निकाला है। "स्वर संगम" की पटकथा को पूर्ण करने में श्री बसु संलग्न है। शीघ्र ही नये चित्र का मुहूर्त किया जायेगा।

मैंने संवाद एक बार, दो बार, तीन बार और फिर न जाने कितनी बार पढ़ा। संवाद के छपे अक्षरों के बीच मुझे अपना चेहरा उभरता हुआ दिखाई देता। थोड़ी देर में वही चेहरा धुंधला होकर लुप्त हो जाता और उसकी जगह लतिका का चेहरा उभर आता। पुनः लतिका लुप्त हो जाती और मुस्कराता हुआ मेरा चेहरा उभर आता। मेरे मन में अद्भुत सी गुदगुदी चलती जा रही थी। सोच रही थी-अब समाचार पत्रों की दुनियाँ में छा जाऊँगी मैं। और मैंने एक के बाद एक

करके चित्रपट के पृष्ठों को पलटा। बीच के बिशाल पृष्ठ पर मेरा चित्र-वीणा के तारों पर अंगुलियों को संचारित करता मेरा सुन्दरतम चित्र। मैं चित्र को देखती ही रह गयी। ऐसा महसूस हो रहा था-चारों ओर विभिन्न वाद्य यन्त्रों के तार संचारित हो गये हैं और वायु मंडल स्वरों की मधुरता से परि-पूर्ण हो गया है। मैं धीरे-धीरे आलाप छेड़ती जा रही हूँ। और मैं अपनी कल्पना की दुनियां में उड़ान भरती ही जा रही थी कि अजय ने कमरे में प्रवेश कर मेरे एकान्त को भंग कर दिया। चित्रपट के खुले पृष्ठ की ओर इंगित करता हुआ बोला समरेश ने चित्र का प्रचार कार्य प्रारंभ कर दिया है। चित्रपट ही क्या सारे पत्रों में इस विज्ञापन को दोहराया गया है। और अजय ने सारे पत्रो के बिचले पृष्ठों को खोलकर सामने बिछा दिया। चित्रकार ने कितनी खूबसूरती से मेरा चित्र अंकित किया था। विभिन्न वाद्ययंत्रों को पास-पास रख कर शीर्षक दिया था-समरेश चित्र मंदिर पेश करते हैं।

स्वर संगम में, नव-तालिका प्रतिभादेवी

मेरी नजरों के सामने विभिन्न वाद्य यंत्र घूमते जाते थे वायुमंडल वाद्ययंत्रों के तन्तुओं से मानो झंकृत हो गया था और नाचते हुए अक्षर दिखाई देते थे।

स्वर संगम में नव,-तालिका प्रतिभा देवी

अजय और न जाने क्या कहता जा रहा था पर मै कुछ भी सुन नहीं पा रही थी। में तो किसी आलोकिक दुनियाँ में भटकती जा रही थी। भटकती ही जा रही थी। अजय ने जैसे ही पत्रों को समेट कर फर्श पर रखा कि मैं होश में आई। ऐसा मालूम हुआ मानो किसी ने मेरे शरीर को झकझोर कर फर्श पर फेंक दिया हो। मुझे अजय पर गुस्सा आ गया-"क्या जरू-

रत थी अजय को इस प्रकार मेरे समाचार पत्रों को फेंकने की"
लेकिन दूसरे ही क्षण मुझे अपनी बेवकूफी पर हँसी आ गई।
अजय ने मेरी हँसी को देख कर पूछा- "क्यों, हँसी क्यों आ
रही है। कोई विशेष बात है क्या ?"

"नहीं-नहीं ? कोई खास बात नहीं है। यूं ही ...।"
और मैं आगे बोल नहीं पाई। क्या बोलूँ कुछ समय भी तो नहीं
पा रही थी। अजय ने पुनः अखबारों को उठाया और यूँ
ही पृष्ठों को खोलकर बोला–"आज फाइनेन्सियर सेठ कचरा-
मल गोदी वाला के यहाँ पार्टी है। नये चित्र की घोषणा की
खुशी में। हमें शाम को पार्टी में शामिल होना है।"

"तुमने मुझे कल तो पार्टी के बारे में कुछ बतलाया ही
नहीं और अब कह रहे हो।" मैंने पूछा।

"मैं तुम्हें अचम्भे में डालना चाहता था। आज के पत्रों
में यह विज्ञापन आने वाला था अतः इसे देखने के पहले पार्टी
की सूचना दे देता तो सारा मजा किरकिरा हो जाता ?" अजय
ने अपनी बात को इस लहजे में कहा मानो उसने किसी बहुत
बड़े रहस्य का उद्घाटन किया हो। मुझे उसका कहने का ढंग
रुचिकर नहीं लगा। मैंने कुछ बेरुखी बतलाते हुए कहा–"मैं
बच्ची थोड़ी ही हूँ जो अचम्भे में पड़ जाऊँगी। कल ही कह देते
तो पार्टी में सम्मिलित होने के लिये विशेष तैयारी नहीं
करती।"

"तो अब कौन सा युग बीत गया है। अब भी तैयारी
कर लो न। नई साड़ियाँ चाहिये तो चलो दादर। बालिया
स्टोर में रेशम की सुन्दरतम साड़ियाँ मिल जायेंगी। तुम अभी
तक बिस्तर से भी तो नहीं उठी हो।" अजय और भी कुछ
बोलता लेकिन मैं झट से पलंग पर से नीचे उतरी और बाथ-

रूम की ओर चल पड़ी। अजय पीछे कुछ कहता जा रहा था लेकिन में कुछ समझ नहीं पाई।

× × ×

नरीमान कोर्नर, चर्चगेट के पास, सेठ कचरामल गोदीवाला का गगनचुम्बी भवन। हमारी कार भवन के सामने ठहरी। दरवाजे पर ही समरेश से भेंट हो गई। समरेश भी अभी अभी कार से उतरा ही था। समरेश ने घण्टी का बटन दबाया और किसी ने दरवाजा खोला। लम्बा सफेद कोट, दूध सी सफेद धोती सिर पर सफेद टोपी नाक पर सुनहरी फ्रेम का चश्मा। रंग गोरा तीखा कान, पतले-पतले होठ, कानों के पास सिर के बाल एकदम सफेद। तोंद मोटी। इस अधेड़ उम्र के आदमी ने समरेश को ओर बढ़ कर हाथ मिलाया और हम सबको कमरे में ले गया।

विशाल हाल। मखमली सोफा-सेट, कमरे के बीचो बीच सुन्दर काँच के से ढंका टेबल। एक कोने में भारत नाट्यम की मुद्रा में युवती की प्रतिमा और उसके ठीक सामने दूसरी ओर कोने में जबरदस्त फन को ऊँचा उठाये नागराज। इस विचित्र विरोधाभास को देखकर मैं अचम्भे में पड़ गई। समरेश ने उस अधेड़ की ओर इंगित करते हुए कहा-"आप हैं हमारे सेठ कचरालालजी गोदीवाले रायबहादुर।" और फिर हमारा परिचय देते हुये कहा-"ये है प्रतिभा देवी हमारी हिरोइन और आप इनके पति अजय बाबू।" सेठ कचरालालजी ने मुझसे से हाथ मिलाने के लिये हाथ बढ़ाया लेकिन मेंने दोनों हाथ जोड़ कर उसे नमस्कार ही किया। सेठ कुछ झेंप सा गया और फिर हि:हि:हि: की विचित्र सी हंसी हँसता हुआ दोनों हाथ जोड़कर बोला-"हमारे यहां तो हाथ जोड़ कर ही प्रणाम करते हैं लेकिन फिल्म लाईन में अंग्रेजियत का जोर है गुड मॉनिंग, बाईबाई हलो डीयर कह कर हेंडसेक करना पड़ाता है।" और

समरेश की ओर देखकर कहा–"क्यों समरेश बाबू हमने ठीक कहा न ?" समरेश ने सिर हिला कर कहा–"आप गलत कब कहते हैं सेठ साहब ।" सेठ कचरालाल पुनः जोर से हिःहिःहिः करके हँस पड़ा और फिर अजय की ओर हाथ बढ़ा कर बोला– "आपका नाम क्या बताया, अजय बाबू .... नहीं नहीं अजय बाबू ? नमस्ते ।" अजय ने भी जबाव में हाथ बढ़ा कर कहा– "नमस्ते सेठ साहब ।"

कचरालाल सेठ कुछ देर यूं ही खड़ा रहा और फिर बाला- "समरेश बाबू ने हिट तस्बीरें दी हैं। देखो उस नाचने वाली छोकरी को। यह छोकरी हमारी हिट तस्वीर" नाची सारी रैन "की तस्वीर यादगार है और ये नागराज है हमारी हिट तस्वीर" नागिन और बीन" को यादगार। वाह रे समरेश बाबू तेरे हाथ में जादू है, तेरी खोपड़ी में जादू है।" और सेठ सा० कचरालाल समरेश की ओर आँखे फाड़ कर देखता हुआ मेरी ओर मुड़ा और बोलता गया –"और तू यह जादू भी लाया है। 'स्वर संगम' हिट तस्वीर बनेगी, हिट से भी हिट-सुपर हिट।" सेठ मेरी ओर देखता ही जाता पर समरेश ने उसे झकझोरा – "सेठजी अब कितनी देर है पार्टी में मेहमान लोग आये भीं हैं या आने बाकी हैं।"

सेठ को होश आया उसने मेरी ओर से नजर हटाई और चिल्लाया—"अरे कोई है ? रामा ओरे रामा ? कहाँ मर गया।" किसी ने उत्तर नहीं दिया तो सेठ पुनः झल्लाया— "साले सब मर गये। मैं सालों का सूंफड़ासाफ कर दूंगा।" और तब उसे याद आया और वह समरेश की की तरफ देख बोला—"अरे समरेश बाबू मैं तो भूल ही गया। छत पर सब लोग बैठे हैं। आप लोगो की ही कमी थी। ऊपर चलो। रामा तो गया है। कुछ फौरैन माल यानि के विदेशी माल का बन्दोंवस्त करनें।" पुनः उसने अजय की ओर देख कर पूछा—"आप

तो शौक फरमाते हैं न ? फर्स्ट क्लास स्काच व्हिस्की है। एक दम फॉरेन याने के विदेशी माल।" सेठ कचरालाल मुड़ा और सीढ़ियाँ चढ़ने लगा मुझे सेठ-कचरालाल के भोंदूपन पर हँसी आ रही थी पर हँसी को रोके रोके मैं भी सबके साथ सीढ़ियाँ चढ़ रही थी–पार्टी में शामिल होने।

× × ×

सीढ़ियां चढते-चढ़ते मेरी तो सांस फूल गई। छत पर पहुंचते ही सामने की पहली कुर्सी पर धप्प से पड़ गई। मुझे वह ख्याल ही न रहा कि छत पर चारों ओर बिछे टेबलों के पास कुर्सियों पर कई लोग बठे हुए हैं। मैं काफी थक गई थी। कुर्सी पर सुस्ताने लगी। मेरे पास की कुर्सियों पर समरेश अजय और सेठ गोदीवाला भी बैठ गय। चारों ओर बैठे हुये लोगों की नजरें मेरी ओर ही लगी थीं। सेठ गोदोवाला को सम्बोधित करते एक कोने से किसी ने आवाज दी "क्यों कचरा भाई क्या बात हैं। वहीं पर कैसे बैठ गये ?" सेठ कचरालाल जो जोरों से हाँफ रहा था लेकिन वह कुर्सी पर से उठा और जिस ओर से आवाज आई थो उस ओर बोले "कौन अमर भाई। आया अभी आया साले लिफ्ट को अभी ही खराब होना था पांच मंजिल पैदल सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ी।' कचरालाल हाँफता हाँफता थोड़ी देर रुक गया। जिस आदमी को अमर भाई कह कर सम्बोधित किया था वह सेठ कचरालाल को पहुँचाने की राह देखे बिना ही धीरे धीरे हमारे टेबल के पास आ पहुँचा। सेठ कचरालाल ने उससे हाथ मिलाते हुए कहना शुरू किया "अरे अमर भाई लिपट ने तो दुश्मनो साद ली। तुम सब लोग तो आराम से ऊपर आ गये और हम लोगों को यह पाँच मंजिल पहाड़ के समान ऊँचाई चढ़ना पड़ा। सेठ कचरालाल ने रूमाल से चेहरे का पसीना पोंछते हुए अजीब सा चेहरा बनाया और मेरी ओर इंगित करता बोला-इनको बड़ा कष्ट उठाना पड़ा

हमारा तो क्या सवाल है लेकिन ये तो नाजुक बदन ठहरी।" मेरी नजर एक क्षण के लिये अमर भाई की ओर उठी और पुनः नीचे झुक गई। अमर भाई ने कुछ ऐसी नजर से घूम कर मुझे देखा कि पुनः उनकी ओर नजर उठाकर देखने की मेरी हिम्मत ही नहीं हुई। मैंने रूमाल निकाला और ललाट पर घिर आई पसीने की बूँदों को पोंछ लिया।

अमर भाई ने समरेश से हाथ मिलाया और उसे खींच कर छत के एक कोने में खाली टेबल पर ले गये। मैंने तिरछी नजर से उसकी ओर देखा और फिर अजय की ओर मुड़ कर आराम से बैठने का उपक्रम करने लगी। सेठ कचरालाल भी थोड़ी देर यूं ही खड़ा रहा और फिर बोला - "प्रतिभा देवी आपका टेबल तो यह नहीं है। आज की पार्टी की आप प्रमुख अतिथि है। आपका टेबल तो सबके बीच में है।" फिर सेठ कचरालाल ने बीच में रखे विशाल टेबल की ओर देख कर मुझे उसी ओर चलने का इशारा किया। अजय और मैं उठे और उस विशिष्ट टेबल की ओर चल पड़े।

लम्बे चौड़े छत पर शानदार टेरेस गार्डन लगाया गया था। चारों ओर गमलों में ट्रुहालिया के रँग बिरंगे मुस्कराते फूल नाच रहे थे। किसी गमले में रसैलिया के सुन्दर लाल लाल फूल तो किसी गमले में-कालमडोला के सजीले पीले फूल गार्डन के चारों कोनों में लम्बे लम्बे बाँसों पर करेन्टिया की बेलें बल खाकर ऊपर चढ़ती जा रही थीं। छत के बीचोंबीच मेरे लिये निश्चित टेबल के पास रंग बिरंगे गुलाब के फूलों की झाड़ी सी लगा दी गई थी। पौधों पर फूलों के रंग के बिजली के बलब लगाये गये थे जो फूलों की सुन्दरता में चार चाँद लगा रहे थे। मैं ज्यों ही कुर्सी पर बैठने लगी कि लपक कर समरेश आ पहुँचा और बोला—"प्रतिभा देवी आप अभी कैसे बैठ सकेंगी। अभी तो उपस्थित अतिथियों से आपका परिचय

करवाना है।" मैं कुर्सी पर हाथ रखे खड़ी ही रही। सेठ कचरालाल ने भी सिर हिला कर कहा– "ओफकोर्स इस खास बात को तो सबसे पहले करना है। आज की पार्टी और किस काम के लिये है।" मैं समरेश के साथ चल पड़ी और एक के बाद एक सारे टेबलों पर घूमती चली गई। सेठ कचरालाल हमारे पीछे पीछे चलता रहा एक टेबल पर अधेड़ औरत और एक अधेड़ पुरुष और एक किशोरी थे। समरेश ने परिचय दिया— "आप हैं मिस्टर और मिसेस पल्टनवाला।" तीनों ने घूर कर मेरी ओर देखा। मिसपल्टनवाला १७ या १८ साल की किशोरी होगी। उसने झट एक छोटी सी डायरी और फाउन्टेनपेन मेरी ओर बढ़ा कर बड़ी उत्सुकता से कहा— "ऑटोग्राफ।" में पहले तो कुछ समझी नहीं लेकिन फिर समरेश ने समझाया—"मिस पल्टनवाला तुम्हारे ऑटोग्राफ चाहती हैं प्रतिभा देवी। और मैंने झट से सम्हल कर डायरी में लिख दिया।

"कला की पारखी बनो"

प्रतिभा

लिख देने के बाद मुझे महसूस हुआ कि मैंने कितनी महत्वपूर्ण बात लिख दी। एकाएक मुझे यह संदेश कहाँ से याद आ गया मैं कुछ भी समझ नहीं पाई। मेरे टेबल के पास ही टेबल पर एक युवा दम्पति और दो बच्चे बैठे थे। समरेश ने परिचय कराया —"राय बहादुर सेठ चोखानी और श्रीमती चौखानी।" दोनों ने मुझे नमस्कार किया और मैंने उन्हें प्रति नमस्कार किया। बच्चे मेरी ओर लगातार देखते जा रहे थे। झट से लड़के ने मेरा हाथ पकड़ कर कहा "तुम नरगिस हो क्या ?" पास बैठी लड़की उछल पड़ी "नहीं नहीं ये ये मधुबाला है मधुबाला।" हम सब बच्चों की बातों पर जोर

से हँस पडे । बच्चे हमें हँसते देख कर झेंप गये। इतने में ही अमर भाई कोने के टेबल से उठ कर हमारे पास आ गये। उसने बच्चों की बातें और हमारी हँसी सुन ली थी। उसके पास पहुँचते ही बच्चों ने उसके दोनों हाथ पकड़ लिये और पूछने लगे –"अंकल आप तो जानते हैं न ? हमें बतलाइये ये कौन है ? नरगिस या मधुबाला ?"

अमर भाई ने मुस्कराते हुए मेरी ओर देखा फिर बच्चों की ओर । बच्चों ने उसे मौन देख चिल्लाना शुरू किया— "अंकल जी अंकल जी बोलिये न ?"

अमर भाई ने पुनः मेरी ओर देखा और मुस्करा कर कहा–"बच्चे पूछ रहे हैं कि आप कौन हैं ? बतलाइये न इन्हें?" मैं इस बार अमर भाई की ओर देखे बिना नहीं रह सकी। अमर भाई की नजरें मेरे चहरे पर ही गड़ी थीं। एक क्षण में मेरी नजरें अमर भाई की नजरों से टकरा गई। मैं सहम गई। झट से मैंने बच्चों की ओर नजर घुमाई और दोनों बच्चों को पुकार कर कहा "बेटे न तो मैं नरगिस ही हूँ और न मधुबाला ही। मैं तो तुम्हारी आँटी हूँ।" दोनों बच्चे एक साथ ही चींख उठे–"गलत एकदम गलत। हमारे अंकल तो कुंआरे हैं फिर आप आँटी कहाँ से आ गई।" सारे लोग बच्चों की बातों पर जोर जोर से हँस पड़े। मैं मौन खड़ी खड़ी बच्चो को देखती रही । कोई उत्तर नही सूझ रहा था। सचमुच मैं झेंप सी गई थी। मेरी दुविधाजनक स्थिति को दूर किया सेठ कचरालाल ने। वह बच्चों को पुचकार कर बोला–"बैटे ये हमारी नई फिल्म की हिरोइन है प्रतिभा देवी।" और मैंने बच्चों के सिर पर हाथ फिराया और अपने टेबल की ओर चल पड़ी।

रेडियोग्राम पर धीमी-धीमी कोई विदेशी संगीत की धुन बज रही थी। टेबलों पर शराब की बोतलें खुल रही थीं और

पेग भरे जा रहे थे। समरेश अजय और मैं। सेठ कचरालाल किसी अन्य टेबल पर अपने साथी के पेग से पेग टकरा कर धीरे धीरे शराब की चुश्की ले रहे थे। समरेश ने भी टेबल पर रखी व्हिस्की की बोतल खोली और पेग भरते हुए अजय से पूछा—"अजय बाबू आप व्हिस्की लेंगे या रम।" अजय ने झिझकते हुए उत्तर दिया—"नहीं मैं तो केवल बीयर ही लेता हूँ और वह भी यदाकदा।"

"बीयर भी कोई शराब है। वह तो जौ का पानी है। बस एक पेग व्हिस्की ले लीजिये, बीयर से डाईल्यूट कर लीजिये।" और समरेश ने दूसरे पेग में व्हिस्की भर कर ग्लास में उडेल दी और अजय ना-ना करता हुआ उसमें बीअर मिलाने लगा। मैंने पास पड़े काफीपाट में से काफी उड़ेली और अपने लिये काफी तैयार करने लगी। अजय ग्लास की व्हिस्की को थोड़ी देर में ही पी गया और पुन: बीअर से ग्लास भर लिया। समरेश व्हिस्की का ग्लास धीरे-धीरे पीता रहा। व्हिस्की पीता पीता समरेश अपने आप में डूबता जा रहा था। अजय उसे किसी प्रकार की बात के लिये छेड़ता किन्तु वह संक्षेप में ही हाँ या ना उत्तर दे देता मैं धीरे धीरे काफी पीती जा रही थी।

रेडियोग्राम की मन्द मन्द धुन अब तेज हो गई थी। अतिथियों में से कई लोगों के पैर तो ताल के साथ ताल मिला रहे थे और कुछ धीरे धीरे तालियाँ ही बजाकर संतोष ले रहे थे। पीने का कार्यक्रम लगभग समाप्त हो गया था। बैरे डिनर का सामान प्रत्येक टेबल पर ला रहे थे। समरेश ने व्हिस्की की पूरी बोतल खाली कर दी थी। अजय बीयर की दो बोतलें पी चुका था। दोनों पर नशा सवार होने लगा था। डिनर शुरू हुआ तो अमरभाई हमारे टेबल पर आ गया। समरेश ने कुर्सी खींच कर उसे बिठाया ओर बोला—"क्यों अमर भाई तुम तो एकदम अछूते हो। कभी पीते पिलाते नहीं।"

"समरेश बाबू इसे भी पचाने के लिये ताकत चाहिए। मुझ में आप जैसी ताकत कहाँ है। फिर किस ताकत पर पीने की हिम्मत करूँ!" अमरभाई ने मेरी ओर नजर उठा कर देखा पूछ लिया—"आप तो शायद बीअर ही पीते होंगे।"

मैंने उत्तर देने के लिये तैयारी की ही थी कि अजय बोल उठा—"नहीं अमरभाई, ये भी आपकी तरह ही अछूती हैं। पीने पिलाने की बीमारी तो मुझे ही लगी है।" अमरभाई ने पुनः मेरी ओर देखा। मेरी नजर अमरभाई की नजर से एक बार टकराई। अमर भाई की नजरें मानों कह रही थी—"आप में और मुझ में इस मामले में एकात्म है। हम दोनों एक दूसरे के नजदीक हैं। काफी नजदीक हैं।" अमर भाई ने मुँह से कोई शब्द नहीं निकाला। हमने भोजन करना शुरू कर दिया।

× × ×

रात को करीब बारह बजे हम जुहू लौटे। अजय पर जोरदार नशा सवार हो गया था। उसके लिये मोटर कार चलाना संभव नहीं था अतः मैं ही सारे रास्ते गाड़ी चलानी आई। घर आकर अजय बेसुध सा पड़ गया। नागपुर में अजय कभी कभी क्लब से शराब पीकर आता था लेकिन इस प्रकार बदहोशी की हालत में मैंने उसे पहली बार ही देखा था।

पलंग पर पड़ते ही अजय तो अचेत सा पड़ रहा। पर मुझे नींद नहीं आ रही थी। अमरभाई की आँख मानो घूर घूर कर देखती जा रही थी और मैं मन में ही संकोच से दबी जा रही थी। साथ ही एक ही टेबल पर भोजन करने के बाद भी मैं अमरभाई से कुछ भी स्पष्ट बोल नहीं पाई। मैं उससे कुछ भी पूछ नहीं पाई। इन पियक्कड़ों के बीच में रह कर भी वह एक बूँद भी शराब नहीं पीता—मुझे इसी बात पर आश्चर्य हो रहा था। उसका सुन्दर प्रभावोत्पादक चेहरा, विस्फारित नेत्र, चौड़ा ललाट, ललाट पर छिटकी हुई बालों की एक लट, गोरा रंग,

कुशल चित्रकार की कूची से बनाये हुए से सुन्दर लाल लाल होठ, ठुड्डी पर फ्रेंच कट गोटी। अमरभाई का सुन्दर रूप मेरी आँखों में लगातार घूमता जा रहा था। न जाने कब मुझे नींद आ गई। सुबह में काफी देर से जागी। अजय तो तब भी पलंग पर पड़ा था। घड़ी ने नौ बजाये थे। कमरे का दरवाजा खोला तो ड्राइंग रूम में किसी के अखबारों के पृष्ठ उलटने की आवाज सुनाई दी। मैंने नौकर को आवाज दी—"कृष्णा कौन आया है रे।"

कृष्णा दौड़ कर आया–"मेम साब अपने बड़े साब कभी के आये हुए है।"

"कौन समरेश बाबू ?" और मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ कि रात को इतनी व्हिस्की पी लेने के बाद भी समरेश बड़े सवेरे जग गया और तैयार होकर हमारे यहाँ भी आ गया। मैंने कृष्णा को चाय बनाने का आदेश दिया और खुद शौचादि से निवृत होने व शीघ्र तैयार होने के लिये बाथरूम की ओर चल पड़ी।

मैं जैसे ही ड्राइंग रूम में आई तो देखा कि अजय भी जाग कर कमरे में आ गया है और समरेश से बातें करने लगा है समरेश ने मेरी ओर देख कर कहा "प्रतिभा देवी माफ करिए सुबह सुबह आप लोगों को कष्ट दिया। बात यह है कि अमर भाई ने अपने बोरीबली के बंगले में आज शाम को पार्टी का आयोजन किया है उसी पार्टी का निमन्त्रण देने आया हूँ।"

"लेकिन ये अमरभाई है कौन ? आपने उसका कोई परिचय भी नहीं दिया।" अजय ने आंखे मलते मलते पूछा।

"माफ करना कल परिचय देना भूल ही गया था। अमर भाई रायबहादुर चौखानी के छोटे भाई है। दो साल हालीवुड में सिने टेक्नीक का प्रशिक्षण प्राप्त करके अभी अभी लौटे हैं। काफी प्रतिभाशाली युवक हैं।" समरेश और बोलता जाता

लेकिन मेंने बीच में बाधा देते हुए पूछा "लेकिन हमारा इनसे कोई खास सम्बन्ध है क्या ?"

"राय बहादुर चौखानी है अपने सेठ कचरालाल के भागीदार। बस यही सम्बन्ध है। फिर अमर भाई ने मेरे साथ सहयोगी-निर्देशक की तरह रह कर काम करना चाहते हैं। इस प्रकार अमर भाई अपने यूनिट के एक सदस्य भी हुए" और समरेश मौन होगया। अजय उठ खड़ा हुआ था लेकिन वह पुन: सोफा पर बैठ गया और बोला "अमर भाई दिखते काफी होशियार हैं समरेश बाबू। आपके सहयागी रहेंगे तो और भी अच्छी बात है।"

"जवान है शिक्षण प्राप्त भी है, अब जरूरत है तो अनुभव की। सो एक दो चित्रों में काम करने से अनुभव भी आ जायेगा ऐसे नवयुवक कलाकारों से ही उम्मीद है देश को। समरेश कहता कहता मौन हो गया और अपने विचारों में ही खो सा गया। फिर जैसे उसे कुछ याद आया और वह उठ खड़ा हुआ।' तो अब मैं चला। मुझ जरूरी काम है। एक मार्च को मुहूर्त है "स्वर संगम" का कैई। लोगों को घर पर बुलाना है। कई जरूरी निर्णय लेने हैं। समरेश कदम उठाता हुआ कमरे से बाहर हो गया। मैं तेजी ने उसकी ओर भागती हुई बोली "अरे चाय तो पीते जाइए। इतनी जल्दी भी क्या है।"

"चाय तो कृष्णा कभी की दे गया था। आप उठीं उससे पहले ही मैंने चाय पी ली थी। अब शाम को आऊँगा। आप तैयार रहिएगा।"

समरेश फाटक खोल कर गाड़ी में बैठा और नमस्ते करके मोटर गाड़ी को स्टार्ट कर दी। मैंने प्रत्युत्तार में नमस्कार किया लेकिन मेरी आँखों के सामने पुन: अमरभाई का आकर्षक चेहरा घूम गया। मैं दरवाजे पर शून्य में देखती देखती काफी देर तक खड़ी ही रही। कृष्णा ने पीछे से आवाज दी "मेम साहब मेम

साहब ?? साहब पूछते हैं कि आज भी कोई खास साड़ी खरीदनी है ?"

"तू जा मैं अभी साब से खुद बात कर लूँगी ।" और मैं सामने के विशाल नारियल के पेड़ पर चढ़े नारियल के फल गिराते नंगधड़ंग मजदूर को देखती रही और सोचती रही "तो अमरभाई फिल्म निर्देशक भी है। हालीवुड में प्रशिक्षण प्राप्त ।' कमरे में से अजय ने जोर से आवाज दी "प्रतिभा इधर आओ न, शाम की तैयारी कब करोगी ।"

मैं कमरे की ओर लौट पड़ी ।

एक मार्च । प्रातः आठ बज कर दस मिनट । मुहूर्त का समय हो गया । पण्डित ने मँत्रोच्चारण किया । अमर भाई ने क्लेयर सामने करके खट खट खट खट की आवाज की और बोला "मुहूर्तशाट वन, टेक वन ।" चारों ओर शान्ति ही शान्ति शर्मा ने ट्राली को आगे चलाया मैंने डायलाग बोला "संगीत ही मेरा जीवन है, संगीत ही मेरा प्राण है। मुझे स्वर की साधना करनी है मेरे प्रियतम ?"

"ओ के। कट कट कट कट ।"समरेश ने आदेश दिया। चारों ओर तालियों की गड़गड़ाहट हुई । झटपट समाचार पत्रों के सँवाददाताओं के केमरे क्लिक क्लिक कर उठे। क्षणभर में विभिन्न कोणों से मेरे कई फोटो लिए गए। समरेश ने आगे बढ़ कर मुझ से हाथ मिलाया और कमर थपथपा कर कहा "एक्सलेंट, प्रतिभा देवी ।"

अमरभाई क्लेपर लिए पास ही खड़ा था। उसने धीरे से कदम बढ़ा कर कहा "काँग्रेचुलेसन्स प्रतिभा देवी ।" मैंने धीरे से प्रतिउत्तर दिया "धन्यवाद ।" और अमरभाई से मेरी नजरें मिल गईं । मैंने संकोच से झट दूसरी ओर नजर घुमा ली ।

प्रकाश स्टूडियो का सबसे बड़ा फ्लोर अतिथियों और

दर्शकों से भर गया था। मुहूर्त शाट के लिये तो कौने में सेट का एक छोटा सा हिस्सा तैयार कर दिया गया था। जंगल का एक दृश्य-विशाल वृक्ष के नीचे मैं और पृष्ठ भूमि में नदियाँ पहाड़ और झरने। मुहूर्त से निबृत होते ही परिचय का दौर शुरू हुआ। समरेश प्रसिद्ध निर्देशकों और प्रसिद्धि कलाकारों से परिचय कराते हुए मुझे इधर से उधर घुमाता रहा। फोटोग्राफरों ने, संवाददाताओं ने न जाने मेरे कितने फोटो ले लिये थे। मुलाकातों का दौर समाप्त हुआ तो मैं काफी थक चुकी थी। कुर्सी खींचकर बैठ गई। इतनी देर अजय कहीं दिखाई नहीं दिया था। शायद मैं उसे भूल गई थी। याद आते ही मैंने इधर उधर देखना प्रारम्भ किया। अजय दूर एक कौने में कुर्सी पर बैठा अमरभाई से बात कर रहा था। जैसे ही मैंने उसकी ओर देखा वह उठ कर मेरी ओर आने लगा। मैं भी कुर्सी से उठकर उसकी ओर चल पड़ी। मैंने सामने आते ही अजय से कृत्रिम क्रोध के स्वर में पूछा "कहाँ चले गये थे ? मैं कब से ढूँढ रही हूँ। कहीं पता भी नहीं लग रहा था।"

"काम तो तुम्हारा था। मैं बीच में कहाँ आता। आराम से उस कोने में बैठ कर सब कुछ देखता जा रहा था।" अजय ने निर्विकार सा बन कर उत्तर दिया।

"तो तुम्हें मेरा काम पसन्द नहीं आया शायद ?" और मैंने आगे कुछ कहने के लिए सोचना चाहा कि अजय बीच ही बोल उठा "तुम गलत समझ गई प्रतिभा। तुम्हारे मुहुर्त शाट की तो सब लोग प्रसंशा कर रहे हैं। मुझे फिर तुम्हारा काम पसन्द क्यों नहीं आयेगा !" शायद अजय और कुछ कहता। मैं भी शायद उत्तर देती। लेकिन तब तक अमर भाई। हमारे पास आ पहुँचा। हम दोनों मौन हो गये। वह हमें मौन देखकर बोला "क्या कोई गोपनीय बात हो रही थी ? माफ करियेगा गलती के लिये, मैं चला।"

"नहीं नही, अमर भाई, कोई गोपनीय बात नहीं हैं। आपस में यूं ही बात कर रहे थे। कुछ भी विशेष बात नहीं। आप ठहरिये न।" अजय ने अमरभाई का हाथ पकड़ कर रोकते हुए कहा।

"लेकिन आप तो कुछ बोल ही नही रही हैं प्रतिभादेवी काम की दौड़ धूप से परेशान हो गई हैं शायद।" अमरभाई ने हाथों में थामें क्लेपर को खटखटाते हुये पूछा।

काम तो हुआ ही कहाँ है जो परेशान हो जाऊँ। अभी तो शुरू आत ही है। हाँ दौड़ धूप तो आपको करनी पड़ रही है। दिग्दर्शक का काम जो ठहरा।" मैंने यूं ही औपचारिक उत्तर दिया।

दिग्दर्शक का काम कैसा। दिग्दर्शक तो है समरेश बाबू। मैं तो उनका सहायक हूँ—केवल असिस्टेन्ट।" अमर भाई ने विचित्र सी मुस्कराहट चेहरे पर लाते हुए कहा।

"पर आप तो हालीवुड में रह कर आये हैं। वहाँ के काम के मुकावले में तो यहाँ का काम साधारण ही होगा?" अमरभाई की ओर देखे बिना ही पूछा। अमरभाई कुछ उत्तार देता उससे पहिले समरेश तेज कदम उठाता हुआ आ पहुँचा और हमें देखकर बोला "क्या गपशप चल रही है? सुनो, पूरा एक महीने का लगातार शूटिंग है, कल से मोहन स्टूडियो में।" फिर अमर भाई को आदेश सा देते हुए समरेश ने कहा, "तुम आज सेट पर पहुँच जाना सेट तैयार होना जरूरी है।"

फोटोग्राफर ने हमारे ग्रुप का बातें करते पोज में फोटो ले लिया तो हम चौंके और सब जोरों से बिना कारण ही हँस पड़े।

× × ×

शूटिंग का सातवां दिन था। में स्टूडियो जाने की तैयारी कर रही थी कि अमर भाई मोटर कार लेकर आ पहुँचा। अमर

भाई को देखकर अजय प्रसन्न नहीं हुआ। अमरभाई ने कमरे में प्रवेश करते हुए कहा "मैंने सोचा चलो प्रतिभा देवी और अजयबाबू को साथ लेता चलूँ और इस लिये इधर आ गया।" अजय यद्यपि स्टुडियो चलने की तैयारी कर चुका था लेकिन उसने न जाने क्यों अपना बिचार बदल दिया और मुझसे बोला "प्रतिभा तुम अमरभाई के साथ जाओ। मैं लगभग १२ बजे लंच टाइम पर स्टुडियो पहुँच जाऊँगा।" अमरभाई ने कुर्सी को पास खींचते हुए कहा "लंच टाइम तक आप क्या करेंगे अजय बाबू ? चलिए न साथ ही चले चलें।" अजय ने झूँठमूँठ किसी काम को याद करते हुए कहा "मैंने कल माटुंगा के एक दोस्त को मिलने का वायदा किया था और सुब्रह सुबह जल्दी में उस वादे को भूल ही गया था मुझे उससे मिलना जरूरी है अमरभाई। मैं वहाँ से सीधा स्टुडियो को लौट आऊँगा।" "और अजय कमरे में इधर उधर टहलने लगा।"

मैं जान गई कि अजय झूँठ बोल रहा है। अमर भाई का मेरे साथ ज्यादा घुलना मिलना उसे अच्छा नहीं लग रहा था। उसने मुझे दो दिन पहले गोल-मोल भाषा में कहा था "यह अमर कैसा आदमी है। बिना कहे ही स्टुडियो से यहाँ तक साथ आ जाया करता है। इसे तो अपने काम से काम होना चाहिए, क्यों मान न मान में तेरा मेहमान बना रहता है। "मैंने अजय के इन शब्दों पर कोई गौर नहीं किया था। सही माने में-अजय को अमर भाई का मेरे साथ घुलना मिलना अच्छा नहीं लग रहा था। यह स्पष्ट शब्दों में मुझसे कुछ कहे इतना साहस भी बटोर नहीं पा रहा था। स्टुडियो में प्रथम सहायक दिग्दर्शक होने के नाते अमरभाई से दिन भर काम पड़ता ही रहता था। उससे खुलकर बातें करने हंसने आदि से शायद अजय को जलन होने लगी थी। अमरभाई के निकट आने पर

अजय के चेहरे पर विचित्र सा परिवर्तन आ जाता, उसकी भौहें तन जाती, ललाट की सलवटें अजीब वक्र रूप ले लेती और बातें करता करता वह मौन हो जाता या बेरूखी अपना लेता। मैं अजय की प्रकृति में आये इस नये परिवर्तन को जान कर भी अनजानी बन जाती और बातों का विषय ही बदल देती। दो-तीन दिन पहले की बात थी। सेट पर नृत्य का दृश्य फिल्माया जा रहा था। नायिका की हवेली का विशाल हाल। नायिका के जन्म दिवस का समारोह। उस मौके पर कत्थक नृत्य का कार्य-क्रम रखा गया। मैं कत्थक नृत्य को वेशभूषा में तैयार थी नृत्य के दिग्दर्शक ने रिहर्सल कराया और क्रेन का दौर शुरू हुआ। पहले क्रेन पर केमरे में आँखें डाल अमरभाई ने देखा और आबाज दी "यस शुरू।" मैंने नाचना शुरू किया लांग शाट से धीरे धीरे केमरा क्लोज अप को स्थिति में आया और पुन: पीछे हटा और लाँग शाट की स्थिति में आ गया समरेश ने अमरभाई से पूछा "क्यों अमरभाई से कैसे है।" अमरभाई ने क्रेन से नीचे उतरते हुए उत्तर दिया "शाट तो बहुत सुन्दर रहेगा दादा। आप एक बार देख कर तसल्ली कर लीजिए। समरेश ने क्रेन पर बैठ कर पुन: उसी शाट का रिहर्सल देखा और बोला, "वाह क्या खूबसूरत शाट है। शानदार कंपोजीशन है।" और थोड़ी ही देर में यह शाट ले लिया गया। शाट काफी लम्बा था अत: उसे लेने में काफी समय भी लग गया था। मैं कुर्सी पर बैठ कर पसीना सुखाने लगी थी। अमरभाई मेरे पास आया और शाट की प्रसंशा करता बोला "प्रतिभादेवी ऐसा शानदार शाट समरेश दादा ने लिया है कि होशियार से होशियार डायरेक्टर नहीं ले सकता" शाट की प्रसंशा करता करता अमरभाई मेरी भी प्रसंशा करने लगा, और लोग शाट में कत्थक नृत्य करती हुई आप कितनी सुन्दर मालूम होती हैं। क्लोज अप में आने पर तो वाह क्या

कहने ! मैं दावे के साथ कहता हूँ कि फिल्म संसार में आपके जैसा फोटोजनक चेहरा नहीं है। तस्वीर की रिलीज तो होने दीजिये, तूफान खड़ा हो जायेगा।" अजय पास की कुर्सी पर बैठा बैठा सुन रहा था और मन ही मन भुन रहा था। अमर भाई ने उसकी मुख मुद्रा की ओर ध्यान नहीं दिया और उससे यूँ ही पूछ लिया। "क्यों अजय बाबू आपका क्या ख्याल है ? मैंने कुछ गलत तो नहीं कहा।" अजय ने बेरुखी दिखाते, अपने मन की अप्रसन्नता को दबातेहुये उत्तर दिया "मैं क्या जानूं केमरे की पेचिदिगियों को। यह तो कला के पारखी लोगों का काम है। आप लोग ही समझ सकते हैं।" मुझे अजय का यह उत्तर अच्छा नहीं लगा। अगर उसे सीधी बात करनी थी तो टेढ़ा क्यों बोलता है। मौन ही रह जाता। मेरी इच्छा हुई कि मै उसे कुछ साफ साफ सुना दूँ" तुम्हें मेरा काम अच्छा नही लग रहा है। तुम हीनता की भावना से दबे हुऐ हो।" लेकिन दूर खड़े केमरामैन शर्मा ने हमारी बातों को सुन लिया था। उसने अपनी हँसोड़ मुद्रा में जोर से कहा, वाह अजय बाबू क्या हालीबुड बात कह दी आपने। एक दम हाली-बुड।" शर्मा के कथन पर मुझे हँसी आ गई। अमर भाई और अजय भी हँस पड़े। सारा तनाव हँसी के बहाव में बह गया। समरेश हँसी का कारण समझ नहीं पाया था। उसने प्रश्न दृष्टि से शर्मा की ओर देखा। अगर कोई दूसरा इस प्रकार से देखता तो शर्मा अपने सामान्य स्वर में कहता "अबे गोरख-नाथ क्या घूर रहा है उल्लू की तरह।" लेकिन समरेश की ओर देख कर उसे कुछ कहते न बना। वह अपने केमरे में हीं उलझ गया। उस दिन अजय का मूड खराब रहा। वह अन-मना सा एक कोने में आराम से कुर्सी पर किसी किताब को पढ़ने का बहाना करके अकेला बैठा रहा। मैंने अजय की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। शूटिंग समाप्त होने पर शाम को

अमरभाई हम दोनों को बंगले तक छोड़ गया। अजय ने लौटते हुए अमरभाई को धन्यवाद तक नहीं दिया। दूसरे दिन अजय घर पर ही रुक गया और मैं अमरभाई के साथ कार में स्टूडियो के लिये रवाना हो गई। अमरभाई गाड़ी चला रहा था और में उसके बाजू में बैठी थी। अमरभाई ने घोड़-बन्दर रोड़ पर पहुँचते ही पूछा "क्यों प्रतिभादेवी क्या अजय बाबू की तबियत खराब है क्या ?" मैंने उत्तर दिया 'नहीं तो" और कुछ देर रुक कर पूछा "क्यों आपको यह संदेह कैसे हुआ ।?" अमरभाई ने सिगरेट का कश खींचते हुए दूसरे हाथ से स्टेयरिंग को सम्हालते कहा, "कुछ अनमने दिखाई देते हैं। बात करने पर ठीक से उत्तर नहीं देते। इसलिये मैंने सोचा शायद तबियत ही ठीक नही हो।"

"नहीं अमरभाई ऐसी कोई बात नहीं है। कभी-कभी अजय को विचित्र सा डिप्रेशन आ जाता है। तब वह बेरुखी सी बातें करता है।" मैंने झूठमूँठ ही कहा था और इस झूँठ को आगे बढ़ती हुई कहती गई "यह तो अजय के स्वभाव में है। नागपुर में भी वह कभी कभी ऐसा ही व्यवहार किया करता था। अमरभाई ने धुंए का बादल उड़ाते हुए मानो तसल्ली की साँस लेते हुये कहा " ओह ओह ओह ओह ।,, अमरभाई थोड़ी देर मौन रहा और फिर बोला "आदमी भी भी विचित्र प्राणी है। इसे आसानी से समझना सम्भव नहीं। है। पेंचीदगियों का विचित्र पिटारा है आदमी ।" मैं अमरभाई के इस दार्शनिक विश्लेषण का अर्थ नहीं समझ पायी। मैंने कहा "क्या कह रहे हैं अमरभाई ?" अमरभाई ने उत्तर दिया। स्टूडियो के फाटक पर खड़े पठान ने फौजी सिपाही की तरह अटेनसन पोजीशन में खड़े हो सलाम किया। हमारी कार तेजी से आगे बढ़ गयी।

सेट पर तैयारियाँ हो रही थी। शर्मा लाइटिंग की व्यवस्था कर रहा था। मचान पर एक बड़े लाइट के पास बैठे आदमी की ओर देख कर वह चिल्लाया "अबे गोरखनाथ पँजा बन्द कर। वह पाँच-पाँच नम्बर का सोलर मेरे बाप! किस पाताल में दिमाग है तेरा!" लाइट मैंने मुड़ कर दूसरी ओर रुख किया। शर्मा ने अपने सहयोगी को आवाज दी "सोहराबजी ?" सहयोगी एक कौने में बेबी लाइट जमा रहा था। उसने शर्मा की आवाज सुनी ही नहीं। वह कौने में ही उलझा रहा। शर्मा पुन: चिल्लाया "ओ मेरे बाप सोहराबरूस्तम ? उस कर्बला के मैदान को छोड़ो इधर इस पानीपत के मैदान को पहले सजादो। अभी राणा सांगा और बाबर तैयार होकर आ जायेंगे।" शर्मा के शब्दों में इतिहास के सही गलत होने से कोई सम्बन्ध नहीं था। उसे तो जो शब्द जब भी जंच जाता वह उसका बिना किसी संदर्भ के प्रयोग कर लेता। समरेश ने शर्मा की ओर देख कर कहा "अरे शर्माजी, बिचारे इतिहास की तो ऐसी तेसी मत करिये। उसे तो छोड़िये।

मेरी ऐसी तैसी हो रही हैं उसमें इतिहास का ध्यान कहाँ हैं दादा। मैं फिर इतिहास पर क्यों दया करूँ।" शर्मा ने कहते कहते पुन: अपने सहयोगी को आवाज दी "ओ रूस्तमे हिन्द ? जरा इस ओर पंजे का रुख।" शर्मा के शब्दों का यूनिट के लोग आनन्द लेते लेते जा रहे थे।

मैं झटपट उठी और मेकअप रूम को ओर चली। समरेश ने पीछे से आवाज दी।" प्रतिभा आज पहिला शाट तुम्हारा नहीं है। आराम से मेकअप करके आ सकती हो।" मैं रुक गई। अमर भाई ने समरेश से पूछा, "क्यों दादा आज पहला सीन बदल दिया क्या ?"

"नहीं भैया। कामेडियन चीनू चीचड़ा बारह बजे के बाद दूसरे शूटिंग में जाना है। वह अभी आया था। गिड़गिड़ा रहा था। मैंने सोचा चलो इसी का काम पहले करलें। "और समरेश ने डायलाग लेखक रेवाकिशन की ओर देख कर पूछा "रेवाकिशनजी चीनू चीचड़ के संवाद तैयार कर दिये हैं क्या ?"

"दादा आपने अभी अभी तो नये आदेश दिये हैं। अभी पन्द्रह मिनट में तैयार किये देता हूँ।" रेवाकिशन ने अपनी फाइल और पेन्सिल को सम्हाला और लिखने में मशगूल हो गया। मैं धीरे धीरे मेकअप रूम की ओर चल पड़ी।

आधे घंटे के बाद कपड़े पहन, मेकअप करके सेट पर लौटी तो देखा कि शाट की पूरी तैयारियाँ हो चुकी हैं। लेखक रेवाकिशन डायलाग दिग्दर्शक का काम भी करता था। वह कामेडियन चीनू चींचड़ और वेला मांकड़ को डायलाग रिहर्सल करा रहा था। नायिका की हवेली के बाहर का दृश्य था बगीचे में एक छतरी के पास एक लठ्ठ पर चीनू चींचड़ दोनों हाथों में चेहरे को थामे चिन्ताग्रस्त बैठा देख रहा है। एक डलिया में फूल भरे बेला मांकड़ आती है। वह ठिठक कर ठहरती है। उसकी आँखों में शरारत है! वह चीनू को निहारती है फिर मटकती मटकती चीनू के चारों ओर से दोचक्कर लगाती है। चीनू निर्विकार बैठा है। वेला धीरे से लठ्ठे पर चीनू से सट कर बैठ जाती है। चीनू को मानो किसी अंगारे ने छू लिया हो। वह कूद कर सरक जाता है। बेला पुनः सरक कर उससे सट कर बैठती है। चीनू उघाड़ा है। मोटी तोद-भोंड़ा चेहरा। वह रोनी सी सूरत बना कर कहता है क्यों.... ....बेला की आंखों में रखे

शरारत भरी मस्ती है। वह चीनू से छेड़ छाड़ करती है। वह डलिया में रखे फूलो में से कुछ फूल हाथ में लेती है और चीनू के चेहरे पर फेंक देती है और मुस्करा कर चीनू के सामने कर देती है। चीनू रोनी सूरत बना कर शिकायत करता कहता है। "फूल क्यों मारती हो ?" बेला रेवाकिशन से पूछती है मेरा क्या डायलाग है। रेवाकिशन बेला की ओर घूर कर देखता है । और फिर कहता है "सुनिये मैं एक बार तुम दोनों के डायलाग पड़ कर सुना देता हूँ। सुनो चीनू कहता है "फूल क्यों मारती है । तब तुम उत्तर देती हो 'ले तू भी मार ले।' चीनू थोड़ा मुस्करा कर कहता है। 'मैं कैसे मारलूँ ?' और तब तुम पुनः फूल फेंक कर कहती हो 'ऐसे मारते हैं न।' तब चीनू पुनः मुस्कराता है। और कहता है "ऊँहु। मैं तो नहीं मारता।" और तब तुम उसका हाथ पकड़ कर कहती हो "मार ले न, मार लेन । इसमें क्या एतराज है।" पुनः चीनू कहता है, ऊँ हूँ। मैं नहीं मारता। और फिर जोर से हँसता है और डलिया तुम्हारे हाथ से छीन लेता है।

रेवाकिशन ने संवादों को पुनः एक बार दोहराया। और फिर चीनू ने रिहर्सल शुरू करते कहा-"फूल क्यू मारती है।" बेला को उत्तर देना था पर बेला झेंप रही थी और संवाद बोल नहीं पा रही थी रेवाकिशन ने उससे कहा 'बेला बोलो न ले तू भी मार ले।' लेकिन बेला मौन ही रही कुछ भी बोली नहीं । रेवाकिशन ने संवाद—दोहराया बेला फिर भी मौन। मैं इस नाटक को दिलचस्पी से देखने लगी। समरेश अमर भाई तो शाट के बारे में बातचीत कर रहे थे। उनका ध्यान इस ओर नहीं था। मैं बेला की दुविधा को समझने का प्रयास करने लगी रेवाकिशन ने पुनः डायलाग दुहराये और बेला से कहा "बोलो न बोलती क्यों नहीं।" बेला एक दम उठ खड़ी हुई। रेवाकिशन

के चेहरे पर शरारत झलक रही थी। बेला ने भड़क कर कहा "ऐसे बेहूदे संवाद में नहीं बोलती। मैं दादा से मिलूँगी।" और वह समरेश की ओर न जा कर मेरी ओर बढ़ी। मुझे संवाद का अर्थ सअझने में अब देर न लगी। संवाद सजेस्टिव था और उसका दुहरा अर्थ निकलता था। फिल्म लाईन में नई नई आई बेला को संवाद बोलने में झिझक महसूस हो रही थी। वह सीधी मेरे पास आई। रेवाकिशन और चीनू चींचड़ अपनी जगह पर ही खड़े खड़े देखते रहे बेला के चेहरे पर गुस्सा था और आंखे डबडबाई हुई थीं। उसने आते ही कहा दीदी मेरी सहायता कीजिये। ये रेवाकिशन मेरे पीछे पड़ा है। मुझे कई दिनों से परेशान कर रहा है।" मैंने बात स्पष्ट समझने के लिये पूछा "क्यों बेला क्या बात है?" रेवाकिशन तो सीधा साधा आदमी है।" बेला ने गुस्से में दाँत पीसते हुए कहा "सीधा साधा। अरी दीदी आप नहीं जानती। बड़ा शैतान है। कल सेट के पीछे ले जाकर मुझे धमकियाँ देता रहा। मैं उसके दवाव में नहीं आई तो कहने लगा याद रखो बदला लेके रहूँगा। आज मुझसे वेहूदी संवाद बुलवाना चाहता है।" वह बोलती बोलती रुक गई। मैंने पूछा सँवाद तो समरेश बाबू ने सुने होंगे। उन्हें कोई एतराज था क्या? "बेला मेरे मुँह की ओर देखती रही और फिर बोली "दादा ने जल्दी जल्दी में कोई ध्यान नही दिया और रेवाकिशन पर ही सब कुछ छोड़ दिया। अब में आपको कैसे बतालाऊँ कितने उल्टे सीधे बेहूदे दो अर्थ वाले सँवाद हैं।" मैं बेला को दुविधा को समझ गई थी। रेवाकिशन अपने तरीके से बेला को डराना चाहता था। मुझे उसकी शैतानी पर गुस्सा आ रहा था। मैंने वेला को अपने पास बैठाने का इशारा किया और सँवाद बदलवाने का वादा करके कहा "घबड़ाओ मत बेला। समरेश बाबू से अभी कह कर सब ठीक करा देती हूँ। "बेला मेरे पास आकर बैठी

तो सारी यूनिट का ध्यान मेरी ओर लग गया। अब मुझे समझ में आया। बेला और रेवाकिशन के संबन्ध में यूनिट के सारे सदस्यों को पता था और दूर खडे खड़े सब लोग उन दो अर्थ वाले संवादों का आनन्द ले रहे थे। मैं समरेश की ओर देखने लगी कि शर्मा की आवाज सुनाई दी। शर्मा चीनू चींचड़ की ओर सँकेत कर रहा था "अरे ब्रह्मचारी जरा पीछे हट कर बैठ। तेरा ब्रह्मचारी शाट तैयार हो रहा है। इधर उधर देख कर पुन: बोला "पर वह ब्रह्मचारिन कहाँ गई। अकेले ब्रह्मचारी को लेकर चाटना है क्या ?" शर्मा के शब्दों पर सारे यूनिट के लोग हँस पड़े। समरेश का ध्यान भी हँसी सुनकर शर्मा की ओर गया। उसने अपनी नजर चीनू की ओर डाली और फिर बोला "बेला नहीं आई अभी। उसे जल्दी लाओ भाई।" वेला कुर्सी से उठ खड़ी हुई और बोली "दादा मैं हूँ दीदी के पास।"

"पर यहाँ क्या कर रही है। सँवाद रिहर्सल कर लिया। जल्दी भाग उधर" समरेश कहता रुक गया। बेला कभी मेरी ओर तो कभी समरेश की ओर देखती जाती थी लेकिन कुछ भी कहने की हिम्मत बटोर नहीं पा रही थी। समरेश झुँझला उठा और बोला, "देख क्या रही मेरी ओर। बोल न क्या कष्ट है तुझे।" वेला के मुंह से दादा शब्द निकला और वह चुप रह गई। अब मैं ही उठी और समरेश के नजदीक पहुँच कर बोली "बेला को सँबादों से एतराज है समरेश बाबू।" समरेश उछल पड़ा, "एतराज है। बेला क्या समझती है संवाद के बारे में। और बेला को आदेश देता हुआ समरेश बोला "जाओ रिहर्सल करो।" बेला मौन, पर रोनी सूरत बनाये चीनू की ओर चल पड़ी। मैंने समरेश को समझाते हुए कहा "समरेश बाबू डायलाग लेखक ने बड़े वेहूदा द्वयार्थक डायलाग लिखे हैं। बिचारी

वेला कैसे बोले उन डायलागों को। अब स्थिति समरेश को को समझ में आई। वह हंसता हंसता बोला, "ओ हो तो रेवा-किशन जी ने सँवादों में बिटामिन ज्यादा डाल दिये क्या। मैंने कहा था थोड़ा सजेक्टिव सीन है। रोमान्स का टच होना चाहिये" और समरेश ने रेवाकिशन की ओर देखकर कहा "अरे रेवाकिशन जी क्या पूरे गोलपीठा डायलाग ही लिख डाले हैं। छोकरी शर्म से गड़ी जा रही है। देखते नहीं मेरे पास लाइये डायलाग। रेवाकिशन अपनी फाइल लेकर समरेश की ओर बड़ा। बेला बिजयी की नाँई उसकी ओर देख मुस्करा रही थी। चीनू चींचड़ कभी बेला की ओर और कभी मेरी और देखता जाता था। वेला ने मेरी ओर देखा। मानों आँखों के ईशारे में ही कर रही हों " दीदी आपके प्रति में बहुत कृतज्ञ हूँ। आपने मुझे दुविधा से बचा लिया।" मुझे ऐसा मह-सूस हो रहा था। मानो मेंने बहुत बड़ा नैतिकता का काम कर लिया था और उसके लिये मुझे गर्व था।

सातवें दिन का शूटिंग समाप्त हो गया। उस सेट का काम पूरा हो गया था अब उस सेट में कुछ रद्दोबदल करनी थी समरेश ने आर्ट डायरेक्टर कुछवेकर को बुलवाया और सेट में रद्दोबदल करने के आदेश दिये। कछुवेकर ने बातों बातों में रद्दो बदल का कार्यक्रम बतलाया और कहा "दादा दो दिन लगेंगे। दो दिन शूटिंग बन्द रखना पड़ेगा। काम काफी है।" समरेश विचार में पड़ गया। फिर कुछ सोच कर बोला "एक दिन की छुट्टी रख देते हैं। एक हिस्सा तैयार कर दो। दूसरे हिस्से को तैयार करते जाना शूटिंग भी चालू रहेगा।

"लेकिन दादा, काम सुन्दर नही बनेगा। जल्दबाजी में काम का मजा नहीं आयेगा" और कछुवेकर ने अपने सहयोगी

देसाई की ओर देख कर कहा "क्यों देसाई कल कल में सब तैयार हो जायेगा। देसाई मुंह से पेन्सिल की नोक दबा कर सोचने लगा। समरेश ने उसकी ओर देखा और फिर जोर से बोला "अरे बोलो न देसाई हो जायेगा, हो जायेगा। कौन सा पहाड़ खड़ा करना है परसों सेट तैयार मिलना ही चाहिये।' कछुवेकर क्या कहता उसेमजबूरन स्वीकृत देनी ही पड़ी समरेश उठा और रवाना होने के लिये कार को ओर बढ़ा। मेरी कार अजय के लिये घर पर छोड दी गई थी। अजय दिन भर शूटिंग में नहीं आया था। अमरभाई ने कहा "प्रतिभादेवी में आपको घर छोड़ दूंगा। यूं ही घूमते घूमते चलेंगे।" मैंने अमरभाई को हां कर दिया था लेकिन मेरी कार न देख कर समरेश बोल उठा, 'अरे प्रतिभा तुम्हारी कार नहीं आई क्या ? अजय बाबू कहीं काम पर रह गये ?" मैंने उत्तर दिया 'उसे किसी मित्र से मिलना था अत: कार उसी के पास रह गई। काम में उलझ गया है। अत: आया ही नहीं।' समरेश ने कार के पीछे का दरवाजा खोलते कहा 'तो चलो मैं तुम्हारे घर तक छोड़ दूं। मैं अमरभाई की ओर देखने लगी। समरेश समझ गया और बोला "अच्छा तो अमरभाई ने पहले से ही लिफट देने का वादा कर दिया। `खैर ऐसा करें अमरभाई की कार ड्रायवर ले जायेगा हम तो... चले काफी हाउस काफी पीने।' समरेश ने अमरभाई की ओर देखा। अमरभाई को समरेश का काफी हाउस का न्योता वे मौके का लगा था लेकिल उसने झट से रुख बदल कर कहा "समरेश बाबू काफी हाउस से तो बोम्बेली ही ठीक रहेगा। वहीं चलिये।"

"लेकिन बोम्बेली दूर बहुत है अमरभाई। मुझे घर पर जरूरी काम है।" समरेश ने कुछ क्षण बिचार किया और पुन: बोला "अच्छा अब तुम्हारी इच्छा है तो बाम्बोली चलो। कल

का प्रोग्राम भी वहीं तै करगे। और समरेश ने अमरभाई को कार में बैठने का सँकेत किया।

हम तीनों कार मैं बैठ गये। अमरभाई ने दोपहर को मुझे कहा था प्रतिभा देवी कल शूटिंग बन्द रखना पड़ेगा। हम दोनों घूमने के लिये कनेरी गुफाओं की ओर चलेगे। बौद्ध कालीन अत्यन्य पुरानी गुफाए हैं। बहुत आनन्दायक पिकनिक रहेगा।" लेकिन अब कल के प्रोग्राम के लिये समरेश बीच में टपक पड़ा था। उसे टाला किस तरह जाता उसने बात छेड़ते हुए कहा "तो कल छुट्टी है क्या प्रोग्राम तय करें। पार्टी बार्टी का इन्तजाम करे कोई। अमरभाई ने उत्तर दिया" समरेश बाबू इन सात दिनों में रात दिन आपने काम किया है। कुछ ताजा होने के लिये लोनावाला प्रिकनिक का प्रोग्राम बनाइये न? समरेश को लोनावाला का प्रस्ताव ठीक नहीं जंचा। वह बोला "भाई वह तो दूर है। नजदीक का प्रोग्राम बनाओ। फिर लोनाबाला तो दो तीन दिन ठहरने पर मजा आता है। और मेरी ओर देखकर बोला "प्रतिभा तुम भी सलाह दो न।" मैंने समरेश की ओर देखा और फिर अमरभाई की ओर इशारा किया। "अमरभाई आप ही बताइये न।" अमरभाई ने कुछ देर सोचने का बहाना किया और फिर बोला बोरीवली के पास कनेरी गुफाह है। वही चलें तो कैसा रहेगा। "समरेश ने इस प्रस्ताव को पसन्द कर लिया। वह बोला "वाह अमरभाई बहुत सुन्दर। तो कल तै रहा।"

कार बोम्बेली के सामने रुकी। रास्ता बातों ही बातों में कट गया हम लोग नीचे उतरे। बोम्बोली के जोकर नुमा सिपाही ने हमें सलाम किया। हमने हाल में प्रवेश किया—

× × ×

अजय को पिकनिक के लिये राजी करने में काफी समय लग गया वह झूठमूँद सरदर्द का बहाना करके बैठ गया था।

समरेश और अमरभाई गाड़ी लेकर सुबह आठ बजे ही पहुँच गये थे। अजय कहने लगा "आप लोग जाइये। घूमने घामने से मेरा सरदर्द और बढ़ जायगा आपका पिकनिक का मजा किर-किरा हो जायेगा।" मैं जान गई थी कि अजय यह बहाना क्यों बना रहा है। वह नहीं चाहता था कि अमरभाई हमारे साथ रहे। समरेश कुछ समझ नहीं पा रहा था। उसने अजय पर दबाव डालते हुए कहा "अरे अजय बाबू ? आपके बिना तो पिकनिक ही अधूरा रह जायेगा। वहाँ चलिये तो सही। केनेरी गुफाओं को देखते देखते आपका सरदर्द वहीं गायब हो जायेगा और समरेश ने कृष्णा को आवाज दी "कृष्णा भागकर डाक्टर भडौंचा को तो बुला ला। कहना समरेश बुला रहा हैं। कृष्णा भागकर जूते पहन फाटक से बाहर जा रहा था कि अजय ने उसे रोकते हुए कहा "अरे कृष्णा इधर आ तो।" कृष्णा लौट पड़ा। अजय ने समरेश की ओर देख कर पूछा "समरेश डाक्टर की क्या जरूरत है। मैं ऐनासिन लिये लेता हूँ। सर-दर्द ठीक हो जायेगा शायद मामूली जुकाम हो गया है।" मुझे अजय के इस झूंठ पर गुस्सा भी आ रहा था और साथ साथ हँसी भी। समरेश जान गया था कि अजय के कुछ पीड़ा नहीं थी और डाक्टर को बुलाने का कहने पर वह अवश्य पशोपंज में पड़ जायेगा। हुआ भी वही।। अजय ने कृष्णा को आदेश दिया। "अरे जरा देख तो ड्रेसिंग टेबल से ड्राअर में ऐनासिन की गोलियां हैं क्या ?" कृष्णा भागा कमरे में और झट से पाँच—छ: गोलियाँ उठा लाया और अजय के सामने हाथ फैला कर बोला "साब काफी गोलियाँ रखीं हैं। और लाऊँ क्या ?" अजय झुंझला उठा और चिल्लाया "बेवकूफ कहीं का। काफी गोलियाँ रखी हैं तो उसका भोजन करना है क्या ले जा वापिस। कृष्णा कुछ समझ नही पाया। वह हकाबका सा अजय की ओर देखता रहा। हथेली में गोलियों को लिये। अजय ने

एक गोली ली। और पुनः चीखा। देख क्या रहा है उल्लू की तरह। रख कर आ ड्राअर में।" कृष्णा कमरे की ओर लौटने लगा तो समरेश ने उसे रोक कर कहा "ये गोलियाँ मुझे दे दो। रास्ते में शायद जरूरत पड़े और समरेश ने गोलियाँ लेकर अपनी जेब में रख ली। मैंने अजय की ओर देखने के लिए निगाहें उठाई पर वह मुझे ही घूर घूर कर देख रहा था। मैंने दूसरी ओर घूम कर कृष्णा को चाय लाने का आदेश दिया। अजय ने पास रखी पानी की ग्लास ली और गोली मुँह में रखने लगा। लेकिन समरेश ने उसका हाथ पकड़ते हुए उसे रोका और कहा "खाली पेज एनासिन लेना खतरनाक है। अजय बाबू। अभी तो सरदर्द न भी होगा लकिन खाली पेट एनासिन ले लेने पर सब लोगों के लिए सरदर्द पैदा हो जायेगा। और फिर कहीं रास्ते में ही डाक्टर भड़ौंचा की बिरादरी वाले को बुलाने की जरूरत न पड़ जाय। अजय प्रश्नसूचक दृष्टि से समरेश की ओर देखने लगा। समरेश बोलता गया" विश्वास करो भाई खाली पेट एनासिन लेने का मतलब है बैठे बिठाये आफत को न्योता। पहले चाय—दूध बिस्कुट ले लो फिर एना-सिन लेना।" अजय ने एनासिन की गोली ली और उसे एक हाथ में से दूसरे हाथ में लिया और फिर गोली को फर्श पर डाल कर पैर से कुचल दिया। मुझसे यह देखा नहीं गया" यह क्या किया तुमने। एनासिन लोगे नहीं।" और अजय की ओर देखने लगी। लेकिन अजय कुर्सी से उठ खड़ा हुआ और ड्रेसिंग हाल की ओर चल पड़ा। समरेश अजय को समझ नहीं पाया। उसने अजय को आवाज दी "अजय बाबू क्या बात है। सरदर्द ज्यादा हो रहा है। क्या ?" और समरेश उठ कर अजय की ओर चल पड़ा। समरेश को अपनी ओर आता हुआ देख कर अजय रुक गया और बोला "कुछ नहीं समरेश बाबू। घूमते घामते अपने आप सब ठीक हो जायेगा। आप

बैठिये। मैं बाथरूम से लौटकर आता हूँ। और अजय बाथरूम की ओर चल पड़ा। मुझे अजय की इस नाटकीयता पर मन ही मन हँसी आ रही थी मैं उठी और बगीचे की ओर बढ़ चली। अमरभाई काफी देर से मौन बैठा सब कुछ देख रहा था। कृष्णा चाय का ट्रे और नास्ता लेकर आ गया था। मैंने झटपट कुछ मोंगरे के फूल तोड़े और गुलाग के पौधे पर खिले सफेद गुलाब ओर हाथ बढ़ाया। समरेश ने आवाज दी ? "प्रतिभा?" मैं ज्यों ही मुड़ी कि गुलाब की डाली के काँटे अंगुली में चुभ गये। अंगुली से खून बहने लगा। मैंने झट से अंगुली को मुँह में डाल दिया और गुलाब को डाली पर छोड़ झट से लौट पड़ी।

अजय बाथरूम से लौट आया और तौलिये से मुँह पोंछ कर टेबल के पास कुर्सी खीच कर बैठ गया। मैंने झटपट चाय तैयार की। सब चाय के साथ ही नाश्ता करने लगे। समरेश बोला "अब देर नहीं करनी चाहिए। धूप में कनेरी गुफाएँ देखने में आनन्द नहीं आवेगा। फिर उसे जैसे अजय का सर-दर्द याद आ गया। उसने अजय की ओर पकोड़ों की तशतरी बढ़ाते हुए कहा। "ये गरमा गरम पकोड़े लीजिये अजय बाबू सारा सरदर्द दूर हो जायेगा।" अजय झेंप गया था। अपनी झेंप को दूर करने का प्रयास करया हुआ बोला। "सुबह मोसम साफ नहीं हुआ था इसलिये सरदर्द था। अभी बाथरूम में गया और हल्का हो आया। अब तो नाममात्र को भी सरदर्द नहीं रहा समरेश बाबू।" समरेश मुस्कराया और उत्तर देने को तैयार हुआ कि मैंने उसे बीच में ही रोक दिया। और बोलने लगी अजय को कभी कभार ही दर्द होता है। समरेश बाबु। यूँ मामूली दर्द की तो अजय परवाह भी नहीं करता। अजय मेरी ओर देख कर तै करने की कोशिश कर रहा था कि मैं व्यांगात्मक स्वर में कह कर उसका मजाक तो नहीं उड़ा रही हूँ। लेकिन वह कुछ निश्चय कर पाये उससे पहले ही अमर

भाई ने अपना मौन तोड़ते हुए कहा "बम्बई की आबहवा में खराबी यह है कि आदमी कब्जी का शिकार हो जाता है। आप तो पन्द्रह दिन में एक बार जुलाब ले लिया कीजिए अजय बाबू। अजय अमरभाई की ओर देखने लगा। उसे शायद यही वहम हुआ कि—अमरभाई भी व्यंग में ही सब कुछ कह गया है। अजय कुछ कहता उससे पहले समरेश ने एक पकोड़ी उठा कर अजय के मुँह की ओर बढ़ाई और अजय के मुँह में पकोड़ी डालते हुए बोला, "इस कब्जी से डरने की जरूरत नहीं भाई। अभी तो पकौड़ियों पर हाथ साफ करो फिर शाम को देखना कब्जी कैसे दुबदुबा कर भागती है।" अजय का मुँह पकौड़ी से भर कर फूल गया था। समरेश उसको देखकर हँस पड़ा। मुझे भी हँसी आ गई। अमरभाई भी जोरों से हँस पड़ा। अजय मुँह में पकौड़ी चाबता रहा। हँसी ने वातावरण को हल्का कर दिया था··· ।

घुमावदार सड़क की लम्बाई और चौड़ाई को लाँघ कर जब हमारी गाड़ी कनेरी गुफाओं पर पहुँची तो साढ़े नौ बज चुके थे। हमने जल्दी जल्दी कार को एक कोने में पार्क किया। गुफाएं देखने के लिये आगे बड़े। रविवार के कारण काफी भीड़ थी। कहीं बालकों के झुंड खेल रहे थे तो कहीं गुफाओं को देखकर लौटे दम्पति टिफिन खोलकर भोजन की व्यवस्था कर रहे थे। सामने के छोटे से होटल में ग्राहकों की भीड़ लगी थी। कोई समोसे पर झपट रहे थे तो कोई मेनगोला की बोतलें खाली कर रहे थे। हम ज्यों हीं पहलीं बार गुफा की ओर आगे बढ़े और पहली सीढ़ी पर पैर रखे एक लड़के ने छोटी सी एलबम सामने बढ़ाते हुये कहा—"साबह गाईड की जरूरते पड़ेगी कनेरी गुफाओं का यह एलबम है। एक रुपये में सोलह फोटो। एक-एक गुफा के शानदार फोटो है सर" और लड़का हमारे पीछे पीछे चलने लगा। अमरभाई ने लड़के की

ओर देखकर उसे लौट जाने का इशारा करते कहा, "गाइड कीं जरूरत नहीं है भाई। तुम भाग जाओ।" लड़का मेरी ओर देखने लगा और एलबम आगे बढ़ा कर बोला "मेम साहब अभी तक कोई ग्राहक नहीं मिला। यह एलबम ही ले लीजिये। एक रुपया न सही, बारह आने ही दे दीजिए।" मैंने लड़के की ओर से नजर उठाई और सामने की विशाल गुफा की ओर कदम बढ़ाती हुई चल पड़ी

पहली गुफा बड़ी थी। जगह जगह पुरानी खोदी हुई मूर्तियों के भग्नावशेष ही दिखाई दे रहे थे। युगों की हवाओं से गुफाओं की मूर्तियों को लगभग नष्ट ही कर दिया था। कहीं कोई मुस्कराता हुआ चेहरा दिखाई देता तो कहीं नृत्य की मुद्रा में हाथों की अंगुलियां। न जाने किन अनजाने कलाकारों ने पहाड़ की इस ऊँचाई पर आकर इन गुफाओ के निर्माण के लिये अपना जीवन अर्पित किया था। मैं अपने बिचारो में उलझी आगे बड़ रही थी कि वही गाइड बालक सामने आ खड़ा हुआ और बोला "यह चैत्य है बौद्ध मन्दिर। बौद्ध भिक्षु यहां साधन में लगे रहते थे।" मैं मौन रह कर उस बालक की इस व्याख्या को सुनाती रही और चैत्य की परिक्रमा लगा कर दूसरी गुफा की ओर चल पड़ी। नीचे की गुफाओं में अतीत की स्मृति ही शेष रही थी। गुफाओं की भीतों पर कलाकारों की कलाकृतियों नाममात्र को ही दिखाई दे रही थी। लोगों की एक भीड़ पहाड़ी के ऊपर चड़ रही थी में उसी ओर देखने लगी समरेश ने कहा—अभी से थक गई क्या ! अभी तो काफी चढ़ना। पड़ेगा और उसने एक ऊँची पहाड़ी पर जा रहे एकाकी जोड़े की ओर इंगित किया और बोला—वहाँ तक जाना पड़ेगा। आसान काम नही है। मैं रुक कर उसी ओर देखने लगी और थोड़ी देर रुक कर बोली—"आप वहाँ भले ही

जाईये समरेश बाबू मुझसे वहाँ तक नहीं जाया जायेगा। चढ़ते चढ़ते मेरी तो जान निकल जायेगी।" अजय रास्ते भर मौन ही रहा था और अभी भी मौन ही था। उसने अपना मौन भंग करते हुए कहा—"समरेश बाबू हम दोनों चलेंगे वहाँ तक। ऐसी कौन सी ऊँचाई है। ज्यादा से ज्यादा पन्द्रह बीस मिनट लगेंगे। कौन सा दम निकल जायेगा।" समरेश अजय की ओर देखने लगा। अजय ने विजयी वीर की मुद्रा में मेरी ओर देखा। मैंने दूसरी ओर देखने का बहाना करते हुए आगे कदम बढ़ाये।

नीचे की गुफाओं को देखकर हम लोग एक संकड़े रास्ते के ऊपर की गुफाओं की ओर बढ़ने लगे। हमारे आगे भी दर्शकों की एक लम्बी कतार थी। स्त्री पुरुष बालक और बूढ़े। दाईं ओर ऊँचाई पर गुफाएं और बाँईं ओर थी गहरी खाई। खाई की बाँईं ओर फिर गुफाओं की एक लम्बी कतार। हम चढ़ते चढ़ते पहली गुफा से दूसरी गुफा में पहुँचे। धूप और पहाड़ की चढ़ाई सबके चेहरे पर पसीने की बूँदे छा गई थीं। इस गुफा में बड़ा सा हाल था। हम वहीं फर्श पर बैठे गये। न जाने कहाँ से वह गाइड बालक फिर आ गया। मेरे पास आ कर बोला "यह-बौद्ध भिक्षुओं का उपासना गृह है। यहाँ भिक्षु लोग उपासना करते थे और अपने संघ स्थविर से शिक्षण भी प्राप्त करते थे।" उसने हाल में पत्थर की लम्बी लम्बी शिलाओं की ओर इंगित करते हुये कहा,–'ये शिलाएं भिक्षुओं के लिये दिन में टेबल का काम करती थी और रात को खटिया का मैं चढ़ाई चढ़ कर थक गई थी रूमाल निकाल पसीना पोंछने लगी। लड़का न जाने थोड़ी देर के लिए कहाँ गायब हो गया और फिर कपड़े की डोली में पानी भर लाया और बोला "मेम-साहब, पानी पीजिये। हाथ मुँह धो कर थकावट दूर कर लीझिए।" मैंने इस बार बालक के प्रस्ताव को ठुकराया नही।

मैंने दोनों हाथ फैलाये और बालक ने डोली में से पानी डाला। मैंने मुँह धोया। पैर धोये और पानी पिया। लड़का फिर भागा और डोली भर लाया। मुझे आश्चर्य हो रहा था कि इस पहाड़ी की इस ऊँचाई पर वह बालक इतना जल्दी पानी कहाँ से ले आता है। सारे लोग हाथ मुँह धोने और पानी पीने में लगे थे। मैंने उस बालक से पूछा "क्यों भैया, यहाँ पास में नल है क्या, जहाँ से तुम पानी भर लाते हो?" लड़के ने मेरी ओर देखा और फिर जोर से हँसा पुनः मौन रह कर बोला, "यहाँ नल कौन लगायेगा। मेमसाहब ? यहाँ तो भगवान गौतम बुद्ध की कृपा से इस पास की ही गुफा में एक बावड़ी है। भिक्षु लोगों ने पानी की व्यवस्था के लिए यहां बावड़ियाँ खोद रखी थी।' फिर डोली के पानी को अपने पैरों पर गिराता हुआ बोलता गया, "बरफ सा ठन्डा और गँगाजल सा निर्मल पानी है मेमसाब।" मुझे लड़के की भाषा और बोलने के ढंग पर आश्चर्य हो रहा था। कि इतना होशियार बालक यह गाईड का काम क्यों करता है। मेरी उससे पूछने की इच्छा हुई लेकिन मैंने अपनी उत्सुकता को दबा लिया। मैंने रूमाल से पुनः पुनः मुँह पोंछा और उस बालक से पूछा "वह बावड़ी कहाँ है बतलाओ न चलकर।" बालक बढ़ा। मैंने सबसे उठने के लिये कहा लेकिन किसीकी उठने की इच्छा नहीं थी अजय की आँखों पर तो नींद सवार थी। समरेश पैर फैला कर थकान को दूर कर रहा था। अमरभाई की दृष्टि से उपासना गृह की दीवारों में न जाने क्या खोज रही थी। मैंने जोर से चिल्ला कर कहा "गुफाएं देखने आये हो या आराम करने। उठो न जल्दी।" सब धीरे धीरे उठे और चलने को तैयार हुए।

अब बालक हमारा गाईड था। बावड़ी को देख कर हम आगे बढ़े। गर्मी बढ़ गई थी। धूप तेज हो रही थी। ऊपर की पहाड़ी पर चढ़ने के लिये छोटी छोटी अत्यन्त संकड़ी टेढ़ी मेढ़ी

सीढ़ियाँ पार करनी थीं बालक गाईड तो बन्दर की चाल से सीढ़ियों के ऊपर के टीले पर खड़ा हो गया। हमारे लिए सीढ़िया पार करना कठिन हो रहा था एक दूसरे के हाथ पकड़े धीरे धीरे ऊपर चढ़े। सामने ही बड़ी सी गुफा थी। और गुफा के सामने बिशाल मैदान। लड़का भाग कर गुफा को चौकी पर खड़ा हो गया और बोला "इस स्थान पर स्थविर बैठ कर उपदेश देते थे और मैदान में सैकड़ों की संख्या में भिक्षुगण उनके उपदेश को सुनने के लिए उपस्थित होते थे।" लड़के ने कुछ रुक कर चारों ओर दृष्टि दौडाई और फिर एक ओर इशारे करके बोला "यह जो जंगल दिखाई दे रहा है यहाँ पहले छोटे-छोटे गाँव रहते थे। हमारे पूर्वज इन्ही गाँवों में रहते थे। भिक्षु लोग भिक्षा के लिये हमारे गाँवों में आया करते थे। पूर्णिमा के दिन सारे ग्रामीण स्थविर का उपदेश सुनने के लिए इस जगह पर आते थे और इसी मैदान में बैठते थे।" लड़के को बोलते बोलते मानों अतीत के इतिहास की गहराइयों में असंख्यों ग्रामीण दिखाई दे रहे थे। मैं भी लड़के के साथ अतीत के इतिहास को साकार देखने लगी थी अजय गुफा द्वार की शिला पर पैर फैला कर लेट गया था। समरेश भीं काफी थक गया था और थकावट दूर करने का प्रयास कर रहा था। मैंने अमरभाई की ओर देखा लेकिन अमरभाई अपनी जगह पर नहीं था। मैंने इधर उधर देखा। बांई ओर पहाड़ी के कोने पर केमरा हाथ में लिए अमरभाई खटाखट सामने की गुफाओं नारियल के झुंडों, हरियाली से आच्छादित खाइयों के फोटो लिए जा रहा था। मैंने पुकारा "अमरभाई हम सबका फोटो ले लो न ?" अमरभाई ने मानो कुछ सुना ही नही। सामने गहरी खाई से दो पक्षी उड़ कर आसमान की ऊँचाई पर जाने का प्रयास कर रहे थे। अमरभाई के केमरे ने पक्षियों को देखा और झट पट से क्लिक किया अमरभाई केमरे के माध्यम से प्रकृति और इतिहास का अंकन

कर रहा था। गुफा की शिला पर अजय और समरेश पैर फैलाए नींद ले रहे थे अजय तो खुर्राटे भर रहा था। मैंने आवाज लगाई "अजय उठो न ? समरेश उठो तो। यहाँ सोने आये हो या देखने के लिये।" लेकिन दोनों ने पलक तक नहीं उठाई। सिर के पीछे भुजाओं बांधे दोनों आरा से नींद लेते रहे।

बालक गाईड ने मेरी ओर देखा और फिर अजय समरेश की ओर। कुछ देर मौन रह कर बोला "बाबू लोग तो भूतकाल को सपनो में देख रहे हैं मेमसाब। अब इन्हें सोने ही दीजिए आप मेरे साथ चलिए मैं आपको भिक्षुणी की गुफा दिखा लाऊँ।" बालक ने दूर पहाड़ी के एक कोने पर स्थित एक गुफा की ओर इशारा किया। सारी गुफाओं से अलग एकाकी गुफा। बालक ने मेरी ओर पुनः देखा और बोला "बड़ी दिलचस्प कथा है उस गुफा की और उस भिक्षुणी की। चलिए पन्द्रह मिनट भी नहीं लगेंगे अभी लौट आयेंगे।" मैंने पुनः अजय की ओर पुकारा "अजय उठो न।" पर अजय जोर से खुर्राटे भर रहा था। मैंने सोचा चलो अमरभाई को ही बुला लूँ। लेकिन अमरभाई अपनी जगह पर नहीं था। वहीं किसी दूसरी गुफा को देखने या पहाड़ी क्षेत्र के किसी दूसरे कोण से फोटो लेने चल पड़ा था। मैं बालक गाईड के पीछे पाछे चल पड़ी।

बालक गाईड कहता जा रहा था इस गुफा में रोज रात को भिक्षु के आने में विलम्ब होता। सुनैत्रा देर तक उसकी प्रतीक्षा करती संघाराम के भिक्षुओं में अन्दर ही अन्दर दोनों के प्रेम मिलन के सम्बन्ध में चर्चा होती लेकिन कभी किसी ने उन दोनों को देखा नहीं था और न किसी को पता था कि वे किस गुफा में मिलते हैं। प्रेम मिलन के सम्बन्ध में आम भिक्षु भिक्षुणियाँ केवल अटकल वाजियाँ ही लगाते। शरदकालीन पूर्णिमा की रात्रि थी। प्रवचन के मैदान में संघाराम के सारे

भिक्षु, भिक्षुणियाँ प्रवचन सुनने के लिए। इकट्ठे स्थविर धमा-पद के विभिन्न पदों की व्याख्या करते जा जा रहे थे। एक कोने में अभिज्ञान भिक्षु खड़ा था। उसकी निगाह दूर भिक्षु-णियों के दल में खड़ी सुनेत्रा पर पड़ी। दोनों की नजरें आपस में टकरा गईं। मूक भाषा में ही बातचीत हो गई। दोनों के कदम बराबर इस गुफा की ओर उठ गये।" लड़का कहता कहता रुक गया। मैं कथा में डूब रही थी। मुझे ऐसा लगा। सुनेत्रा के रूप में मैं ही उन पहाड़ी सकड़े रास्तो को पार करती इस गुफा में आ गई थी और किसी के आने की राह देख रही थी पर अभिज्ञानभिक्षु के स्थान पर कौन हो सकता है। किसी का स्पष्ट चेहरा सामने नहीं आ रहा था। अजय नहीं-नहीं, उससे प्रेम मिलन कैसा। समरेश नहीं वह भी नहीं। वह तो दार्शनिक है अपने आप में ही भूला। अपनी प्रसिद्धि के जाल में उलझा। तो क्या अमरभाई। पर वह कहाँ है। जंगलों के, गुफाओं के, पक्षियों के फोटो ले रहा होगा। बालक गाईड ने आत्मचिन्तन की धारा में बाधा डाली और बोलने लगा, "मेम-साब प्रेम किसी प्रकार के बन्धन नही मानता उसकी अपनी गति है, अपने सिद्धान्त हैं। सुनेत्रा गुफा में प्रविष्ट हुई और अभि-ज्ञानभिक्षु ने पीछे से पहुँचकर उसे अपने बाहुपाश में आबद्ध कर लिया। लेकिन प्रवचन करते स्थविर को कुछ शंका हो गई थी। उन्होंने शीघ्र ही प्रवचन की पूर्णाहुति की और चल पड़े गुफा की ओर। गुफा में सुनेत्रा और अभिज्ञानभिक्षु का प्रेमालाप चल रहा था। अभिज्ञानभिक्षु कह रहा था, "सुनैत्रा छोड़ो इन काषाय वस्त्रों को चलो अपने नगर। राजमहल तुम्हारे स्वागत को आतुर है। क्यों अपने आप को अब धोखा दे रही हो।" सुनैत्रा ने उत्तर दिया "लेकिन अभिज्ञान अब यह कैसे संभव हो सकता है। काषाय पहन कर पुनः राजमहलों में कैसे प्रवेश करूं।" अभिज्ञान ने उत्तर दिया, "मेरे घुड़सवार इस जंगल में

आ गये हैं। मैं तुम्हें जबरदस्ती ले जाऊंगा। अपनी बाहों में उठाकर ले जाऊंगा।" सुनैत्रा मौन सिसकियां भरती रही। गुफा के बाहर खड़े स्थविर ने दोनों को रोकने का विचार किया लेकिन उनकी अन्तरआत्मा ने कहा, "ऐसा मत करो। प्रेम के पुनीत बन्धन को स्थाई रहने दो। खलनायक बन कर पाप मत करो।" स्थविर अंधेरे कोने में खड़े हो गये। अभिज्ञान भिक्षु ने सुनैत्रा को बाहों में उठाया। वह गुफा के बाहर आया और अंधकार में विलीन हो गया। स्थविर ने दोनों को पहचान लिया था आँध्र का राजकुमार अभिज्ञानबन्धु और उत्कल की राजकुमारी सुनैत्रा। न जाने दोनों इस संघारा में कैसे प्रवेश पा गये थे। और क्यों वे वहाँ आये थे। स्थविर सोचते जा रहे थे। दूर से घोड़ों की टापें सुनाई दीं। स्थविर ने उस ओर देखा और दोनों को आशीर्वाद देकर अपनी शयनगुहा की ओर चल पड़े।" बालक गाइड मौन रह गया। मैं सुनैत्रा के रूप में घोड़े पर बैठी अभिज्ञानबन्धु के साथ वन्य पथ पार करती मानो आन्ध्र प्रदेश की ओर बढ़ रही थी। किसी के स्पर्श ने मुझे जाग्रत कर दिया। मैं घूमी तो सामने अमरभाई। एक बिजली की रेखा मानों मेरे मास्तिष्क में कौंध गई। अभिज्ञान बन्धु और अमरभाई। हाँ—हाँ, अमरभाई। अमरभाई ने मुझे अपने बाहुपाश में बांध लिया और अपने अधर मेरे अधरों की ओर बढ़ा दिये। मैंने अपने आप को अमरभाई के हाथों में समर्पित कर दिया था। अमरभाई मुझे न जाने कितनी देर बाहों में थामे रहा। बाहर कोई सीटी पर विचित्र सी धुन बजा रहा था मेरी तन्द्रा टूटी मैं अमरभाई के बाहुपाश से दूर हो गई।

बालक गाईड गुफा के बाहर तितलियों के पीछे भाग रहा था और मुँह से सीटी बजाता जा रहा था। हम दोनों गुफा के बाहर निकले और मौन अपनी राह पर चल पड़े।

मैं स्टूडियो जाने की तैयारी कर रही थी कि हमारा प्रोडक्शन मैनेजर समरेश का संदेश लेकर आ पहुँचा। मैं समरेश के संदेश को पढ़ने लगी लिखा था:—

प्रिय प्रतिभा देवी !

हम (अमरभाई, सेठ गोदीवाला और मैं) आज किसी आवश्यक काम से महाबलेश्वर जा रहे हैं। हम वहाँ चार दिन ठहरेंगे। तब तक के लिऐ शूटिंग स्थगित रखा है। कल एकाएक यह कार्यक्रम बन बन गया अत: जल्दी सूचना न दे सका। विशेष लौटने पर।

तुम्हारा
समरेश

मैं कुछ भी समझ नहीं पाई। एकाएक ऐसा क्या काम आ गया कि शूटिंग स्थगित कर ये लोग महाबलेश्वर चले गये। मैं मोढ़ा खींच कर बगीचे में बैठ गई। अजय अभी भी सो रहा था। पलंग पर पड़े २ उसने करवट ली फिर आँखे भी खोली लेकिन मुझे देखकर भी मुँह फिरा लिया था। शूटिंग तो है नहीं मैं अकेली क्या करूं। कुछ काम सूझ नहीं रहा था। कल से ही अजय नाराज सा दिखाई दे रहा था। कनेरी गुफाओं से लौटने के बाद उसने कोई बात नही की। लगतार मौन ही बैठा रहा। बगीचे में अकेले में मन नहीं लग रहा था। उठी और समुद्र तट पर घूमने के लिये चल पड़ी।

मैं धीरे कदम उठाती चली जा रही थी। लहरें पूरे वेग से दौड़ी आती और तट की बालू रेत से टकरा कर बिखर जाती और पुन: सिमट कर समुद्र की गोद में लौट जाती। जोरों कीं हवा चल रही थी। हवा की सनसनाहट और लहरों की

गर्जन वातावरण में अद्‌भुत ध्वनियों का समन्वय प्रस्तुत कर रही थी। न जाने क्यों मेरे मन में यह भावना जाग्रत हुई– "समुद्र तट पर घूमने में इतना आनन्द नहीं है। चल चल समुद्र के अन्दर चल। लहरों के थपेड़ों का आनन्द ले। मैंने तट पर चप्पल रख दिये और धीरे धीरे लपक कर आते हुए लहरों के झुण्ड की ओर बढ़ चली। समुद्र का शीतल जल लगातार पैरों को धो रहा था। मैं आगे बढ़ती गई कि एक लहर अपने पूरे वेग से आई। मैं लहर के साथ ही कूदी और लहर के हिडोलों में झूलने लगी। लहर का वेग कम हो गया और लहर धीरे-धीरे समुद्र की गोद में लोट चली। मेरे कपड़े पानी से भींग गए थे। लेकिन ठण्डे पानी में अद्‌भुत आनन्द महसूस हो रहा था। मैं धीरे-धीरे आगे कदम बढ़ाती रही और वेगवती लहरों से खेलने का आनन्द लेती रही। मुझे यह मालूम नहीं था कि यह समुद्र का पूर का समय है और इस समय समुद्र में स्नान करना खतरे से खाली नहीं है। मैं तो अपने एकाकीपन को दूर करने के लिए ही समुद्र तट पर घूमने आई थी। समुद्र तट एकदम सूना था। बहुत दूर एक मछुआ तट की रेत पर जाल सुखाता दिखाई पड़ा। मैं घूम कर अपने बंगले की ओर देखने लगी। नारियल के पेड़ों से घिरा हमारा बंगला बड़ा सुन्दर दिखाई दे रहा था। मैंने घूमकर पुनः विराट सागर की उत्ताल तरंगों के नर्तन को देखना प्रारम्भ किया। एक लहर बड़े वेग से आई। मैं लहर के साथ ठीक ढंग से कूद नहीं सकी। आँखों में, मुँह में साबर का खारा पानी भर गया। आँखे जलने लगी। मैं आँखे मलने लगी तभी मेरे कानों में अजय की आवाज सुनाई दी, "प्रतिभा लौट आओ।" आगे मत बढ़ो, समुद्र पूर में है। खतरा है। अजय की आवाज सुनते ही मुझे न मालूम क्या हुआ–मैं समुद्र

में आगे बढ़ने लगी। आंखों के सामने अन्धेरा छा गया। एक विशाल लहर ने मुझे अपने हाथों में लेकर जोर से तट की ओर फेंक दिया। मैं अपने आपको सम्हालने का प्रयत्न करने लगी लेकिन सम्हाल पाती उससे पहले ही ता लहर का वेग मुझे पुनः घसीट कर समुद्र में ले गया। पुनः एक राक्षासाकार लहर वायु वेग से उमड़ती हुई आती दिखायी दी। मैं लहरों के जाल में फंस रही थी। अब मुझे खतरे का असली रूप दिखाई दिया। लहरों की गिरफ्तार से निकलना अब मेरे बल की बात नहीं रही थी। अजय की आवाज सुनाई दे रही थी "प्रतिभा लौट आओ"। लेकिन लौटना मरे बस में नहीं था। मैं तो लहरों की दया पर थी। राक्षासाकार लहर ने मुझे अपने विशाल हाथों में उठाया और आगे बढ़ाया। शायद मुझे निगल जाने का ही उसका इरादा था। लहर तट की ओर बढ़ती जा रही थी। तट के निकट आकर लहर ने मुझे नारियल के फल की तरह जोर से गीली जमीन पर फेंक दिया। मैं सम्हल कर उठ सकूं इतनी ताकत मरे अंगों में नहीं थी। मैं धीरे-धीरे अपनी चेतना खोती जा रही थी। मुझे ऐसा लगा कि पुनः कोई प्रचण्ड लहर मुझे खींच कर लीलने के लिए समुद्रतट से लिए जा रही है। मैं छट-पटा कर मुक्त होने का प्रयत्न करना चाहती हूँ लेकिन सारे अंग अशक्त हो गये। मैं पूर्णतः अचेत हो गई थी।

जब मैंने आंखें खोली तो सामने अजय को बैठा देखा। अजय भयातुर नजरों से मेरी ओर देख रहा था। मैंने बोलने का प्रयत्न किया लेकिन आवाज होठों तक आकर रुक गई। अजय ने धीरे से कहा, "आराम करो प्रतिभा।" डाक्टर ने कहा है—आराम करने के बाद तबियत ठीक हो जायेगी। मैंने उठने का प्रयत्न किया लेकिन अजय ने मुझे उठने नहीं दिया। वह

धीरे-धीरे मेरा सर दबाता रहा। अब मुझे सारी स्थिति समझ में आई। समुद्र तट पर से अजय ही मुझे उठाकर बगले पर ले आया था। एक क्षण में मेरी आंखों के सामने उस राक्षसाकार लहर का रूप घूम गया। मेरे अंग-अग कांप उठे। मैं भयातुर हो उठ खड़ी हुई। अजय शायद मेरी इस स्थिति को समझ गया। उसने झटपट मुझ अपनी बांहों में थाम लिया और मेरी कमर को सहलाने लगा। मुझे महसूस हुआ कि मैं अजय की गोद में सुरक्षित हूँ। लहरों का क्रोध मुझे भयभीत करके मेरा कुछ भी बिगाड़ नहीं सकता। अजय मरी कमर को सहलाता मेरे बालों में अंगुलियां फिराने लगा था। मैं सुस्त उसकी गोद में पड़ी रही। वह क ने लगा, "प्रतिभा, तुम इस प्रकार मुझे अकेला छोड़कर कभी मत जाना। मैं तुम्हारे बिना जी नहीं सकूंगा।" और जैसे उसका गला भर आया था। वह बोलते बोलते रुक गया था। मैंने प्रयास करके अपना सर उठाया और अजय के चेहरे की ओर देखा। अजय की आखें भर आई थीं उसने पुन: मुझे अपनी गोदी में भर लिया और कहने लगा, "जैसे ही तुम समुद्र की ओर चली मुझे कुछ शंका हो गई लेकिन मैं पलंग पर फिर भी पड़ा ही रहा। काफी देर पड़े रहने के बाद मन के एक कोने में से पुकार कर किसी ने कहा, "मूर्ख यहाँ पड़ा क्या कर रहा है। जल्दी भाग अन्यथा प्रतिभा को हमशा के लिए खो देगा।" मैं घबड़ा गया। मुझे निश्चय हो गया था कि तुम मुझ से नाराज होकर चली गई थी। और मुझे हमेशा के लिए अकेला छोड़े जा रही थी। मैं भागा समुद्र तट की ओर लेकिन तुम लहरों की गिरफ्त में आ चुकी थी। मैं समुद्र में बढ़ने लगा लेकिन अचानक एक लहर ने तुमको मेरे हाथों में लाकर छोड़ा। मुझे ऐसा लगा मानों इस लहर को मुझसे सहानुभूति थी और मेरी चीज को मुझे ही लौटाने के लिए वह चिंतित थी। मैंने

विराट सागर देवता को मन ही मन नमस्कार किया और अपने आपको भाग्यवान मानता हुआ तुम्हें अपनी बाहों में उठाये हुए घर लौटा।" मैंने सिर उठा कर पुन: अजय की ओर देखने का प्रयास किया अजय ने सोचा मैं पलंग पर सोना चाहती हूँ। उसने मुझे अपनी गोद से अलग किया और पलंग पर सुला दिया, फिर मेरी आँखों में आंखें डालकर कहने लगा, "भागा भागा डाक्टर भड़ौंचा को बुला लाया। न जाने क्या हुआ, न तो आज ड्रायवर ही आया और न कृष्णा ही। डाक्टर बाहर जाने की तैयारी कर रहा था। बिचारा भागा भागा आया और तुम्हें इंजेक्शन दिया। कह गया—"अब कोई चिंता की बात नहीं हैं। एक घण्टे में सब ठीक हो जायेगा।" अजय कहता कहता रुक गया। बाहर फाटक खुलने की आवाज हुई। किसी ने घण्टी बजाई। अजय ने उठकर दरवाजा खोला। सामने कृष्णा खड़ा था। अजय उस पर बरसा, "रात से कहां गायब थे? अब मुंह दिखा रहे हो।" कृष्णा की रोनी सी सूरत से ऐसा मालूम हो रहा था मानों वह किसी गहरी पीड़ा से दुखी है और आज काम से छुट्टी चाहता है। अजय का ध्यान उसके चेहरे की ओर अवश्य गया लेकिन उसे तो कृष्णा की अनुपस्थिति पर क्रोध आ रहा था। वह चिल्लाया, "बोलता क्यों नहीं। ऐसा खड़ा है मानों कोई मर गया हो।" अब कृष्णा की आंखों से आँसू बरस पड़े वह रोता रोता बोला, "साहब मेरी बहन मर गई। उसे जला कर लौटा हूँ।" अजय का क्रोध न जाने कहां गायब हो गया। वह कृष्णा की ओर देख कर मेरी ओर देखता रहा। मानों वह मन ही मन कह रहा हो, "हे प्रभू क्या तूने कृष्णा की बहन के बदले में मेरी प्रतिभा को मुझे लौटाया है।" लेकिन मुझे अपने विचार पर मन ही मन हंसी आ गई। कृष्णा

की बहन और मेरा क्या सम्बन्ध। किसी एक की मृत्यु से दूसरे के जीवन का क्या सम्बन्ध। अजय के मन में इस प्रकार का विचार आयेगा ही क्यों। मैंने कृष्णा की दयनीय सूरत की ओर देखा। अजय ने पुनः मेरी ओर देखा और अपनी जेब से दस रुपये का नोट निकाल कर कृष्णा को देते हुए कहा, "जाओ अपनी बहन का ठीक से क्रिया कर्म करो।" कृष्णा ने हमें नमस्कार किया और लौट पड़ा।

अब अजय ने मेरी और देखा और कहने लगा, "प्रतिभा तुमने देखा। जीवन में कैसी विचित्रिताएँ एक साथ घट जाती हैं। तुम सागर की लहरों के विकराल जबड़ों से बच निकली और इस बिचारे कृष्णा की बहन चल बसी। एक ही दिन दो घटनाएँ एक दूसरे से ठीक अलग-अलग। भगवान की अद्भुत लीला को मनुष्य समझने में असमर्थ है।" और अजय ने आँखे बन्द करके अदृश्य प्रभू को नतमस्तक हो नमस्कार किया। मैं अजय के श्रद्धानत रूप को देखती ही रही।

चौथे दिन सुबह बगीचे में अजय और मैं चाय पी रहे थे। अचानक कार की आवाज से हम चौंक पड़े। समरेश की कार फाटक के सामने आकर रुकी और समरेश के साथ कोई आदमी नीचे उतरा। चाल ढाल से परिचित सा दिखाई दे रहा था लेकिन समरेश की ओट में होने से उसका चेहरा दिखाई नहीं दे रहा था। अजय फाटक की ओर बढ़ा। मैंने कृष्णा को आवाज दी, "कृष्णा कुर्सियां ले आओ।" और फिर चाय की जरूरत महसूस करके खुद ही रसोई घर की ओर चल पड़ी। पीछे से समरेश ने आवाज दी, "अरे चाय तो आ जायेगी। तुम यहाँ आओ तो सही। बड़ी महत्वपूर्ण खबर है।" मै बरर्शन पर चाय बनाने लगी। चाय की ट्रे नौकर के हाथ में थमा कर लौटी तो

नवागंतुक पर नजर पड़ी। नवागंतुक नहीं वह तो अमरभाई था। दाड़ी मूंछे सफाचट। एकदम नया रूप। एकदम पहचाना भी न जा सका। मैं कुछ कहने को तैयार हुई कि गत दिनों की घटनाएं क्षण भर में दिमाग में घूम गई। मुझे अमरभाई और अजय के सामने जाने में भय महसूस होने लगा। मैं पुनः कमरे की ओर लौट पड़ी। अजय ने पुकारा, "अरी प्रतिभा बडी अच्छी खबर है, जल्दी आओ न।" मैंने बहाना बनाया, "कुछ नाश्ता ले आती हूँ।" मैं सीधी कमरे में आईने के सामने गई सोचा—"चेहरे पर किसी प्रकार का परिवर्तन तो नहीं आया। मैं निस्संकोच उनके सामने जा तो सकती हूँ।" काफी देर आईने में अपने आपको देखती रही और उनके सामने जाने के लिए साहस बटोरती रही। बाहर अजय ने पुनः पुकारा, "प्रतिभा नाश्ता तो कृष्णा ले आयेगा। तुम क्यों इसके प्रपंच में पड़ती हो। यहां आओ न। समरेश बाबू कैसे कैसे नये निर्णय करके लौटे हैं।" पीछे पीछे समरेश ने भी आवाज दी, "हाँ प्रतिभा तुम सुनोगे तो......? और मैंने समरेश की आवाज को बीच में ही रोकते हुए उत्तर दिया, "अभी आई। अभी आई।"

मैं तश्तरियों में नाश्ता सजा कर लौटी तो सबकी उत्सुक नजरें मुझे ही देख रही थी। समरेश ने मेरी ओर देख कर कहा, "चारों दिन में ही तुम दुबली हो गई। क्यों तबियत खराब है क्या? मैं कोई उत्तर दूं उससे पहले ही अजय बोल उठा, मामूली सी तबियत खराब हुई थी। पर मैं तो उससे भी घबड़ा गया था।" मुझे तसल्ली हुई जो अजय ने समुद्र की दुर्घटना को नहीं कहा था। मैं कुर्सी खींचकर बैठ गई और कप से चाय उड़ेलने लगी।

समरेश कहने लगा. "मामूली से ही तो ज्यादा खराबी होती है। तबियत का पूरा पूरा ध्यान रखना प्रतिभा।" मैं मौन ही रही। अजय अमर भाई की ओर देख रहा था। मैंने कनखियों से अजय की ओर देखा। अमर भाई के प्रति अजय की नजरों में किसी प्रकार की कटुभावना नहीं थी। उसने अमरभाई की पीठ पर हाथ रखकर कहा, "अब तो अमरभाई नहीं अमरकुमार कहना पड़ेगा, क्यों समरेश बाबू ?"

मैं अजय की बात का अर्थ समझ नहीं पाई। मैंने चाय का प्याला समरेश के सामने रखते हुए समरेश की ओर प्रश्न-सूचक दृष्टि से देखा। समरेश कुछ उत्तर देने को तैयार हुआ कि अन्दर कमरे में किसी सामान के गिरने की आवाज हुई। मैं झटपट उठी और कमरे में पहुँच गई। बिल्ली ने कूद कर कुछ बरतन गिरा दिये थे। मैंने नौकर को आवाज दी। वह भागता हुआ आया और बरतनों को उठाने लगा। मैं पुनः आईने की ओर देखने लगी और सोचने लगी—"अजय ने समुद्र की घटना का उल्लेख न करके समझदारी की। अब तो अमरभाई के प्रति भी उसके चेहरे पर दुर्भावना दिखाई नहीं देती। लेकिन यह अमर भाई और अमरकुमार क्या है।" मैं आगे कुछ सोच नहीं सकी। अजय ने पुनः आवाज दी, "प्रतिभा अन्दर क्या कर रही हो।" मैंने अपने बालों को ठीक किया और पुनः आईने में देख अपने बारे में आश्वस्त हो कमरे के बाहर निकली।

जैसे ही कुर्सी खींचकर बैठी अजय ने व्यग्रता से मेरी ओर देख कर कहा, "तुमने कितना समय लगा दिया। अरे अमर भाई को...नहीं, नहीं अमरकुमार को बधाई दो न।"

"बधाई ? कैसी बधाई ? ? फिर अमर भाई और अमरकुमार यह क्या है ?" मैंने समरेश की ओर देख कर पूछा। समरेश मौन ही रहा। उत्तर अजय ने ही दिया, "हमारे अमर-

भाई अब अमरकुमार हो गये है "स्वर-संगम" के प्रमुख नायक, हीरो। समझी। अब तो बधाई दोगी या अब भी नहीं।" अजय ने अपनी बात पूरी कर दी लेकिन मैं फिर भी कुछ समझ नहीं सकी। मैंने समरेश की ओर देखा और पूछने के लिए होंठ हिलाये ही थे कि समरेश बोल उठा, "बात यह है कि प्रतिभा कि अमरभाई अब हमारे नये चित्र के हीरो हैं। महाबलेश्वर हम यही तय करने गये थे।" मैंने समरेश को बीच में ही रोककर पूछा, "लेकिन हमारे हीरो विनयकुमार का क्या हुआ।" समरेश ने उत्तर दिया, 'अरे विनय का काम तो समाप्त हो गया। विनय की तो मृत्यु हो जाती है। और हीरोइन इस सदमें से पागल सी होकर आत्महत्या करने के लिए तालाब में कूद पड़ती है। तब नया नायक उसे बचा लेता है। यहीं से नये नायक का काम शुरू होता है। मैंने पुन: बीच में बात काटी— "तो अमरभाई इस नायक का काम करेंगे क्या ?"

"यही बात बतलाने के लिए तो मैं आया हूँ। अमरभाई का नया नाम है अमर कुमार। महाबलेश्वर में ही लोकेशन शूटिंग का कार्यक्रम रखा है। विनयकुमार की मृत्यु का सीन तो कभी भी शूट कर लेंगे।" समरेश की बात अब स्पष्ट हुई। मैंने नजर उठाई और अमरभाई की ओर देखा। अमरभाई की आँखों में प्रसन्नता नाच रही थी। मानो आंखों की भाषा में ही अमर-भाई कह रहा हो, अब सही अर्थ में तुम्हारे साथ अपना रोल अदा कर सकूंगा प्रतिभा।" मैंने अमर को देखकर नजरें नीची कर लीं और अमर भाई को बधाई देने के लिए हाथ आगे बढ़ा दिया। मेरे मुंह से धीरे से निकला—"बधाई, अमरभाई।" मेरा मन अजय की ओर था। अजय न जाने क्या सोच रहा होगा। उसने मुझे मौत के मुंह से जाने से बचाया और उसी को धोखा दिये जा रही हूँ। लेकिन आज वह प्रसन्नता की मुद्रा में

था। उसने मेरी कमर पर हाथ रखकर मुझे चौंका कर कहा, "अब अमरभाई नहीं अमरकुमार कहो इन्हें। समझी प्रतिभा।" अमरभाई का मौन टूटा। उसने मुझे धन्यवाद देते हुए कहा, "मुझे अमर भाई नहीं. अमरकुमार भी नहीं केवल अमर ही कहो न सब लोग। केवल अमर ही उपयुक्त नहीं रहेगा?" समरेश को जैसे अमर नाम बड़ा पसन्द आया। उसने जोर से हँसकर कहा, "बहुत ठीक। बहुत ठीक। अमर ही सबसे सुन्दर नाम है। हम अब से अमर ही कह कर पुकारेगें अमरभाई को।" अजय ने हंसते हुए समरेश को टोका, "अरे समरेश बाबू, आपने फिर अमरभाई क्यों कहा। कहिए अमर, अमर?" समरेश ने कान पकड़ कर गलती महसूस करने का अभिनय करते कहा, बड़ी भूल हो गई। अमर कुमार-अमर-हमारे अमर? ? समरेश के अभिनय से सबको हंसी आ गई। बगीचे का वातावरण हमारी मुक्त हंसी से गूंज उठा। पेड़ों पर बैठे पक्षीगण हमारी हसी को सुनकर पंख फड़फड़ा कर चारों दिशाओं में विभिन्न प्रकार की आवाजें करते उड़ चले। सारे वातावरण में हंसी और आनन्द व्याप्त हो गया।

महाबलेश्वर में आउटडोर शूटिंग की पूरी तैयारियां हो चुकी थीं। एक तालाब के किनारे शूटिंग की व्यवस्था की गई थी। सीन इस प्रकार था। अपने प्रेमी की मृत्यु के पश्चात नायिका बहुत दुखी होती है और भटकती भटकती जंगल में पहुँच जाती है। सामने तालाब देख कर वह ठहर जाती है। विशाल तालाब। नायिका को महसूस होता है कि प्रेमी के बिना जीने में कोई आनन्द नहीं है। जीकर क्या किया जाय। वह तालाब में डूबकर प्राण दे देन का निश्चय करती हैं और तालाब की ओर कदम बढ़ाती है। जंगल में कहीं घोड़े की टापें सुनाई पड़ती

हैं। नायिका ठिठक कर ठहर जाती है। जंगल में किसी के गीत की कड़ियाँ हवा में तैरती हैं :—

बढ़े चलो-बढ़े चलो ए नोजवां
जिन्दगी का अब रुके न कारवाँ

नायिका रुककर देखने लगती है। एक घुड़सवार फौजी लिबास में गाता हुआ घोड़े को भगाता चला जा रहा है। नायिका पुनः तालाब के विस्तार की ओर देखती है और आगे कदम उठाती है। गीत की अगली पंक्तियां सुनाई देती हैं :—

जगलों से मंजिलों की राह जान लो
गुनगुनाती वादियों से गीत मांगलो

नायिका सोचती है "तो क्या तालाब में डूब मरूँ ?" दिमाग में संघर्ष शुरू हो जाता है। अन्त में डूबने का निश्चय कर वह पानी में पैर रखती है। लेकिन वहाँ तो गहराई नहीं है। वह चलकर दूसरी जगह पहुँचती है। वहाँ पहाड़ी के नीचे खड्डे की गहराई है। वह पुनः देखने लगती है। घोड़े के पैरों की टांपे उसकी ओर आती सुनाई देती हैं। नायिका मुड़कर देखती है और फिर लपक कर नीचे तालाब की गहराई में कूद पड़ती है। घुड़सवार फौजी पानी में छप की आवाज सुनता है। उसे नायिका को तालाब के किनारे अकेला देख संदेह तो हो ही गया था। वह दूर जाकर रुक गया था और पुनः तालाब की ओर घोड़े को दौड़ाता आया। नायिका को पानी में डूबते उतराते देख वह झटपट घोड़े से उतर कर तालाब में कूद पड़ता है। नायिका के नाक-मुंह में पानी भर आता है। वह बेहोश हो जाती है। फौजी घुड़-सवार उसे बांहों में थाम कर तैरता हुआ किनारे आ जाता है।

पूरे सीने को शूट करने में दिन भर लग गया। फौजी

घुड़सवार के रूप में तालाब में कूद कर अमर ने मुझे बाहों में थाम कर तैरना शुरू किया तो सारे अङ्गों में सिरहन दौड़ गई। अमर के हाथ मेरी कमर में थे। मेरा हृदय जोरों से धड़क रहा था। दूर तालाब में कुछ लोग नाव में बैठे हुए है। किसी दुर्घटना के बचाव के लिए ही नाव की व्यवस्था की गई थी। लेकिन नाव की आवश्यकता नहीं पड़ी। किनारे पर अमर ने मुझे अपने सीने से चिपका लिया और दोनों हाथों से उठा कर तालाब के बाहर लाया और एक पेड़ की छाया में सुला कर मेरे नाक-मुँह से पानी निकालने लगा। इस प्रकार अमर ने न जाने कितनी बार मेरे सिर, ठुड्डी, गालों को छुआ। मेरे मन में न जाने क्या हो रहा था। मेरा सारा शरीर भीग गया था और ठडी हवा के लगने से अङ्गों में कंपकपी शुरू हो गई थी।

केमरा किनारे पर था। केमरामैन, समरेश और यूनिट के अन्य लोग बड़ी एकाग्रता से मेरा अभिनय देख रहे थे। कंपकंपी से अभिनय में पूर्णतः वास्तविकता आ गई थी। शाट समाप्त हुआ। समरेश की आवाज आई...और सारा वायु मंडल कट ऽऽऽऽऽ से भर गया।

सूर्य अस्त हो रहा था। दिन भर के काम से निवृत्त हो हम अपनी कार में बैठ अपने होटल को लौट रहे थे। अजय और में पीछे की सीट पर बैठे थे। ड्रायवर गाडी चला रहा था। मैं अमर और अजय के बीच मानसिक तौर से हिचकोले खा रही थी। अजय ने मेरी ओर देख कर कहा, आज का तुम्हारा अभिनय सचमुच श्रेष्ठ कोटि का था। ''मैंने अजय की ओर देखा और धीरे से उससे सट कर बैठ गई। अजय ने मेरे गले में हाथ डाल दिया। गाड़ी होटल के फाटक पर पहुँच गई थी।

चित्र का शटिंग सम्पूर्ण हो गया। अब एडिटिंग का काम बड़ी तेजी से हो रहा था। चित्र की रिलीज करने की तिथि तय कर दी गई थी अतः समरेश, अमर और यूनिट के अन्य लोग दिन रात काम में लगे रहते। शूटिंग हो जाने के बाद मेरे लिये कोई काम नहीं रह गया था। दिन गुजरने कठिन हो रहे थे। अजय के व्यवहार में काफी परिवर्तन आने लगा था। जो अजय कभी कभी ही शराब पीता था अब हमेशा शाम को शराब पी लेता। एक मामूली सी महिला कलाकार बेला मांकड़ से भी उसने मेल जोल बढ़ाना शुरू कर दिया था। एक दिन शाम को मैं जुहू के समुद्र तट पर घूमने निकली तो क्या देखती हूँ कि अजय बेला के गले में हाथ डाले मस्ती में घूमता चला जा रहा है। मुझे बेला और अजय की इस बेशर्मी पर बड़ा गुस्सा आया और मन में सोचा कि इस बेशर्म बेला को कस कर दो चार चपत जड़ दूँ। लेकिन मैं अपने क्रोध को मन ही मन दबा गई। जल्दी जल्दी में बंगले पर लौट आई और पलंग पर पड़ गई। काफी रात बीतने पर अजय लौटा। वह न जाने क्या बड़बड़ा रहा था। बड़बड़ाते हुए उसने मुझे दो तीन बार पुकारा लेकिन मैंने कोई उत्तर नहीं दिया। उसने कपड़े उतारे और एक आराम कुर्सी पर पड़ गया।

"स्वर संगम" के प्रदर्शन की जोरों से तैयारियाँ हो रही थी। सारे समाचार पत्रों में पूरे पूरे पृष्ठ के विज्ञापन आ रहे थे। विज्ञापन में मेरा और अमर का चित्र, साथ ही बड़े बड़े अक्षरों में दिग्दर्शक समरेश का नाम। पूरे फिल्म क्षेत्र में "स्वर सगम" की चर्चा थी। मैं विज्ञापन देखती और मन ही मन उद्घाटन के दिन की कल्पना करती। अजय पर विज्ञापन का न जाने क्यों उल्टा असर ही होता। वह समाचार पत्र उठाता विज्ञापन के पृष्ठ को देखता, विचित्र सी मुद्रा बनाता और

समाचार पत्र को मरोड़ कर कोने में फेंक देता। मैं उसके विचित्र व्यवहार को देखकर भी मौन बनी रहती। उसे दो चार बार कहीं घूमने-चलने के लिये कहा तो उसने टाल दिया। यूं वह हमेशा अकेला ही बाहर निकल पड़ता और भटकता भटकता शराब में धुत होकर लौटता।

सुबह लगभग ८ बज रहे थे। टेलीफोन की घण्टी बजी। अजय ने चोंगा उठाया और बोला–"हाँ ठहरना बुलाता हूँ।" और उसने मुझे आवाज दी। समरेश का फोन था। समरेश बोला—"प्रतिभा आज काम के बाद फुर्सत मिली है। शाम को पार्टी है अमर के यहाँ। अमर ही फोन कर रहा था लेकिन उसके चाचा का बुलावा आ गया और तुम्हें फोन करने की जिम्मेदारी मुझ पर ही डाल गया। मैंने पूछा और कौन कौन है पार्टी में ? समरेश ने उत्तर दिया—"हम लोग ही है। बाहर का कोई नहीं।" और थोड़ी देर ठहर कर उसने कहा—'अब जरा अजय बाबू से बात करा दो।" मैंने चौंगा अजय की ओर बढ़ाते हुए कहा, "समरेश बाबू तुम्हें बुला रहे है। अजय ने अनमने मन से चौंगा हाथ में लिया। उसके चेहरे पर से प्रकट हो रहा था मानो जबरदस्ती उसे बात करनी पड़ रही है। उसने कहा, "समरेश बाबू मुझे आज माफ ही करियेगा। मैं एक मित्र को समय दे चुका हूँ। वह व्यर्थ ही नाराज हो जायेगा।" समरेश ने न जाने क्या कहा। शायद पार्टी में शामिल होने के लिये ही जो देकर कहा अजय ने पुनः उत्तर दिया, "प्रतिभा तो आ ही रही है। खैर मैं कोशिश करूँगा समय पर पहुँचने की। शायद थोड़ी देर हो सकती है।" अजय ने चोंगा रख दिया। बात समाप्त हो गई थी। अजय कमरे में थोड़ी देर तक टहलता रहा। न जाने मन में क्या सोच रहा था। मैं आराम कुर्सी पर बैठी

थी। अजय एक कोने में खड़ा खड़ा बोला, "पार्टी में तुम्हारा जाना तो जरूरी है। मैं अगर न भी गया तो चलेगा।" और अजय मेरी ओर देखने लगा। उसे मेरे उत्तर की प्रतीक्षा है या नहीं, यह मैं तय नहीं कर पाई। मैंने मौन रहना ही उचित समझा। वह थोड़ी देर तक यूँ ही देखता रहा और पुनः बोला "मैं पार्टी में शरीक न भी होऊँ तो क्या फर्क पड़ता हैं और न जाने वह धीरे धीरे आगे क्या बड़बड़ाया मैं उसके शब्दों को स्पष्टतः सुन नहीं सकी। मैं उसे पार्टी में चलने का अनुरोध करना चाहती ही थी कि वह पुनः बोला, "मैं अपने कार्यक्रम में शरीक होऊँ या तुम्हारी पार्टी में। आखिर मेरा भी तो हैं। मैं भी तो अपनी अलग हस्ती रखता हूँ। तुम्हारे साथ ही भटकता रहूँ।" अजय की आवाज में व्यंग था। उसकी आंखों के भाव भंगिमा में व्यंग था। मुझ से अब रहा नहीं गया। मैंने उसकी ओर सिर उठाकर देखा और कहा, "अजय तुम्हें आज-कल हो क्या गया है। सीधी सी बात क्यों नहीं कहते अगर पार्टी में शरीक होने की इच्छा नहीं है तो स्पष्ट क्यों नहीं कह डालते।" अजय एक कौने से दूसरे कौने में जाकर खड़ा हो गया और एक खिलौने को हाथ में लिये यूँ ही देखता रहा। मैं कहती गई, "इन दिनों तुम में जबरदस्त परिवर्तन आ गया है। मैं मौन बैठी इस परिवर्तन को देखती जा रही हूँ लेकिन कहती कुछ नहीं हूँ।" अब अजय का मौन टूटा। वह आगे बढ़ आया और बोला, "परिवर्तन आ गया है—क्या यह एक पक्षीय ही है। तुममें परिवर्तन नहीं आया है क्या? तुम दिन व दिन अपना रूप बदलती नहीं जा रही हो। मुझे ज्यादा कहने के लिये मजबूर न करो। बस जैसा चल रहा है वहीं ठीक है। उसी में हम दोनों का कल्याण है।" अजय का इशारा स्पष्ट था। वह बेला के साथ रहे और अमर के साथ। आज तक मैं अजय और

अमर के बीच हिचकोले खा रही थी। अमर के प्रति आकर्षण था और वह आकर्षण बढ़ता जा रहा था। लेकित उसके साथ ही साथ अजय के प्रति भी मेरे मन में कम स्थान नहीं था। अमर से मुझे प्रेम था लेकिन वह प्रेम था भावात्मक। दो कलाकार हृदयों का भावात्मक प्रम। अजय से मेरा शारीरिक संबंध था। मुझ पर अजय का अधिकार था। वह मेरा पति था। अजय के शब्दों ने मरे हृदय पर जोरदार आघात किया। मैं तिलमिला उठी। कुछ कटु शब्द कहने की इच्छा हुई लेकिन मैंने अपने आप को संयत रखा और कुर्सी से उठकर बगीचे की ओर चल दी। अजय काफी देर कमरे में ही टहलता रहा। पुन: टेलीफोन की घण्टी बजी। अजय ने टेलीफोन की ओर ध्यान ही नहीं दिया और गुसलखाने की ओर चल दिया। मैंने भी गुस्से में घण्टी को बजने ही दिया। घण्टी बजती बजती रुक गई। मैं बगीचे की दूब पर बैठ गई। मन में जोरदार उथल पुथल मची हुई थी। अजय के साथ इस तरह दिन कैसे कटेंगे। अमर से शूटिंग के दौरान हमशा मुलाकात होती रहती थी। काफी दिनों के बाद उससे आज पहली बार मिलना होगा और अजय और बेला शराब पीकर किसी काटेज में मस्त पड़े रहेंगे और मैं शाम को घर लौटूंगी। अकेली पड़ी रहूँगी। अजय लड़खड़ाता हुआ रात को लौटेगा। मरा मन कहीं भटक जाना चाहता था कि पुन: टेलीफोन की घन्टी बजी। इस बार मैं उठी। टेलीफोन पर अमर बोल रहा था "आप कब तक आयेगी आज?" मैंने पूछा, "क्या समय है पार्टी का? सात बजे? मैं ठीक समय पर पहुँच जाऊंगी।" अमर ने थोड़ा सा ठहर कर आग्रह किया, "कुछ जल्दी ही आ जाईये न। समरेश बाबू भी तो जल्दी आ रहे हैं। उद्घाटन का कार्यक्रम बनाना है और भी चित्र के संबंध

में बहुत सी बातें करनी है।" मैंने उत्तर दिया" अच्छी बात है छः बजे के लगभग पहुँच जाऊँगी। अमर ने पुनः कहा, "अजय बाबू को भी लेती आइये।" अजय गुसलखाने से बाहर आ रहा था मैंने उसकी ओर देखकर उत्तर दिया, "अजय तो आज किसी प्रौग्राम में उलझा है। खैर उसे राजी करूंगी आने के लिये।" बातचीत समाप्त हो गई थी। मैंने चोंगा रखा ही था कि अजय ने पूछा, "कौन था ?" मैंने उत्तर दिया, "अमर। तुम्हें पार्टी में शरीक होने के लिये जोर देकर कह रहा था।" अजय ने फर्श को ओर नजर डाली। कंधे के टावेल से हाथों को पोंछते हुए कहा, "हूँ ऽऽऽऽ।" और ड्राइङ्ग रूम की ओर चल पड़ा। मैंने सोचा अजय को एक बार पुनः कहूँ तो शायद वह राजी हो जायेगा। यह सोच कर में ड्राइङ्ग रूम को ओर चली। मुझे पीछे पीछे आते देख अजय मुड़ा और बोला, "मैं तो पार्टी में शायद ही शरीक हो सकूं।" मेरी कुछ कहने की हिम्मत ही न हुई। मैंने पुनः अपने कमरे की ओर लौट चली। अजय ड्राइंग रूम में किसी गीत की पंक्ति गुनगुनाता रहा।

पार्टी से लौटने में काफी देर हो गई। लगभग दस बजे होंगे। गाड़ी में अमर मुझे बंगले तक छोड़ने के लिये आया था। अजय अभी तक लौटा नहीं था। अमर के बंगले पर उसका फोन आया था। उसने कहा था, "किसी जरूरी काम से रुकना पड़ रहा है। पार्टी में शरीक नहीं हो सकूंगा।" मैं अजय की बहाने बाजी को समझ गई थी लेकिन क्या कहती। बंगले में नौकरानी के अलावा और कोई नहीं था। मैंने ड्राइङ्ग रूम का दरवाजा खोला और आराम कुर्सी को बगीचे में घसीट लाई। कमरे की बिजली की रोशनी गुल कर दी और आराम कुर्सी पर पड़ रही। लगभग आधे घण्टे तक कुर्सी पर मैं मौन बैठी

रही। दिमाग में विचारों का कुछ मेला सा लग रहा था। अजीब सा महसूस होरहा था। कभी अजय पर गुस्सा आता तो कभी अपने आप पर। मन के एक कोने से एक विचार उठा "अजय मुफत खोर बन रहा है-पेरासाइट। उसे ठीक क्यों नहीं करती।" दूसरा विचार आगे आया जो है सो ठीक है। मुझे भी तो अजय से प्रेम कहाँ है। तेरा मन तो अमर में है हाँ शारोरिक संबन्ध से अजय जरूर है।" पुनः एक आया–अजय घूरे में मुँह मार रहा है। आज बेला है कल कोई एक्सट्रा लड़की आयेगी। दूसरे विचार ने कहा कि अजय भटक रहा है तो तेरे रोकने से रुकेगा थोड़े ही। तेरा मन तू और को दे रही है तो वह अपना शरीर दूसरों को क्यों नही देगा। न जाने किस प्रकार उल्टे सीधे विचार मन में डूबते उतरते रहे। मैंने मन को संयम में रखने की पूरी कोशिश की लेकिन असफल रही। बँगले के बाहर किसी के पैरों की आहट ने मुझे चौंका दिया। किसी के फुसफुसाने की ध्वनि सुनाई पड़ी। आवाज अजय की थी। लेकिन अजय तो कार लेकर गया होगा मेरी नजर गैरिज की ओर गई। गैरिज में गाड़ी रखी थी। मुझे सन्देह हुआ" क्या अजय और बेला तो नहीं है" मैं दबे पाँव समेंक के किनारे से पौधों की ओट में खड़ो हो गई। अजय और बेला ही थे। बड़ी बेहूदगी से चिपके खड़े थे। अजय ने बेला को बिदा देने के लिए उसके गालों पर एक चपत लगाई। बेला ने अजय के होठों की ओर अपने चेहरे को बढ़ाया। मेरा मन वितृष्णा से भर गया। मैंने अपनी आँखें बन्द कर लीं और दबे पाँव अपने कमरे में आई और पलंग पर लेट गई। अजय बेला को बिदा कर कमरे में घुसा। दूर समुद्र की लहर की ध्वनी मेरे विचारों से टकराई। मानो एक तूफान मेरे मन में उठ खड़ा हुआ हो। इच्छा हुई कि कहीं बाहर भटकने के लिए चल पड़ूँ। समुद्र के किनारे भटकती

ही रहूँ, लगातार भटकती ही रहूँ। तभी अजय के लड़खड़ाते पैरों की आवाज आई। उसने कमरे में प्रवेश किया: मुझे सोते हुए देख कर बोला ओफ्फो ! इतनी जल्दी लौट आई और आकर सो भी गई।" मुझे नींद कहाँ। मैंने करवट लेनी चाही पर अजय मेरे पलंग की ओर बढ़ा और पुन: बोला, 'नींद आ गई है या सोने का बहाना ही कर रही हो। औरत अभिनय में माहिर होती है और फिर तुम तो अभिनेत्री हो। अभिनय में प्रवीण हो।" अजय धीमे धीमे पलंग के पास आया। उसने मच्छर दानी को हटाया। उसने मेरे सिर पर हाथ रखा मेरी इच्छा हुई कि उसका हाथ फेंक दूं। लेकिन न जाने क्यों मैं यूँ ही शान्त पड़ी रही अजय ने अपना हाथ दूर कर लिया और ठीक सामने की अलमारी की ओर बढ़ा अलमारी में उसकी शराब की बोतलें, ग्लास रखी थी। उसने एक पेग में रम लिया। बिना डायल्यूट किए ही हलक से उसे उतारा और पास के पलंग पर पड़ रहा। मैं बहुत देर तक आंखें बन्द किये जगती रही।अजय काफी देर तक बड़बड़ाता रहा फिर सो गया। मैं भी विचारों की उधेड़ बुन में लगी, पलग पर पड़ी ही रही। रात भर नींद मुझे नहीं आई।

दूसरे दिन दोपहर को अजय फिर भटकने के लिये बाहर निकल गया। मैं अकेली ही थी। कृष्णा को मैंने छुट्टी दे दी। मैंने अजय की शराब की आलमारी की ओर कदम बढ़ाये। और आलमारी को खोला। शराब की बोतलों की कतार रखी थी। बीअर, रम, जिन, व्हिस्की। मैंने फ्रिज से ठडे पानी की बोतल निकाली। स्काच व्हिस्की का एक पेग लिया। उसे पानी से डायल्युट किया। ग्लास को हाथ में लिए काफी देर खड़ी रही। दिमाग में भयंकर अशांति थी। लोगों को शराब पीते देखा था। शराब पीने पर क्या होता है, इसे भी देखा है।

पीने वालों से सुना है कि शराब का स्वाद कड़वा होता है, लेकिन पर अजीब सी मस्ती आ जाती है । दिमाग हल्का हो जाता है, बादलों की तरह धीरे-धीरे आसमान में तैरने लगता है। सारी चिन्तायें दूर हो जाती हैं। मैं कुर्सी पर बैठ गई छोटे टेबिल को खींच लिया। आँखें बन्द करके एक घूँट गले से उतारा। फिर मौन बैठी रही। मन की अशान्ति बढ़ती जा रही थी। ग्लास उठाया। आँखें बन्द की और सारे ग्लास को साफ कर दिया। पुनः दूसरा पेग लिया। बिना डायल्यूट किये ही उसे हलक के नीचे उतार लिया। पैरों में विचित्र सी सुस्ती आने लगी थी। मैं साहस करके उठी और अपने पलंग की ओर बढ़ी। पैर भी लड़खड़ा गये गिरते-गिरते बची और पलंग पर पड़ रही। सारा दिन और सारी रात निकल गई। मुझे कुछ भी होश नहीं रहा उस दिन से मैंने नियमित पीना शुरू कर दिया।

'स्वर संगम' को एक बारह सिनेमा घरों में लगाया गया। मिनर्वा में उद्घाटन समरोह हुआ । फिल्म उद्योग के प्रमुख कलाकार निर्देशक और अन्य प्रतिष्ठित लोग इकट्ठे हुए। प्रांत के मुख्य मंत्री के हाथों उद्घाटन हुआ। अजय इस समारोह में शरीक होने के लिये बड़ी मुश्किल से राजी किया। समारोह के दौरान अजय एक कोने में बैठा सिगरेट पीता रहा। मैंने कई बार उसे अपने पास बिठाने की कोशिश की लेकिन वह राजी न हुआ। समारोह के प्रमुख व्यक्ती तो हम हीं लोग थे । अजय को शायद मालूम होरहा था कि उसका महत्व नहीं है । केवल स्त्री के काम पर ही पति की पूछ है। शायद इन्हीं विचारों से दवा वह पीछे बैठा था। मैं उसको स्थिति महसूस करके भी क्या कर सकती थी। उसे दिग्दर्शक, बनाना तो मेरे हाथ की बात नहीं थी।

उद्‌घाटन समरोह समाप्त हुआ और सारे लोग सिनेमा हाल में बैठगये। चित्र शुरू होगया। एक कतार में समरेश अमर मैं और मुख्य मन्त्री की पत्नी और उनके पास में मुख्य मन्त्री थे। अजय दूसरी कतार में था। चित्र में जगह जगह तालियाँ बजतीं हँसी के फब्बारे छूटते। मेरे नृत्य आते ही दर्शक तल्लीन हो जाते। चित्र पूर्ण रूप से सफल था। जब-जब तालीयाँ बजती अमर की नजर मेरी ओर होती मानो वह कह रहा हो "प्रतिभा कैसा कमाल किया है तुमने।" मैं मन ही मन खुशी से नांच उठती। मुझे ऐसा लगता था—आज के समारोह की सम्राज्ञी मैं हूँ। चित्र का सारा दारोमदार मेरे ऊपर है। मैं हूँ तो चित्र है। प्रतिभा को निकाल दो 'स्वर संगम में क्या रह जायेगा। मैं अपने विचारों के उड़न खटोले में बैठी न जाने किस अनजाने लोक में उड़ी जा रही थी।

खेल समाप्त हुआ। हम सिनेमा घर से फायर में आये। बधाईयों की झड़ी लग गई लोगों से हाथ मिलाते मिलाते हाथ दर्द करने लगा। समरेश सिगरेट से धूआँ उड़ाता दार्शनिक की तरह से आमंत्रित लोगों से बातें कर रहा था। लेकिन मेरा ध्यान उसकी ओर नहीं था। मैं तो अपने प्रशंसकों से घिरी हुई थी। मैं चित्र को नायिका थी-कल सुबह समाचार पत्रों के पत्रे मेरे चित्रों से भरे होंगे। मेरी प्रशसा में कालमों भर दिया जायेगा। फोटोग्राफर के फ्लैश लेम्प की रोशनी से मेरी आँखें चौंधिया गई और तब मुझे ख्याल आया कि केमरे लिये हुए पत्रकारों का झुण्ड अबाध गति से मेरे चित्र लिये जा रहा है। एक किशोरी भाग कर मेरे पास आई और उसने ऑटोग्राफ के लिए अपनी छोटी सी डायरी मेरे सामने कर दी। फिर क्या था, कई किशोर और किशोरीयाँ आगे बढ़कर आये। मैं तेजी से अपने दस्तखत करती गई। आज मुझे इस भीड़ में आनन्द

आ रहा था। आज में अपने परिषद के शिखर पर थी। लोग मेरी ओर देख रहे थे, कोई आंखों के इशारे से अपने साथी को मेरी ओर देखने के लिये बाध्य करता तो कोई अंगुली उठा कर।

समरेश ने मेरी ओर आकर पूछा, अजय बाबू दिखाई नहीं देते कहाँ गये ? मुझे तब अजय का ख्याल आया। समारोह के प्रारम्भ में मेंने उसे देखा था। खेल समाप्त होने पर दिखाई नहीं दिया, मैं क्या उत्तर देती।

मैं रात को दस बजे घर लौटी। जैसे ही ड्रांइग रूम में पैर रखा तो सामने अजय को कुर्सी पर बैठे हुए देखा। टेबल पर व्हिस्की की बोतल रखी थी। ग्लास में कुछ शराब थी। मुझे देखते ही उसने सारी शराब को एक घूँट में ही गले से उतार लिया। मैंने उसकी ओर देख कर पूछा तुम कहाँ चले गये थे। तुम्हें ढूंढ़ते २ परेशान हो गई। वेचारे समरेश बाबू लगातार तुम्हारे लिये इधर उधर भागते रहे। अजय ने ग्लास शराब उड़ेली और मेरी ओर देखा लेकिन मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। वह बड़ी विचित्र मुद्रा में मेरी ओर देख रहा था। मैंने पूछा "तुम्हें क्या हो गया है ? बोलते क्यों नहीं।" अजय का ध्यान मेरी ओर नहीं था। उसकी नजर टिकी हुई थी ड्रेसिंग रूम के दरवाजे पर। दरवाजा बन्द था। मैं अपने कपड़े बदलने के लिये उस ओर बढ़ी तो अजय चिल्लाया ! "वह दरवाजा मत खोलना। मैं चौक पड़ी, दर वाजा क्यों नहीं खोलूँ ऐसी क्या बात है ? मैंने दरवाजे की ओर कदम बढ़ाये। अजय कुर्सी से लपक कर मेरे सामने आ गया। मैंने उसे देखा और पूछा क्या हो गया है तुम्हें। पागल तो नहीं हो गये हो।" मैं आगे कुछ भी बोलती उससे पहले ही वह चीखा, हां हां में पागल होगया

हूँ। लेकिन में शराब के नशे में पागल हूँ और तुम अपनी शोहरत के नशे में पागल हो। मैं अजय की मुख मुद्रा देखती रही वह बोलता रहा तुम्हें नशा चढ आया है और अब मैं तुम्हें पागल नजर आ रहा हूँ। क्यों नहीं पागल नजर आऊँगा तुम्हें मेरी जरूरत थोड़े ही है। तुम्हें अब बहुत से मिल जायेंगे। मुझे अजय की बेहूदगी पर क्रोध आ गया। मैं चीख पड़ी, अजय होश में आओ। कुछ सोच विचार कर तो बोलो। पर अजय को मेरे चीखने की परवाह नहीं थी। वह मेरी आवाज को दवा कर चीखा, "तुम्हें कई मिलेंगे अमर तो मिल ही गया जाओ, ऐश करो उसके साथ खाओ–पीओ, मौज करो।" "मैं चिल्ला उठी, अजय मुँह को लगाम दो।" मैं आगे बोलती उससे पहले ही अजय ने मेरे मुँह पर जोर से एक चपत जड़ दी। मैं सम्भल ती उसके पहले उसने जोर से एक घूँसा मेरे मुँह पर जड़ दिया और मुझे गश आ गया। मैं फर्श पर गिर पड़ी। वह मुझे गालियाँ दे रहा था -"साला, कमीन, कुल्टा, धोखेबाज एहसान फरामोश।" वह गालियाँ देता जा रहा था और लातों और घूँसों से मुझे पीटता जा रहा था। मैं अधमरी हो गई थी। उसी समय ड्रेसिंग रूम का दरवाजा खुला। बेला लपक कर आई। मेरे और अजय के बीच में खड़ी हो गई। अजय उसे दूर करते करते चिल्लाया, "तू दूर हो जा बेला। मैं आज इस बद जात का गरूर खत्म करके ही रहूँगा।" अजय ने मुझे जोर से ठोकर मारी लेकिन इस बार बेला ने उसे जोर से धक्का देकर दूर कर दिया और चीखी 'इस प्रकार तुम इसकी हत्या कर दोगे अजय। फांसी पर चढ़ना पड़ेगा। समझे!" अजय हत्या शब्द सुनते ही चौंका और घबराहट में रुक गया। मेरी आंखों के आगे रंग बिरंगे गुब्बारे घूम रहे थे। धीरे धीरे मैं बेहोशी

की पकड़ में आ रही थी। बेला अजय का हाथ पकड़ कर कमरे से बाहर ले जा रही थी। मैं पूर्णतया बेहोश हो गई थी।

मैं पलंग पर पड़ी थी। मेरी आंखें खुली तो सामने अमर को देखा। मैं कराहती हुई बोली, "अजय, अजय कहाँ है ?" अमर ने मेरे माथे पर बरफ की थैली रखते हुए कहा, "अजय तो शायद नागपुर चला गया। एक पत्र रख गया है।" मैंने पत्र को पढ़कर सुनाने की इच्छा नहीं की लेकिन अमर ने पत्र पढ़ा। पत्र इस प्रकार था:—

प्रित प्रतिभा ?

मैं नागपुर लौट रहा हूँ। बाबा पांडिचेरी से लौट आये हैं। तुम्हारा मेरा रास्ता अलग-अलग है। तुम अपने जीवन में सुखी रहो। मुझे भूल जाओ।

तुम्हारा-अजय !

मैंने आँखें बन्द कर ली। अमर बरफ की थैली को हटाना चाहा लेकिन मैंने अपने हाथ से उसे सिर पर दबा लिया। मेरे अंग फट रहे थे। सिर में दर्द था।

मैं एक सप्ताह तक पलंग से न उठ सकी। नियमित तौर से लेडी डाक्टर दोनों समय देखने के लिये आती। अमर लगातार मेरे पास ही बैठा रहता। एक दिन तो मैं लगातार बेहोश रही और जब होश आया तो सामने अमर को भयाकुल अवस्था में देखा। मैं अमर के भयभीत होने का कारण नहीं समझ पाई। मैंने कुछ बोलने की कोशिश की लेकिन बोल नहीं पाई। जबान हिलाने की ताकत भी मुझमें नहीं थी। मैं अपने आप को अत्यंत अश्वस्त महसूस कररही थी। अमर ने मेरी ओर देखा और हाथ से मौन रहने का इशारा किया। कमरे में लेडी डाक्टर ने प्रवेश करते हुए कहा, "किसी प्रकार की चिन्ता की बात नहीं

है अमर बाबू ? अब ये एकदम स्वस्थ है। अमर ने डाक्टर की ओर कृतज्ञता भरी दृष्टी से देखा और उत्तर दिया, सब कुछ आपकी दया से हुआ है डाक्टर। मुझे तो कुछ भी सूझ नहीं रहा था। अगर आप मौके पर नहीं मिलती तो मैं कहां जाती। लेडी डाक्टर ने मेरी ओर देखा और फिर अमर की ओर मुड़ कर उसे कमरे के बाहर चलने का इशारा किया। दोनों कमरे के बाहर चले गये। डाक्टर कह रही थी, किसी गहरी चोट के लगने से हुआ है अमर बाबू। एक माह का गर्भ था। औरत के लिए इस समय किसी प्रकार की चोट का लगना बड़ा खतरनाक होता है। मैं तो खुद चक्कर में पड़ गई थी। भगवान की कृपा से सब ठीक हो गया। अमर की धीमी आवाज मुझे सुनाई दी, मैं भी कुछ नहीं जानता डाक्टर न जाने क्या हुआ, और कैसे हुआ, लेकिन अब तो कोई खतरा नहीं है डाक्टर ? लेडी डाक्टर का उत्तर सुनाई पड़ा, अब किसी बात का खतरा नहीं है। गर्भपात तो हो गया। अब तो कमजोरी रहेगी। आप इन्हें किसी पहाड़ी स्टेशन पर ले जाइये। इन्हें आराम की जरूरत है। मैं दोनों की बात चीत से सब कुछ समझ गई। मैं माँ बनने वाली थी लेकिन अजय के क्रूर हाथों ने गर्भ में ही मेरे शिशु की हत्या कर दी थी। प्रतिहिंसा से पागल अजय। मेरी आँखों के सामने अजय का क्रोध से पागल चेहरा घूम गया। न जाने कैसे में उस निर्दयी के हाथों मरते मरते बच गई। वह तो मुझे मरने की हालत में ही छोड़ कर चला गया था। उस पर मजाक यह कि पत्र भी लिख गया। अगर अमर आकर मुझे सम्भाल नहीं लेता तो मेरा जीबित रहना मुशिकल था। तो अजय के लिए मैं मर चुकी थी और मेरे लिए अजय .... फिर विचार आया। अजय ने भले ही मेरे प्रति अन्याय किया हो। उसने भले ही मेरे प्रति अन्याय कियाहो लेकिन मेरा यह कर्तव्य है।

और । मैं अपने आप में इतनी डूबी रही कि अजय मुझ से लगातार दूर होता गया। दोनों के बीच की दूरी इतनी ज्यादा हो गई कि कोई किसी को समझ नही सका । मैं अगर एक बार भी अजय के निकट जाने का प्रयास करती तो शायद अजय इतना पतित नहीं बनता। मेरे मन में विभिन्न विचार डूबते उतराते जारहे थे। मन के एक कोने से मानो कोई बोल उठा, लेकिन मुझे अजय से कभी प्यार भी था क्या ? तू तो उसके साथ जबर दस्ती बंध गई थी । अजय और तेरे रास्ते भिन्न थे। भिन्न हैं और भिन्न रहेंगे। क्यों अपने आप को व्यर्थ की उलझन में डालती है और मुझे महसूस हुआ अजय में और मुझमें सामान्य वस्तु तो कुछ थी ही नहीं। एक न एक दिन अजय और मैं अवश्य अलग होते । इस प्रकार नहीं तो किसी दूसरे रूप में। मैं आगे कुछ सोचती उससे पहले ही अमर ने कमरे में प्रवेश किया और मेरे एकांत को भंग करते हुए कहा, तुम्हें पूरे आराम की जरूरत है। प्रतिभा। मेरा ख्याल है हम लोनावाला चले चलें। मेरे चाचा का वहां बंगला है। सारी व्यवस्था हो जायेगी। यहाँ तो तुम्हें आराम मुश्किल से मिल सकेगा। अभी तक तो किसी को खबर नहीं लगी है । एक बार किसी को पता चल गया तो आने वालों की कतार लग जाएगी मेरे लिए मना करने का प्रश्न ही नहीं था। मेंने उत्तर दिया जैसा तुम ठीक समझो। अमर ने मेरी ओर देखा और कुछ विचार मग्न होकर खड़ा रहा फिर बोला, तो मैं अभी लोना-वाला टेलीफोन किये देता हूँ। चपरासी सारी व्यवस्था कर देगा। हां नौकर नौकरानी को आज ही वहाँ भेज दें तो ठीक रहेगा। मैं क्या उत्तर देती । सारी व्यवस्था तो करने वाला अमर ही था। मैं तो सुस्त व अश्वस्त पलंग पर पड़ी थी। अमर झटपट कमरे से बाहर चला गया। मैं टेलीफोन पर उसे बोलते हुए सुन रही थी, "हलो ट्रंक ? हलो ट्रंक । लोनावाला एक

करिये। हां हां, लोनावाला। येस, लोनावाला। अर्जेन्ट काल। यहाँ का नम्बर है ८६४१६। अमर ट्रंकाल बुक कर मेरे कमरे में लौट आया। कुर्सी खींच कर मेरी कुर्सी के पास बैठ गया। कुछ ठहर कर नौकर को आवाज दी, 'कृष्णा। ओ कृष्णा ?!' कृष्णा भागता हुआ आया और बोला, हाँ साहब। अमर कुछ कहना चाहता था। पर जो बात कहना चाहता था उसे भूल गया था। वह अंगुलियों से सिर खुजाता रहा और फिर झुँझला कर बोला "न जाने दिमाग में आज क्या हो गया है। कोई बात याद आती है और फिर एक क्षण में ही न जाने दिमाग के किसी अंधेरे कोने में गायब हो जाती है।" कृष्णा अमर की ओर देखता जारहा था। उसे अमर की बातें समझ में नहीं आरही थी मैंने कृष्णा की ओर हाथ से उसे चले जाने का इशारा किया। कृष्णा ज्यों ही कमरे से बाहर जाने के लिए आगे बढ़ा अमर चिल्ला उठा, अबे कहाँ भाग रहा है। तुझे काम के लिये बुलाया ओर तू बाहर जा रहा है।" अमर को शायद भूली बात याद आ गई थी। वह बोलता गया, "भाग कर स्टेशन से यह दवा ले आ।" और अमर ने जेब में हाथ डाल कर एक कागज निकाला और कृष्णा को दिया। कृष्णा ने कागज लिया और कमरे के बाहर होगया। अमर मेरी ओर देख कर बोला, न जाने क्या हो गया है मुझे। डाक्टर ने तुम्हारे लिये दवा लिखी थी और उसे ही भूल गया। मैं अमर की ओर देखती रही पर कुछ बोली नहीं। सोचती रही आदमी कितना ही समझदार और संतुलित विचारों वाला क्यों न हो, उलझनों में फसकर किं कर्तव्य विमूढ़ की नांई व्यवहार करने लगता है।" बाहर टेलीफोन की घंटी बजी अमर लपक कर कमरे के बाहर हो गया। लोना वालाका ट्रंक-

काल था ।

दूसरे दिन हम लोनावाला पहुँच गये। विशाल बगीचे के बीचो बीच खूबसूरत काटेज नुमा बंगला। कृष्णा और नौकरानी पहले से ही सारा सामान लेकर पहुँच गये थे। बंगले के गोर-खा चपरासी ने मोटर का फाटक खोलते हुए एटेन्सन की स्थिति में खड़े होकर सलाम किया। अमर ने उससे पूछा, खड़गसिह सारी व्यवस्था कर दी। हाँ हुजुर। पूरा इंतजाम कर दिया। किसी बात की कमी नहीं है। अमर ने मुझे सहारा देकर मोटर से नीचे उतारा। मैं अमर के कंधे पर हाथ रखे धीरे धीरे सीढ़ियां चढ़ी। सामने फर्श पर गोलाकार टेबल के चारों ओर कुर्सियाँ सजाई हुई थीं। मैं एक कुर्सी पर बैठ गई। मेरे लिए थोड़ी देर भी खड़ा रहना संभव नहीं था। मेरे पैरों में मानो नाम मात्र को भी शक्ति नहीं रह गई थी। अमर ने मोटर में से सारा सामान उतरवाया और धीरे धीरे कदम बढ़ाता हुआ आया और मेरे सामने की कुर्सी पर बैठ गया। कृष्णा काफी की ट्रे और नाश्ता ले आया। मैंने काफी तैयार करने के लिए हाथ बढ़ाया लेकिन अमर ने मुझे रोक दिया। वह उठा और प्याले में काफी उड़ेलने लगा। खड़गसिह कृष्णा को तरकीब से सामान रखने को हिदायत देता हुआ कह रहा था, तुम हमारे साहब को आदत नही समझता। तुम मदरासी है और साहब है गुजराती। तुम साहब की आदत को समझेगा कैसे कृष्णा उत्तर दे रहा था। हम सब समझता है। तुम हमको क्या समझता है। हम साहब और मेमसाहब दोनों को अच्छी तरह जानता है। फिल्म लाइन में हम कई वर्षों से काम करता है समझे। खड़गसिह कह रहा था तुम फिल्म का लोग बात करने में होशियार होता है बस काम करने पर हम जानेगा, तुम काम में भी

होशियार है या नहीं। कृष्णा उत्तर दे रहा था अच्छा बाबा हम होशियार नही है, तुम ही होशियार हो। लो अब तो तुम जीता, खड़गसिंह की जोर की हंसी सुनाई दी। वह कह रहा था हम हैं नेपाली गोरखा। हम होशियार नहीं तो फिर दूसरा कौन होशियार है। तुमने हमारी हुशियारी को मंजूर किया। हम तुम पर खुश हुआ, और हमने तुमको अपना दोस्त मंजूर किया समझे। मुझे कृष्णा और खड़गसिंह की बातें सुनकर हंसी आ गई अमर भी मुस्करा उठा। वह भी उन दोनों की बातों में आनन्द ले रहा था।

काटेज के चारों ओर लग भग एक एकड़ बगीचा था। एक ओर आम के विशाल पेड़। उन्हीं के पास इमली के गन-चुम्बी दरख्त। दूसरी ओर गुलाब की झाड़ी। वेशुमार जंगली गुलाब। पास पास विभिन्न प्रकार के लाल पीले आसमानी विलायती फूल। पेड़ों की छाया में भोजन करने के पश्चात आराम कुर्सीयाँ डाल दी गई और हम वहीं बैठ गये। अमर मौन बैठा सिगरेट पीता रहा। मैं सिगरेट के धुंए के बादलों को देखती रही। अमर ने विचित्र प्रकार से मुंह फुलाया और मुंह से धुंए के छल्ले निकालने लगा। एक इस प्रकार से कई छल्ले उसने निकाले। छोटे २ छल्ले धीरे धीरे विस्तृत होते वायु मंडल में बिखर जाते। मेरी भी इच्छा हुई कि मैं भी सिगरेट पी कर ऐसे ही छल्ले निकालूं लेकिन आज तक कभी सिगरेट पी ही नहीं थी अतः अमर से सिगरेट मांग कर पीने का साहस ही नहीं हुआ। अमर काफी देर तक मौन बैठा रहा। आखिर सिगरेट के डिब्बे को जमीन पर डाल कर उसने मेरी ओर देखा। उसकी आँखों में न जाने आज कैसी विचित्रता थी वह काफी देर मौन रह कर मेरी ओर देखता रहा और फिर

बोला, प्रतिभा इन सात आठ दिनों से एक विचार लगातार दिमाग में घूम रहा है। यूँ तो इस [illegible] विचार की शुरुआत कभी की हो चुकी थी लेकिन तुमसे इसके सम्बन्ध में जिक्र ही नहीं किया। अमर थोड़ी देर के लिये रुक गया। मैं अमर की बात का अर्थ समझ नहीं पाई। आखिर ऐसा क्या विचार है जो कई दिनों से अमर के दिमाग में घूम रहा है। और जिसे कहने के लिए अमर को आज भी काफी सोचना पड़ रहा है। मैंने अमर की आँखों में देखने की कोशिश की। पर अमर पर पड़े मुर्झाये फूल को पैर की अंगुलियों से रगड़ने का प्रयास कर रहा था। मैंने खांस कर अमर का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया और कहा ऐसा क्या विचार है जिसके लिए तुम्हें इतना सोचना पड़ रहा है। अमर ने फूल को जमीन पर ही छोड़ दिया और नजर उठा कर मेरी ओर देखा और कहा, मेंने अपने विचार का जिक्र समरेश बाबू से भी किया था लेकिन उन्होंने कोई खारा, उत्तर नहीं दिया। फिर तो वे कलकत्ता चले गये। मैंने सोचा था उनसे फुर्सत में बात करुंगा लेकिन उन्होंने विशेष दिलचस्पी दिखाई ही नहीं। मैं अमर को देखती जा रही थी। मैंउस की बात का स्पष्ट अर्थ समझ नहीं पाई थी। मेंने सोचा अमर लम्बी चौड़ी भूमिका बना कर अपनी बात कहे इससे पहले तो स्पष्ट शब्दों में ही उससे क्यों न पूंछ लूं। मैंने टेबल पर रखी दियासलाई को उनकी ओर बढ़ाते हुए कहा 'तुम्हारी भूल भुलैया का अर्थ मुझे समझ में नहीं आ रहा है। स्पष्ट क्यों नहीं बतलाते आखिर क्या विचार है ? कुछ स्पष्ट कहोगे तभी तो समझ में आवेगा। समरेश बाबू को भी स्पष्ट बतलाया नहीं होगा। वह विचारे कैसे समझ पाते तुम्हारे मन की बात। अब अमर कुर्सी पर सीधा हो कर बैठ गया और मेरे हाथ से दिया-

सलाई का बक्स लेते हुए बोला, समरेश बाबू को शायद कुछ गलत फहमी हो गई थी अत: उन्होंने मेरे प्रस्ताव में रुचि नहीं दिखाई। बात यह है [illegible] कि मैंने उनसे मेरे द्वारा लिखे नये चित्र की पटकथा का [illegible] उल्लेख किया था कि इस नये चित्र का दिग्दर्शन हम दोनों [illegible]रें। समरेश बाबू को शायद बुरा लगा और उन्होंने बात को [illegible] ही टाल दिया। मैंने उनसे दुबारा कहा तो भी वे कुछ [illegible]हीं बोले और फिर तो वे कलक-ता चले गये। में अमर की बात का अर्थ समझ गई। स्वर संगम की सफलता में अमर का बहुत बड़ा हाथ था। प्रमुख नायक के साथ ही साथ प्रथम सहायक दिग्दर्शक का काम करके अमर ने चित्र को सफल बनाने में बड़ी कठोर मेहनत की थी। चित्र की सफलता के बाद दिग्दर्शक का प्रस्ताव समरेश बाबू को पसन्द नहीं आया था और उन्होंने अमर को शायद टाल दिया था। अमर बोला अब मुझे तुम्हारी राय चाहिये प्रतिभा। तुम जैसी सलाह दोगी वैसा करुंगा। हालीवुड में मैंने चार साल दिग्दशन के काम की ही तो शिक्षा ली थी। यहाँ सहायक रहा। क्या इसके बाद भी मैं दिग्दर्शन के योग्य नहीं बन पाया? तुम ही बताओ प्रतिभा क्या मैं अपने विचारों को मूर्तरूप देने में सफल नहीं हो सकेगा? क्या मुझमें सफल दिग्दर्शन करने की योग्ता नहो है। अमर बोलता २ रुक गया था। उसकी आवाज कुछ तेज हो गई थी। वह आवेश में आकर ही इतना बोल गया था।

मुझे अमर की योग्यता के बारे में किसी प्रकार का संदेह नहीं था। अपने काम के द्वारा अभिनय के कौशल के द्वारा, उसने अपनी योग्यता को सिद्ध कर दिया था और अब तो वह रजतपट पर प्रसिद्ध हीरो भी जो बन गया था। समरेश को शायद अमर के रूप में एक शक्तिशाली प्रतियोगी दिखाई दिया था और इसीलिये उसने अमर को टाल दिया था। मैंने अमरके

प्रस्ताव में कुछ भी अनुचित नहीं देखा । उसका प्रस्ताव उपयुक्त था । मैंने अमर की ओर देखा वह शायद मेरा उत्तर सुनने के लिए उतावला हो रहा था मैंने तुम्हारी पट कथा को सुना तो नहीं लेकिन तुम्हारी योग्यता में मुझे पूर्ण विश्वास है । तुम सफल चित्र बना सकते हो और बनाओगे भी । अमर की आंखों में खुशी नाच गई । वह अपनी कुर्सी पर से उछल पड़ा और मेरे गले में अपने बाजू डाल कर नाचता हुआ प्रतिभा तुमसे मुझे यही आशा थी । तुम्हारे आश्वासन की ही प्रतिक्षा थी । शायद समरेश को मेरा आगे बढ़ना पसंद नहीं आया है । मनुष्य की प्रकृति को समझना सरल तो नही है प्रतिभा । मैं अमर की आँखों में आंखें डाले देखती रही । अमर कुछ देर मेरे गले में बाहें डाले खड़ारहा और फिर बांहें हटाता रहा और फिर बांहें हटाता हुआ बोला, मैं पटकथा साथ लाया हूँ । आज रात को मैं तुम्हें सुनाऊंगा । तुम पसन्द कर लोगी तब अगला कदम उठाऊंगा । मैंन कोई उत्तर नहीं दिया । दूर से खड़गसिंह के बूंटों की आवाज सुनाई दी । अमर कुर्सी से खड़ा हो गया । मैं मुड़ कर देखने लगी । खड़गसिंह तेज रफतार में पैर उठाता हुआ आ पहुंचा । फौजी सिपाही की तरह सलाम ठोक कर बोला, साहब पड़ौस के बंगले से मोदी साहव के बच्चे मेम साहब से मिलना चाहते हैं । मैंने उनको रोक रखा है । वो लोग बहुत जिद कर रहे हैं । अमर ने मेरी ओर देखा और मुस्करा कर बोला, लोगों को कैसे सब पता चल जाता है । यहां भी शांति से बैठने नही देंगे । मैंने खड़गसिंह का ओर देख कर कहा, तुम जाकर उन लोगों को अपने ड्राईंग रूम में बिठाओ हम उधार ही आ रहे हैं । खड़गसिंह अपनी जगह पर ही खड़ा रहा । शायद बात कुछ और ही थी । वह थोड़ी देर रुक कर बोला, मोदी साहब का साहब बोलता है अपना मेंम साहब को

को देख रही थी। धीरे धीरे आस पास में बादल घने हो गये चारों ओर अंधेरा फैल गया। मैं अपने कमरे में चली गई। अमर आज दिन भर पट कथा को सुधारने में ही लगा था। मैं कुर्सी खींच कर बैठना ही चाहती थी कि अमर ने कमरे में प्रवेश किया। मैं कुर्सी पर बैठती बैठती रुक गई। अमर ने मेरे कंधे पर हाथ रख मुझे कुर्सी पर बैठने के लिए मजबूर कर दिया। वह कुर्सी के पीछे खड़ा खड़ा ही बोला प्रतिभा मैंने पटकथा को तो लगभग निश्चित रूप दे दिया है। मैं चाहता हूँ कि तुम भी उसे सुन लो। तुम्हारी राय जरूरी है एक से दो दिमाग हमेशा बेहतर होते हैं। मैं शायद कहीं कहीं बहाव में बहकर गलतियाँ भी कर गया होऊंगा अमर कुर्सी के पीछे से चलकर मेरे सामने आगया। कुर्सी खींच कर बैठगया। मैं सोचती रही किअम र को क्या उत्तर दूं। अमर ने मुझे मौन देख पुनः बोलना प्रारम्भ किया, देखो एक सीन तो तुम्हें अभी सुना देता हूँ। ठहरना मैं अभी अपनी फाइल लेकर आता हूँ। ? ? अमर उठा और अपने कमरे की ओर चल पड़ा। इतने में कृष्णा ने कमरे में आकर पूछा मेम साहब खाना लगा दूं कि कुछ देर है। मैंने अमर की ओर इशारा किया। कृष्णा उसी ओर चल पड़ा। अमर हाथ में फाइल लिए लौट रहा था कि कृष्णा ने अपना प्रश्न दोहराया साहब खाना लगा दूं या कुछ देर है। अमर ने मेरी ओर देखा और बोला हाँ खाना ही लगा दो। सीन भोजन करके सुनाऊँगा

कृष्णा रसोई घर की ओर चल दिया।

आसमान में बिजली चमक रही थी। बादलों से पूरा आसमान घिरा हुआ था। रह रह कर बिजली की चमक के

साथ नादलों का घोष सुनाई पड़ता था। हम भोजन करचुके थे। अपने पलं॥ पर आराम कर रही थी। अमर आराम कुर्सी पर पैर फैलाये बैठा था। उसके हाथ में पटकथा की फाइल थी। अमर फाइल के पन्नों को उलटता हुआ बोला मैं अभी तक चित्र के नाम के बारे में तय नहीं कर पाया हूँ। यूँ ख्याल में चार नाम हैं जैसे गोरी कलइयां, निंदिया लागी, जुल्फों के साये में, नैंनो का काजल। तुम्हें कौन सा नाम पसन्द है। अमर ने मेरी ओर देखा। मैं नामों को सुनकर सोचने लगी कौन सा नाम सबसे सुन्दर है। मैं कुछ भी तय नहीं कर पा रही थी। काफी देर तक सोच कर बोली, "नाम के बारे में पहले कैसे राय दूँ। पहले कहानी का सार तो सुनाओ। नाम तो उसके बाद आधार पर ही तय हो सकेगा।" अमर ने फाइल मेरे पलंग पर रखते हुए कहा प्रतिभा आजकल पहले लोग नाम को देखते हैं। नाम में ही तो आकर्षण रहता हैं। कहानी तो दो प्रेमियों की है। प्रेम के अलावा और क्या विषय बच रहा है। समरेश बाबू जसे लोग आदर्शवादी बनकर केवल ऊपरी वर्ग के लिए चित्र बनाते हैं। अब "स्वर रंगम" को ही देखा न। अगर समरेश बाबू जैसा चाहते थे वैसा ही रहता तो यह चित्र एक दम फेल होता, लेकिन उनसे बहस मुबाहिसा करके सेठ कचरा लाल का दबाव लाकर पटकथा में जबर दस्त रद्दो बदल करवाई तब कहीं जाकर चित्र सफल बन पाया है। अमर का कहना सत्य था। समरेश की प्रकृति दार्शनिक जैसी है और वह अपने चित्र को एक दम गम्भीर बना डालते हैं। मैंने सिर हिलाकर अमर की बात को मान्य किया। अमर कहता गया, "मैंने हाली वुड में जाकर सब कुछ समझा।

सिनेमा लाखों लोगों के लिए सस्ता मनोरंजन है। गम्भीर बनने के लिए तो गम्भीर उपन्यास और दूसरा साहित्य है ही। सिनेमा तो हल्का फुल्का मनोरंजन है। प्रेम सर्व कालीन और सर्व देशीय है। बस प्रेम पर अधारित चित्र पूर्णतः सफल चित्र बन सकता है। अपना चित्र भी इसी चित्र पर आधारित है। प्रेम में निराश हो प्रेमी अपनी प्रेमिका के पति की हत्या करने लेकिन इसी बीच में दोनों पति पत्नी विदेश चले जाते हैं। विदेश में पति पत्नी किसी विदेशी महिला के चक्कर में फंस जाते हैं। यह प्रेमी भी विदेश पहुंच जाता है। प्रेमिका से उसकी भेंट होती है। प्रेमिका का पति आत्म हत्या कर लेता हैं। दोनों प्रेमी हिन्दुस्तान लौटकर शादी कर लेते हैं। काफी नाटकीय सीन है जिन्हें सुनकर तुम झूम जाओगी। मेरा ख्याल है "गोरी कलईयाँ" ही उपयुक्त नाम रहेगा। अमर थोड़ी देर ठहर गया, मैं उसकी ओर देखती जा रही थी। उसकी पटकथा की फाइल उठाई और एक सीन पढ़ने लगी। बाहर जोरों से वर्षा होने लगी थी। बिजली जोरों से चमकी और कमरे की खिड़की खुल गई। हवा का एक जोर दार झोंका आया और मेरे बालों में उलज गया। मेरे बाल चेहरे पर बिखर गये। अमर उठा और खिड़की बन्द कर लौटा। मैं अपने बालों को चेहरे से हटाना चाहती थी कि अमर ने मेरा हाथ पकड़ कर बालों को दूर करते हुए कहा, कुछ क्षण लगे ही रहने दो। इस अंधेरी रात और बिजली में तुम्हारा यह रूप अत्यन्त सुन्दर मालूम होरहा है। ऐसा लग रहा है मानो काले बादलों के पर्दे को चीर कर बिजली लगातार चमकती जा रही है। मेरा इरादा बदल गया है। गोरी कलाईयों के बजाय चित्र का नाम होना चाहिये "काले बादल, गोरे गाल !" क्यों कैसा जच रहा हैं। मैंने अमर ओर की देखा और आँखें बन्द कर लीं। मुझे इस नाम से

सस्ता बाजारूपन महसूस हुआ। काले बादल तो ठीक है लेकिन गोरे गाल बहुत निम्न कोटि का नाम हो गया। मैंने नकारात्मक भावों का प्रदर्शन करने के लिए सिर हिला दिया। अमर ने मेरी ओर और मेरे मन की भावना को समझ गया। उसने हस कर कहा नाम बाजारू होगया है। तो हम लोग नाम के बारे में देखा फिर सोच विचार कर लेंगे। और फिर वह उठ खड़ा हुआ। मैंने अपने वालों को ठीक करते हुए कहा, "अरे कहाँ जारहे हो, अभी तो सीन सुना रहे थे और अभी सब भूल भाल कर जाने लगे। अमर ने अपनी भूल जाहिर करते हुए काम पकड़ा और कुर्सी पर पुनः बैठता हुआ बोला" अरे वाह मैं भी कैसा बेवकूफ हूँ। अपनी धुन में ही उठकर चलने लगा। अमर ने फाइल के पन्ने उलटे और एक पृष्ठ पर रुक कर बोला, मैं तुम्हें लव सीक्वेन्स सुना देता हूँ। यही कथा का सबसे महत्व पूर्ण किस्सा है। अमर ने पन्ने को थोड़ी देर तक मन ही मन पढ़ा। मेरा ध्यान अमर के चेहरे की ओर था। आसमान में बिजली चमक रही थी। वर्षा की बूँदें तड़ातड़-तड़ातड़ खिड़कियों से टकरा कर विचित्र संगीत की सृष्टि कर रही थीं। आसमान का अंधकार वर्षा का पानी और बिजली की रोशनी तीनों का समन्वय होता और कमरे में विचित्र रंगों कीछटा बिखरी जाती। अमर ने कमरे की रोशनी को एक दम मन्द कर दिया और बोलने लगा, मौसम लगभग आज जैसा ही है। स्थान विदेश का कोई शहर है। नायिका का पति लौटा नही है। किसी पार्टी में शरीक होने गया है। नायक इस मौके पर नायिका से मिलता है। वह जैसे ही कमरे का दरवाजा खोलता है नायिका उसे देखकर चौंक पड़ती है। नायक कहता है घबराओ मत मैं तुम्हारा पीछा करता यहाँ आ गया हूँ। तुम्हारे पति क्लब में अपनी प्रेमिका के साथ अर्द्ध नग्न और अब तो पूर्णतः नग्न नृत्य कर

रहे हैं। और तुम सच्ची पतिव्रता बनी विरत में व्याकुल हो रही हो। नायिका के चेहरे पर शंका व्याप्त हो जाती है। और फिर वह अपने आपको संयत रखने का प्रयत्न करती कहती है।" यह सब झूठ है। तुम द्वेष से जलकर कह रहे हो। मेरा सुखी जीवन अब मैं तुम्हें बिगाड़ने नहो दूंगी। तुम भगवान के लिए चले जाओ।" नायक तीखी निगाहों से नायिका की आखों में आखें डाल कर कहता है मैं झूठ कह रहा हुँ ? तो चलो तुम स्वयं अपनी आंखों से सब कुछ देख लो। प्रेम का ढोंग करके तुम्हें बेवकूफ बनाने में सफल हो गया है वह। नायक इधर उधर टहलने लगता है। नायिका की शंका और जोर पकड़ती है। उससे रहा नहीं जाता। वह बोल पड़ती है तो नौ बजे लौटने का वादा करके बारह बजे लौटने का क्या यही कारण है। मैं अपने मन को शान्त करने का प्रयत्न करती रही हूँ और विनोद मुझे धोका देता रहा। हे राम। मैं दोनों ओर से गई। न दीन की न दुनियां की। वह सिसकियां भरने लगती है। नायक उपयुक्त मौका देख कर आगे बढ़ता है। नायिका का सिर अपनी बाहों में थाम लेता है। कमरे के बाहर जोर से बिजली चमकती है। नायिका कांप उठती है नायक उसे हाथों से थाम सीने से लगा लेता है। न जाने कैसे बिजली गुल हो जाती है। भयाकुल नायिका नायक से जोरों से चिपक जाती है।

सीन का वर्णन करता करता अमर ज्यों ही रुका जोरों से बादलों का घोष हुआ। बिजली की एक रेखा तेजी से चमकी कमरे की रोशनी गुल हो गई बिजली की चमक से कमरा विचित्र रंगों के समन्वय से खिल उठा। बिजली लगातार रुक-रुक कर चमकती रही बादल जोर जोर से घोषकर घहराते रहे। बारिस की गति अत्यन्त तेज हो गई। कमरे की खिड़कियों

पर बूदों की तड़ातड़ तेज होगई। मैं इस वातावरण की विचित्रता को देखकर कांप गई। अंगों में विद्युतगि से सिहरन दौड़ गई। मुझे ऐसा महसूस हुआ कि मैं ही वह प्रेमिका हूँ। मेरे अंग जोरों से कांप उठे। अमर ने फाइल को उठाया और बोला, "बिजली की रोशनी गुल हो गई है। शायद फ्यूज चला गया है। नौकर को आवाज दूं।" मेरे होठों से धीरे से निकला–नहीं ऐसा ही रहने दो मुझे सर्दी लग रही है। मुझे चादर उढा दो" अमर ने चादर उठाई और और मुझे चादर से ढ़कने लगा। उसके हाथ मेरे अंगों को छू गये। मेरी सिहरन और तेज होगई और मैं कांप रही थी। अमर पलंग पर बैठ गया और मेरे कंधों को दबाने लगा। मैं सरक कर उससे सटकर बैठ गई। अमर की आंखों में अजीब सा नशा था। इसने धीरे-धीरे मुझे अपनी बाजुओं में कस लिया। मैं उसकी गोद में लुढ़क गई। न जाने कैसे उसी क्षण बिजली की रोशनी जल उठी। मैं अमर से अलग होने का प्रयत्न करने लगी लेकिन मेरेअंगों मेंशक्ति ही नहीं थी। बिजली की रोशनी पुन: गुल हो गई। मैं अमर की गोद में पडी रही।

पांच दिनों की मूसलाधार वर्षा के बाद आकाश साफ हुआ वर्षा ऐसी जोर दार थी कि दिन रात कमरे में पड़े रहने के अलावा कोई भी काम नहीं किया जा सकता था। दिन भर रेडियो बजता रहता। घंटे के बाद कभी ऐसा लगता अब वर्षा रुकी, अब वर्षा रुकी। लेकिन फिर न जाने कहाँ से झुन्ड के झुन्ड बादल घिर आते और घहरा अंधेरा हो जाता। वर्षा के गिरने की आवाज के अलावा कुछ सुनाई नहीं पड़ता। दोपहर को,शाम को, इस प्रकार दिन में तीन चार बार पड़ोसी श्रीमती मोदी से टेलीफून पर बात चीत चलती। इधर उधर की बातों के अलावा बातों का कोई केन्द्र य विषय तो रहता ही नहीं। श्रीमती मोदी की बडी लड़की नीता इन दिनों मुझ से काफी

घुल मिल गई थी। जब उसका फोन आ जाता बस आधे घंटे की छुट्टी समझो। वह अपने कालेज की सहेलियों के सम्बन्ध में बातें करती थी। फिल्मों नायक और नायिकाओं की जीवनियों तक पहुँच जाती और अंत में जो निष्कर्ष निकलता वह यह-चाची मुझे भी फिल्मों में काम करने का मौका दो न ?? देखना में किसी प्रथम श्रेणी की कलाकार से कम नहीं रहूँगी" मैं हँसती हँसती उत्तर देती , "नीता एक बार ग्रेजुएट तो हो जा फिर चली आना फिल्मों में। तेरे लिए मैदान साफ है।" वह झूठ मूठ रूठने का बहाना करती और आवाज में विचित्रता ला कर उत्तर देती "बस चाची मुगालता देने में तुम होशियार हो। साफ उत्तर क्यों नहीं देती।" और वह टेलीफोन बन्द कर देती।

वर्षा बन्द होगई थी। मैं चाय पीकर बाहर के बरामदे में घूम रही थी। अमर बगीचे में घूमने निकल गया था। हमारे बाग में एक कोने में बड़ा सा कुआँ था। मैं कभी-कभी उस कुए की ओर घूमने चली जाया करती थी। टहलते टहलते कुए की ओर चलने का इरादा हो गया। सारे बगीचे में जगह जगह पानी भर आया था। कुए की ओर जाने की पग डन्डी साफ थी। चलने में कोई दिक्कत नहीं हो रही थी। अमर, माली और एक नौकर को साथ में लेकर पौधों को ठीक करवाने में,इकट्ठे हो गये पानी को पास की गटर में निकालने के लिए दौड़ धूप कर रहा था। मैंने पहली बार तो मन ही मन अमर की ओर चलने का इरादा किया लेकिन फिर विचार आया- "चलो आज श्रीमती मोदी के यहाँ श्रीमती मोदी,और उनके बच्चों को अचम्भे में डाल दूँ। उन्हें कल्पना भी न हो सकेगी कि एकाएक बिना सूचना दिये ही मैं कैसे पहुँच गई। कुए के पास ही तारों की बाढ़ टूटी हुई थी। इस ओर श्रीमती मोदी का पिछ बाड़ा था। मैं काँटों के

तारोंको हटाकर श्रीमतीं मोदी के बंगले की सीमा में पहुँच गई।

धोरे धीरे चल कर मैं पिछवाड़े को रास्ते के पास पहुँच गई। पास के कमरे की खिड़की आधी बन्द थी। अन्दर नाता के बोलने की आवाज आ रहो थो। मैं दीवाल के पास खड़ी थी मन में न जाने क्यों नीता की बातें सुनने की उत्सुकता जाग उठी। मैं थोड़ी सी सरक कर खिड़की के पास ही आ गई: न ता टेलीफोन पर किसी से बातें कर रही थी। मैं सुनने लगी। नीता कह रही थो कि बादल बिखर गये हैं आसमान साफ है बगीचे के पेड़ पौधे फूल पत्तियाँ मुस्करा रहे हैं। अब तो बस तुम्हारी ही कमी रह गई है। मेरी उत्सुकता और तेज हुई। सामने बात करने वाला जरूर पुरुष ही होगा और नीता को उससे प्यार होगा। नीता थोड़ी देर रूक कर पुन: बोलने लगी" क्या कहा वर्षा की रातों में तुम मुझे ही याद करते रहे हो? झूठ बिल्कुल झूठ?? अगर तुम्हें इतना ही प्रेम था तो पागल बनकर यहाँ दोड़े नहीं आते। तुम झूठे हो एक दम झूठे। मैं सोचने लगी जरूर नीता का प्रेमी लोनावाला में ही किसी बंगले में रहता है और इस मूसलाधार वर्षा में वह आनहीं पाया इसीलिए नीता उसे उलाहना देरही है। नीता फिर बोलने लगी क्या रास्ते में भयंकर पानी था। पर तुम तो पीछे का रास्ता जानते हो पड़ोस के कुँए का रास्ता भी तो तुम्हें मालूम ही है। मैं दरवाजा खोल देती पर तुम्हारा आने का इरादा होता तब न। मैं मन ही मन कल्पना करने लगी। नीता का प्रेमी शायद उत्तर दे रहा होगा नीता मुझ पर विश्वास करो न। इस मूसलाधार पानी में आता और कहीं खड्डों में गिर पड़ता चीखता और पड़ौसी देख लेते तो कैसी बुरी गति होती। मैं आगे कुछ सोचती उससे पहले ही नीता का स्वर सुनाई पड़ा, झूठी बहाने बाजी है। तुम झूठ बोलने में माहिर? मुझे तुम्हारा कतई विश्वास नहीं है। झूठे कहीं के।" मेरी कल्पना

शक्ति पुनः जागी। मैं सोचने लगी। नीता का प्रेमी उत्तर दे रहा होगा" नीता डार्लिंग यह क्या गजब कर रही हो। तुम कहो तो मैं अभी चला आता हूँ। लेकिन तुम्हारे डेडी-मम्मी घर पर होंगे और वे इस समय मुझे आया हुआ देखकर जरूर पूछेंगे-अरे बड़े सबेरे कैसे आ गये आज ? तो मैं क्या जवाब दूँगा। मुझे नीता का उत्तर सुनाई पड़ा। "डेडी तो डाक्टर सोनावाला के यहाँ गये हैं। मम्मी को जुकाम हो गया है। तुम भागते हुए चले आओ न।" बात बंद हो गई। मैं सोचने लगी तो नीता का लव अफेयर चल रहा है और वह काफी हद तक पहुँच भी गया है। चलो आने दो उसके प्रेमी को एक बार मैं देख तो लूँ।" मैं और कुछ सोचती उससे पहले ही नीता की खिड़की अपने आप खुल गई। कमरे के अन्दर मेरी नजर नीता की ओर पड़ी। एक आदमकद शीशे के सामने नीता खड़ी थी। मैं उसे देखने लगी। शीशे में अपने चेहरे को बड़ी गौर से नीता देखती जा रही थी। मेरी कल्पना जागी। मेरा मन कह उठा अपने प्रेमी से बातें करने के बाद अब नीता अपने आप को सजा रही है। लेकिन एका एक नीता जोर से हँस पड़ी और शीशे के सामने नाचने लगी। मैं उसको देखने लगी। मेरी और उसका ध्यान जाने प्रश्न ही नहीं था। नीता नाचते नाचते रुक गई। पुनः शीशे में आंख मटकाकर बोली" क्यों बोलते क्यों नहीं। बोलो न आने का इरादा नहीं है क्या। कायर ? बुजदिल ? डर लगता है। बोलो मौन क्यों रह गये। आ रहे हो इसी घड़ी..........
नीता जोर से हँसी और मुड़कर दरवाजे की ओर चल पड़ी। उसकी नजर खुली खिड़की पर पड़ गई थी। मैं फुर्ती से खिड़की से हटी उसने मुझे देख लिया। मेरा कल्पना का ढाँचा बिखर गया था। नीता तो शीशे के सामने खड़ी खड़ी अभ्यास कर ही रही थी। मैं बड़े असमंजस में पड़ गई। नीता से मिलूँ या लौट

चलूँ । मैं कुछ तय कर पाती उससे पहिले ही नीता दरवाजा खोलकर भागती हुई बाहर आ गई और मुझ से लिपट गई। मैंने भी उसे बाहों में भर लिया । हम दोनों धीरे-धीरे चल कर उसके कमरे में पहुँची । मैं कुर्सी पर बैठी ही थी कि कमरे में टेली फोन की घटी बजी । नीता भाग कर उस ओर गई । मैं कुर्सी पर बैठी बैठी अपनी कल्पना शक्ति पर विचार करती रही और अपनी बेवकूफी पर मन ही मन हंसती रही । मन में ख्याल आया नीता को लगन है इसका कलाकार मन विकसित होना चाहता है । क्यों नहीं इसे आगे बढ़ने में सहायता दी जाय । मैं और कुछ सोच पाती कि उससे पहिले ही नीता की आवाज सुनाई दी–चाची ! प्रतिभा चाची ! आपका फोन है मैं भागी-भागी पहुँची । फोन का चोंगा कान में लगाया । अमर बोल रहा था "प्रतिभा बम्बई से सुप्रसिद्ध प्राड्यूसर भजन कमलानी आये हैं । वे चित्र शुरू करना चाहते हैं । तुम्हारे कंट्रक्ट के सम्बन्ध में तय करने आये हैं । तुम झटपट आ जाओ ।" मैंने चोंगा रखा और चलने लगी । नीता मुझे रोककर कहने लगी–"अरी चाची चाय तो पीकर जाओ । तुमने तो कोई बात ही नहीं की ।" वह इतनी देर में अपनी झेंप दूर कर पाई और अब मुझ से अपने दिल की बातें करना चाहती थी लेकिन मेरे लिए रुकना संभव नहीं था । मैंने उसे समझाते हुए उत्तर दिया "घर पर बम्बई से महमान आये हैं । जरूरी काम है, मैं कल तुमसे दिन भर बातें करूँगी ।" मैं चलने लगी । नीता दरवाजे तक मेरे साथ आई और मुझे हाथ जोड़कर बिदा करती हुई बोली, "देखो चाची कल सुबह जरूर आओगी । वादा पक्का रहा न ? मैंने स्वीकृत सूचक सिर हिलाया और कांटों के तारों की ओर चल पड़ी ।

जैसे ही मैंने ड्राइग हाल में प्रवेश किया कुर्सियों पर बैठे दो

आदमी खड़े हो गये और मेरी ओर देख कर उन्होंने नमस्कार किया। मैंने प्रति नमस्कार किया। एक को तो मैं देखते ही पहिचान गई। "स्वर संगम" के प्रीमियर में समरेश ने मुझे उससे परिचित कराया था। लगभग ६ फीट की उंचाई। भारी भरकम शरीर, गोरा रंग, गोल मटोल छोटी-छोटी आंखें लेकिन नजर बहुत ही पैनी। गरम सूट पहने हुए। मुझे याद आया शायद यही भजन कमलानी है। दूसरे आदमी को मैंने पहले कभी नहीं देखा था। मैं जैसे ही कुर्सी के नजदीक पहुँची अमर ने श्री कमलानी की ओर इंगित करके कहा, "आप हैं श्री भजन कमलानी फिल्मी दुनियाँ के प्रोड्यूसर।" श्री कमलानी ने मेरी ओर हाथ बढ़ाया। मैं नमस्कार करना ही चाहती थी कि श्री कमलानी ने मेरा दाहिना हाथ अपने हाथ में लेकर कहा" मैं तो आपसे पहिले ही मिल चुका हूँ। शायद आपको याद नही रहा होगा" मैंने जान बूझ कर भूलने का अभिनय किया। कमलानी बोलता गया, "स्वर संगम" के प्रीमियर पर। वाह वाह क्या कमाल का एक्टिंग किया है। आपने शेखी बघारने वाली हीरोइनें तो पानी भरेंगी आपके सामने। "स्वर संगम" जुबली करेगा, मैं शर्त लगाकर कहता हूँ। कमलानी और भी आगे बोलता जाता लेकिन अमर ने बीच में बोलना शुरू कर के उसे रोक दिया। अमर ने कमलानी के साथी की ओर इशारा करके कहा, "आप हैं मिस्टर हरवंश-चावला। लुधियाना जिले के मशहूर जमींदार। आप श्री कमलानी के भागीदार हैं।" मैंने मिस्टर चावला को हाथ जोड़-कर नमस्ते किया। चावला फिल्मों की दुनियां में प्रवेश कर हीरहा था। लगभग २८ या ३० वर्ष की उम्र थी। एक दम सुर्ख रंग। बड़ी बड़ी आंखें। हाथों पर घने बाल। गरम शूट पहने हुए चावला ने भी मुझे नमस्कार किया। वह आंखें नीचे किये

ही मेरी ओर देखने का प्रयत्न कर रहा था। फिल्मों की मशहूर हीरोइन को इतने नजदीक से देखने का उसका पहिला ही अवसर था शायद । एक ओर अपने धंधे में उस्ताद जमानों की ठोकरें खाया हुआ, हरफन मौला सा कमलानी था, तो दूसरी ओर नया नया पंजाब से। निकला फिल्मी दुनियाँ के सपनों को देखने वाला चावला। कमलानी ही उसे पटा कर लाया था। चावला मौन अपनी कुर्सी पर बैठा रहा। कमलानी ने बात शुरू की। वह बोला, "प्रतिभा देवी मैंने अमर साहब से अभी जिक्र किया ही था। उन्होंने कहा वह आपका जातीय मामला है। आप ही फैसला करेंगी।" मैं कमलानी की ओर देखती जा रही थी कमलानी कहता गया, "हमने अपनी कम्पनी शुरू की है नाम है के० सी० प्राडक्शन। हम अपनी नई तस्वीर बहुत जल्दी शुरू करना चाहते हैं। मिस्टर हरवंश ने तो स्क्रीन प्ले भी तैयार करवा लिया है। अमर बीच में ही बोल उठा किसे लिखवाया है स्क्रीन प्ले आपने ? कमलानी ने उत्तर दिया मुंशी ताहिर लुधियानवी है। उर्दू के आला अदीव उन्हीं की मशहूर कलम का करिश्मा है। बस कमाल किया है। हीरोइन को ही ऊचा उठाया है। मैंने मुंशी ताहिर को लिखते वक्त कहा "मुंशी जी ऐसा लिखिए कि ऐरे गेरे लिखने वालों को गश आजाय पढ़ कर। बस मान लिजिए लिखा क्या है। कुछ बयान नहीं किया जा सकता।" कमलानी बेतरतीब और भी बोलता चला जाता लेकिन चावला ने अपना मौन तोड़ा। उसने मेरी ओर देखा और बोला स्क्रीन प्ले तो आप पढ़ लीजियेगा बाद में। अभी तो सवाल है हीरोइन तै करने का। आप से इसी मुतल्लिक तय करने आये हैं हम लोग।" कमलानी को अब अपनी भूल नजर आई। वह चावला को रुकने का इशारा कर बोलने का प्रयास कर रहा था। लेकिन चावला ने

उसे टोक कर कहा, "आप थोड़ा ठहरिए कमलानी साहब। कमालाना झें. गया। चावला बोलता गया, "हम चाहते हैं आप हमारी तस्वीर में हीरोइन बनना मंजूर करें। आपसे यह दरख्वास्त है ? चावला अपनी बात कहकर रुक गया। मैंने अमर की ओर देखा। बाजार में अपने क्या भाव तय करूँ, यह मैं समझ नही पा रही थी। अमर ने मेरी दुविधा को समझ लिया। उसने झट से चावला को उत्तर दिया "चावला साहब आपका प्रस्ताव तो प्रतिभा देवी को मंजूर है लेकिन उनकी रकम होगी डेढ़ लाख रुपए।" कमलानी बीच में अचम्भे के भाव का प्रदर्शन करता बोल उठा डेढ़ लाख। लाहोबिलाकूबत अमर साहब -जुल्म ढ़ा रहे हैं हम गरीबों पर। 'स्वर संगम' में तो बीस हजार ही दिए थे और हम पर यह जुल्म क्यों ? बीस के दुगने ले लीजिए।" कमलानी ने चावला की ओर कुछ इस प्रकार देखा मानों कह रहा हो तुम नहीं जानते फिल्म वालों को हरवंश सिंह चावला ! ये बडे चार सौ बीस होते हैं। तुम नये-नये हो मैं हूँ बुजुर्ग खुर्राट। लेकिन चावला ने उसकी ओर देखा तक नहीं और देख कर बोला मुझे आपकी रकम मंजूर है।" और उसने अमर की ओर देखा। अमर पुन: बोला पच्चीस हजार कान्ट्रेक्ट पर सही करने पर और पचास हजार ब्लैक में कान्ट्रैक्ट केवल पचहत्तार हजार का ही होगा।" कमलानी फिर चिल्ला उठा, अमर साहब यह क्या कर रहे हैं। हम इस तरह तो मर जायेंगे। आधा तो ब्लैक में चला जायेग।

अमर ने उत्तर दिया "प्रतिभा देवी की अभी तो तबियत ठीक नहीं। आप फिलहाल रहने ही दीजिए इस सौदे को। जब तबियतठीक होगी तो :आप से तय कर लेंगे। चावला ने अमर की ओर देखा। मैंने भी अमर की ओर देखा। मैं अमर का

अभिप्राय समझ नही पा रही थी। मैंने सोचा यह मौका अब यहीं खत्म हो जायेगा। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। चावला सौदा तय करने का ही फैसला करके आया था और ठीक भी है। ऐसी बारिश में बम्बई से आने आला आदमी सौदा करके नहीं जाय यह कैसे हो सकता है। चावला ने थोड़ी देर कुछ सोचा और फिर बोला, "आपकी शर्तें मुझे मंजूर है। अब मेरी एक शर्त आप को मंजूर करनी पड़ेगी।" अमर ने चावला की ओर देखा। मैं भी उसी की ओर देखती रही। कमलानी का चेहरा मुर्झा गया था। वह बन कर तो आया था प्रमुख प्राड्यूसर' लेकिन सारी पहल उसके हाथ से निकल गई थी। मैं बोली, "बोलिए चावला साहब हमें आपकी शर्त मजूर होगी।" " और मैंने अमर की ओर देख कर कहा, "क्यों अमर ?" अमर ने भी सिर हिला कर स्वीकृति दी। चावला बोला, "आप लगातार ६० दिन शूटिंग के मुझे देंगी और मेरी तस्वीर के बनने के दौरान आप दूसरी किसी तस्वीर में काम नहीं करेंगी।" अमर और मैं दोनों मौन रह गये। अमर की पटकथा तैयार थी। मुहूर्त करने की देर थी अमर कुछ बोल नहीं पा रहा था। आखिर वह बोला आपकी शर्त तो प्रतिभा देवी को मंजूर होगी ही, लेकिन··· ·······" वह बोलता बोलता रुक गया। सब मौन थे। ड्राइंग रूम में कुछ देर मौन छा गया। मेंने सोचा एक शर्त और रख दूँ और अगर वह इन्हें मंजूर नहीं हा तो सौदा टूट जायेगा। मैंने चावला की ओर देखा और कहा, "आपकी शर्त एक शर्त पर मंजूर है और वह है··············।" चावला मुझे रुकते देख कर बोला, 'रुक क्यों गई आप। मुझे तो हरशर्त पर आपको अपनी तस्वीर में लेना है।" मैं साहस करके बोली " चित्र के हीरो अमर रहेंगे" मेरे मन से भार दूर हो गया। अमर बड़े पशोपेश में पड़ गया पर चावला के चेहरे पर

मुस्कराहट दौड़ गई । वह बड़े उत्साह से उछल कर बोला, 'मंजूर है, मंजूर है '? ? वाह आपने मेरी समस्या हल कर दी । मैं भी तो अमर साहब से ही यह दरख्वास्त करने ही वाला था । अमर बीच में ही बोलने का प्रयास करने लगा । लेकिन ··· ···········।" चावला ने मुझे आगे बोलने ही नहीं दिया और जोर से हँसकर बोला, "अब जल्दी मुँह मीठा कराइये । सब कुछ तय हो गया । अमर साहब की रकम पचहत्तर हजार लेकिन अब ब्लैक का नाम नहीं ।" सब ठहाका लगा कर हँस पड़े । मैंने नौकर को आवाज दी, "कृष्णा, ओ कृष्णा । जल्दी जलपान ले आओ । हां कलकत्त के रसगुल्ले रखे हैं वो जरूर लाना ।" कृष्णा ने रसोई घर से ही उत्तर दिया, "लाया मेम साहब अभी लाया " कमलानी ने जब देखा कि चावला ने सारी पहल अपने हाथ में लेकर सारे फैसले भी कर दिये हैं तो उसने रुख बदल दिया । वह जोर से बोला, "बधाई ? बधाई ? ? अमर साहब और प्रतिभा देवी को बधाई । हम रवाना हुए तो सामने भंगिन आई थी । मैंने चावला साहब को कहा था-चावला साहब सौदा तय हो जायगा । शकुन जोर दार है ।" और उसने चावला के हाथ को अपने हाथ में लेते हुए कहा 'क्यों चाबला साहब मैं ठीक कह रहा हूँ न ।' कुछ देर मौन रह कर बोला, "तो कांट्रेक्ट तैयार करलें, शुभ काम में देरी कैसी ? अमर ने मेरी ओर देखा और मैं बोली, "पर टाइप राइटर तो यहाँ नही है ।" चावला ने उत्तर दिया "आप टाइप राइटर की फिक्र मत करिए । मैं अपने साथ कार में लाया हूँ" और उसने कमलानी की ओर देखा । कमलानी झट उठा और उसने ड्रायवर को आवाज दी । ड्रायवर ने शायद आवाज नहीं सुनी । कमलानी स्वयं ही गया और टाइप रायटर और स्टाम्प पेपर ले आया । चावला ने बड़ी फुर्ती के साथ कांट्रेक्ट टाइप

किया। कांट्रेक्ट पर मेरे और चावला के हस्ताक्षर हो गये। चावला ने २५ हजार का चैक हस्ताक्षर करके दे दिया। अमर का कांट्राक्ट भी तैयार हो गया और उसके भी हस्ताक्षर होगए उसे चावला ने १५ हजार का चैक दे दिया। थोड़ी ही देर में सब कुछ तय हो गया। नौकर नाश्ता ले आया था। हम लोग नाश्ता करते हुए इस प्रकार बातें करने लगे मानों हमारा आपस का परिचय बहुत पुराना हो। नाश्ता करने के बाद चावला और कमलानी बम्बई लौट गए। मैंने और अमर ने उन्हें रुकने के लिए काफी कहा लेकिन वे रुकने को राजी नहीं हुए।

जब चावला की कार आंखों से ओझल हो गई तो अमर ने मेरे हाथों में लेते हुए कहा, "सुबह से ही मेरी अन्तरात्मा कह रही थी कि आज कोई शुभ कार्य होगा। मैं बगीचे में घूम रहा था। सांप दाहिनी ओर से निकले तो बड़ा शुभ होता है। हुआ भी यही। बड़ा सुन्दर कान्ट्रेक्ट हो गया। मैं केवल अमर की ओर ही देखती रही। अमर ने मुझे खींच कर अपनी छाती से चिपका लिया। दूर माली के खांसने की आवाज से मैं चौंकी और फुर्ती से ड्राइंग रूम में आ गई।

दूसरे दिन सुबह अमर और मैं श्री मोदी के यहाँ चले गये सुबह नीता आ गई और कहने लगी :' चाची मम्मी ने आप दोनों को बुलाया है खमण और ढोकला तैयार किये हैं आप चलिए जलपान करने। नीता को इंकार करना बड़ा मुश्किल था। वह पीछे पड़ गई। श्री मोदो के यहाँ इधर उधर की गप्पें लगती रहीं। श्री मोदी ठहरे प्रसिद्ध उद्योग पति। श्री मती मोदी के स्वास्थ्य के सुधार के लिए अपनी मर्जी के खिलाफ उन्हें लोनावाला आना पड़ा था। फिर भी सप्ताह में तीन दिन तो वे बम्बई ही रहते। श्री मती मोदी की बातें करने की आदत थी। कोई भी उनके पास बैठ गया तो दो घण्टे तक उसे वे उठने

ही नहीं देती। मेरे लिए पड़ौसी वही थीं अब उनके यहाँ गये बिना गुजारे भी नहीं था। दो लड़कियाँ थो नीता और गाता। नीता १८ या १६ साल की बी० ए० फाइनल की विद्यार्थी गोता १४ या १५ साल की प्रथम वर्ष कला की विद्यार्थी। नीता बहुत बातूनी लेकिन अत्यन्त भावुक थी। कुछ तेजी से कह दो रो पड़े। हँस तो जोर जोर से इस कदर कि वायु मंडल गूँज उठे। गीता गभीर, मित भाषी चेहरे पर मुस्कराहट का नाम तक नहीं, दोंनों की प्रकृति एक दूसरे से एक दम भिन्न। मुझे नीता से ही स्नेह था। वही दौड़–दौड़ कर हमारे बंगले पर आ-जाती। फिल्मों में अभिनय करने का गहरा शौक। उसे आशा थी कि मैं उसे एक दिन अपने मुकाबले की हीरोइन बना दूँगी। श्री मोदी दोनों लड़कियों की भावनाओं से बेखबर। उन्हें अपने एक्सपोर्ट-एम्पोर्ट, मशीनरी कपड़ा, बर्तन, उनको बिक्री-बस इन्हीं बातों से मतलब था।" श्री मती मोदी को फिल्मी दुनियाँ से विचित्र सी, दिलचस्पी थी। अशोक कुमार ने किस हीरोइन के साथ कब काम किया, कौन से चित्र में वह उसकी बेटी बनी फिर बहिन बनी और अब पत्नी बन रही है। श्री मती मोदी बड़ी दिलचस्पी लेकर और बड़े हावभाव से ये सारी कथाऐं सुनाती। हम लोग श्री मती मोदी के खमण और ढ़ोकलों की प्रशंसा कर रहे थे और श्री मती मोदी कह रही थी, "मैंने मोती लाल तथा डायरेक्टर महबूब को भी एक बार खमण-ढ़ोकले खिलाये थे। किशोर शाहू और वीनाराय तो ढ कले की प्रशंसा करते करते अघाते नहीं थे। बस अब तो दिलीप कुमार और राजकपूर को एक बार बुलाना भर है। श्री मती मोदी कुछ आगे कहती तभी नीता बोल उठी, "मम्मी ? एक बार देवानन्द को मलाबार हिल वाले बंगले बुलाओ न" श्री मोदी ने इस बार नीता की ओर देखा और कहा और फिर ढोकले

का एक टुकड़ा चबाते हुए बोले, "बेबी कौन देवानन्द। उसका भाई चेतन आनन्द तो मेरे पास आया था। सेठ मलखानी ने उसे फायनेन्स किया है। तुम कहो तो देवानन्द को कल ही बुला लें।" नीता कुर्सी से उठी और अपने पिता के गले में दोनों हाथ डाल कर नाचने लगी। श्री मोदी झुंझला उठे "वेबी डोन्ट बी सिली। क्या बचपन है। मेरी गर्दन दर्द करने लगी है।" नीता हाथ अलग करके खड़ी हो गई। तभी टेलीफून की घंटीबजी गीता ने चोंगा उठाया और बोली, "प्रतिभा देवी आपका फोन है" मैंने चोंगा कान से लगाया ? समरेश बोल रहा था। मैंने उसे कहा,"आप बैठिये मैं अभी आई।" जलपान हो चुका था। अमर और मैं उठे और चल पड़े। नीता कहती रही "चाची बातचीत का मजा ही नहीं आया न जाने कौन बिना बुलाए टपक पड़ा।" मैंने नीता की नाक पकड़ कर उसे खींचा और उसके गाल पर चपत लगाकर चल पड़ी। नीता चिल्लाती रही" चाची कल जरूर आना। नहीं आई तो याद रखना-हां हां हां।"

समरेश अकेला था। कुर्सी पर बैठा सिगार पी रहा था। कृष्णा ने कुर्सीयाँ और टेबिल बाहर बरामदे में ही खींच लिए थे। समरेश ने मुझे देखते ही पूछा, "अब कैसी है तुम्हारी तबियत प्रतिभा ! जब तुम्हारी तबियत खराब होने का सुना तो बड़ी चिंता हुई। काम में फँसा रहा अत: आ नहीं सका। नये चित्र की पटकथा व सहायक कलाकारों को तय कर लिया है। बस तुमसे ही तारीखें तय करनीं थीं । अगले माह की पहली तारीख को मुहूर्त तै कर लिया है।" मैं कुछ बोलना ही चाहती थी लेकिन समरेश ने मुझे बोलने ही नहीं दिया वह बोलता ही गया "तुमको यह सुनकर खुशी होगी कि अशोक कुमार नायक के काम के लिए राजी होगया है।" समरेश की नजर अमर की ओर पहुँची। अमर इतनी देर तक खड़ा ही रहा था। वह हम

दोनों को अकेला छोडकर कमरे में चला गया। कृष्णा चाय और बिस्कुट ले आया मैंने चाय बनाने के लिए पोट उठाया और बोली, "पर समरेश बाबू यह सम्भव होगा कैसे। गत माह की पहली तारीख को मुहूर्त और शूटिंग भी दूसरे दिन से ही रखेंगे ?" समरेश ने कहा लगातार शूटिंग जरूरी है। इसके बिना तो चित्र तैयार कैसे होगा।

"लेकिन समरेश बाबू अगले दो माह तो दूसरे प्रोप्राइटर को दे चुकी हूँ। उससे एडवांस रकम भी ले ली है मैंने कहा।"

"तो उस प्रोड्यूस की रकम लौटा दो।

है कौन वह प्रोड्यूसर।" समरेश लापरवाही से बोला।

"यह कैसे हो सकता है समरेश बाबू। आप दो माह ठहर कर ही शूटिंग शुरू करिये न ? तब तक के० सी० प्रोडक्शन का शूटिंग समाप्त हो जायगा बाद में आप का शुरू हो जाएगा।" मैंने धीरे से कहा।

समरेश ने मेरे कहने का गलत अर्थ लगाया। उसे अमर का इस प्रकार चला जाना अच्छा नहीं लगा था। उसका चेहरा तमतमा उठा। वह क्रोधित हो बोला, "तो यह कहो कि तुम मेरे चित्र में काम करने को राजी नहीं हो। झूठे बहाने क्यों बनाती हो।" मैंने शांत रह उत्तर दिया। "समरेश बाबू आप गलत समझ रहे हैं। कल ही तो कांट्रक्ट पर हस्ताक्षर किये हैं। अब आप ही तो सोचिये। मैं बेकार मुकदमे बाजी में फँस नहीं जाऊँगी।" समरेश का चेहरा लाल-लाल हो रहा था। वह और क्रोधित होकर बोला, "मैं समझ गया। यह सब अमर की करतूत है मेरे कार्यक्रम को असफल बनाने के लिए उसने नया कांट्रेक्ट भी करवा दिया। लेकिन कुछ भी हो तुम्हें मेरे चित्र में काम करना ही होगा। एक ओर अमर है तो दूसरी ओर मैं हूँ। प्रतिभा इतनी जल्दी सब कुछ भुला रही हो। मैं

समरेश को जवाब देना चाहती थी कि अमर कमरे से बाहर निकल आया और बोला, "दादा ! मुझे बेकार बीच में क्यों घसीट रहे हो। आप जाने और प्रतिभा जाने। मैंने तो कांट्रेक्ट कराया नहीं। हां अच्छे काम की सलाह तो प्रतिभा को दूंगा ही।" समरेश क्रोध से कांप रहा था। वह जोर से बोला, 'अब रहने दो अपनी सफाई। मैं बच्चा नहीं हूँ। मैंने भी दुनियाँ देखी है। विदेश जाकर झूंठ और फरेब का व्यापार मैंने नहीं सीखा समझे।" अमर को समरेश के इस इल्जाम लगाने पर गुस्सा आ गया लेकिन सांयत रह कर बोला दादा में आपकी इज्जत करता हू और आप मुझे भला बुरा कह रहे हैं। आप अन्याय कर रहे हैं दादा। समरेश जोरों से भड़क उठा मुझे न्याय और अन्याय की शिक्षा दे रहे हो। अपना विशाल ज्ञान अपने पास ही रहने दो। मैंने जैसे प्रतिभा और तुमको विशाल बनाया वैसे और कई हीरोइनें और हीरो बनाकर पेश कर दूगा। समरेश तुम लोगों का गुलाम नहीं है। अपने अहम को दिमाग से निकाल दो। मुझे तुम्हारी जरूरत नहीं। प्रतिभा की कमाई पर तुम ही जीते रहो और अपनी प्रतिष्ठा बढाते रहो मुझे यह पता नहीं था कि आदमी इतना घिनौना और स्वार्थी होता है। समरेश टेबल पर जोर से हाथ पटक कर उठ खडा हुआ। टेबल पर रखे प्याले और रकाबियां उछल कर जमीन पर गिर पडीं। समरेश झटपट अपनी कार की ओर बढा। दरवाजा खोल कर कार में बैठ गया। ड्रायवर को गाडी रवाना करने का आदेश दे दिया। में किंकर्तव्यविमूड सी कभी अमर तो कभी समरेश की ओर देखती रही। समरेश की कार चल दी। अमर अपने आप में खोया भागती कार को देखता रहा। मैं उसके पास आकर खडी हो गई।

समरेश की बातों से अमर तड़फ उठा। दिन भर अनमना सा बैठा रहा। मैंने समझाने की काफी कोशिश की। पर वह लगातार कहता रहा, " नहीं प्रतिभा मैं मोम का थोड़ा ही बना हूँ कि मामूली गरमी लगते ही पिघल जाऊँगा।" वह चाहे जो कुछ भी कहता रहा हो मुझे उसके चेहरे से साफ दिखाई दे रहा था कि समरेश के कथन में उसके हृदय पर गहरी चोट पहुँचाई थी। मैं अमर को नाना प्रकार की बातों से बहलाने की कोशिश करती रही लेकिन एक बार मन खराब हो जाने पर सरलता से बहलाया नहीं जा सकता।

शाम का समय था। सूर्य अस्त हो चुका था। हम दोनों बगीचे में घूमते-घूमते सड़क पर आ गये। धीरे-धीरे कदम उठाते हुए निरुद्देश्य सड़क पर चल पड़े। अमर मौन था। मैं सोच रही थी कि बात की शुरुआत कैसे करूँ आखिर ख्याल आया नीता के बारे में ही क्यों न बात करूँ। मैं बोल उठी, "अमर तुमने नीता को देखा है न।" अमर ने हूँ "कह कर उत्तर दिया। " उस लड़की के बारे में तुम्हारी क्या राय है। वह लड़की तुम्हें कैसी लगी। " अमर चलते-चलते रुक गया और मेरी ओर देखकर बोला, "किस संबन्ध में राय पूछ रही हो लड़की भली है। सभ्य है और क्या।" मैंने उसकी ओर देख कर कहा, "नीता चाहती है फिल्मों में काम करना। उसकी इच्छा है कलाकार बनने की।" अब मेरी बात का अर्थ अमर को स्पष्ट समझ में आया। वह बोला अच्छा तो इस सम्बन्ध में मेरी राय पूछती हो! मैंने नीता को अभिनय करते कभी देखा ही नहीं तो एकाएक राय कैसे दे डालूँ। हां बातचीत में बड़ी चंचल है। चेहरा भी फोटो जेनिक लगता है। लेकिन कैमरे के सामने खड़ी करके सही राय कायम की जा सकती है। मैंने बात को चालू रखते हुए कहा, "नीता मेरे पीछे पड़ी है

कहती है मुझे भी अपनी फिल्मों में काम करने का मौका दो।"

फिलहाल तो मैंने उसे टाल दिया है लेकिन वह मेरे पीछे तो पड़ेगी ही।"अब की बार वह पीछे पड़ी तो तुम्हारे सामने उसे लाकर खड़ी कर दूंगी। अमर ने कदम उठाया और चलता चलता बोला, "स्टिल कैमरा तो तुम्हारे पास है ही। उसके कुछ फोटो भी खींच लेना। यूं लड़की ठीक ही दीखती है छोटा सा काम दे देंगे।" अमर चलता रहा। मैं अमर के मौन को ही तोड़ना चाहती थी। अमर का मौन टूट चुका था। अब मैंने चित्र की चर्चा चलाना ही ठीक समझा। मैं बोली, "पर अमर हम अपने नये चित्र को कब तक शुरू कर सकेंगे। अभी तो हमें के० सी० प्रोडक्शन के चित्र को पूरा करना है न।" अमर शायद कुछ सोच रहा था। वह कुछ बोला नहीं। मैं बोलती ही गई, बंबई पहुंचने पर तो उनके चित्र को पूरा करने में जुट जाना पड़ेगा। फिर हमारे चित्र का काम तो तीन चार माह के लिए रुक गया ही समझो!" अमर ने मेरी ओर नहीं देखा। वह सामने की पहाड़ी की ओर गौर से देख रहा था। कुछ सोचकर उसने उत्तर दिया, "वाह' हम अपना सारा समय के सी प्रोडक्शन को ही दे देंगे तब तो हमारा काम हो चुका। हमें अपने काम को भी शुरू करना ही होगा। यूं पटकथा तो तैयार ही है। एक बार फिर उसे अच्छी तरह से देख लेना है। हम लोग अपते चित्र का मुहूर्त तो कर ही देंगे। फिर सारे गाने रिकार्ड कर लेंगे।" मैं बीच में ही बोल उठी "पर इससे चावला या कमलानी को ऐतराज तो नहीं होगा।" अमर ने झट से उत्तर दिया, "फिल्म के धंधे में प्रोड्यूसर के एतराज की परवाह करके तो हम जिन्दा रह लिए। हमने उनसे काम करने का कांट्रेक्ट किया है। हम उनके हाथों

बिक थोड़े ही गये हैं। अपना मुहूर्त होगा और काम शुरू होगा।" मैंने कोई उत्तर नहीं दिया। मैं धीरे-धीरे कदम बढ़ाती हुई चलती रही। सामने गिरजाघर दिखाई दे रहा था। ईसाईयों की टोलियाँ गिरजा घर की ओर जा रही थीं। मुझे उनकी टोलियाँ देखकर ख्याल आया कि आज रविवार है। मैंने अमर से कहा, "चलो न, आज गिरजा घर में चलें। पादरी के भाषण सुनेंगे।" अमर ने मेरे कथन को मानो सुना ही नहीं। वह अपने आप ही बोलने लगा, फिल्म लाइन में ज्यादा भले बनने से कोई फायदा नहीं है। समरेश बाबू के साथ इतना अच्छा रिश्ता रखा तो उन्होंने उसका बदला अंट संट बक कर दिया। कुछ भी ख्याल नहीं रहा उन्हें कि "स्वर संगम" की सफलता के लिए मैंने किस प्रकार दिन रात एक कर दिये थे। एडिटिंग में जान लगादी। पूरे बीस दिन तक खाने का ख्याल नहीं रहा, सोने की परवाह नहीं की। रेमनार्ड लेबोरेटरी के एडीटिंग रूम की फर्स पर ही घंटे दो घंटे सोकर तसल्ली कर ली और उसका नतीजा क्या निकला। समरेश ने यहां आकर झूंठ सच बका। "मैं अमर की ओर देख रही थी। अमर के चेहरे पर गुस्से के भाव तो नहीं थे लेकिन समरेश के प्रति गहरी घृणा उसको आंखों में झलक रही थी। मैंने सड़क पर रुक कर कहा, "समरेश को उसके अहम ने दवा लिया है। 'स्वर संगम" की सफलता को वह अपनी अकेले की ही सफलता समझता है। उसका दृष्टि कोण एकांगी हो गया है।" मैं आगे कुछ बोलती उससे पहले अमर बोल उठा, ...दृष्टि कोण एकांगी तो है ही पर समरेश के सिर पर सफलता का नशा भी सवार हो गया है। वह समझता है कि किसी भी कलाकार को बनाया भी जा सकता है और बिगाड़ा भी जा सकता है। वह आज के चित्रों के ट्रेन्ड को कतई नही समझता है। अपने

अतीत के चित्रों की सफलताके घेरे में घूम रहा है। मैं देखता हूँ कैसे दूसरा चित्र सफल बनता है।" अमर के होठ फड़क रहे थे। ललाट पर पसीने की चंद बूंदें खिल आई थीं। उसने रुमाल निकाल कर पसीना पोंछा और पुन: बोलने लगा। "आज लोगों को चाहिये सेक्स व सस्ता मनोरंजन। हालीवुड के चित्रों सा मनोरंजन। और समरेश बनायेगा वही पुराने ज्यू थिएटर जैसे धीरे-धीरे चलने वाले चित्र। मैं भी देखता हूँ उसका अगला चित्र कैसे सफल होता है।" मैंने अमर की ओर नहीं देखा। मेरी नजर गिरजे की ओर थी। गिरजे के घंटे ने जोर से आवाज की। सारा वायु मंडल घंटे की ध्वनि से भर गया। पक्षियों का एक झुंड पास के पेड़ों की सघनता से निकल कर हमारे ऊपर से उड़कर निकल गया। मैं पक्षियों के उस झुंड को देखने लगी। अमर मौन चल रहा था। मैंने उसके मौन को भंग किया। मैं बोली, समरेश भयंकर अहंवादी है। अपने सामने वह किसी को कुछ नहीं समझता। मान लिया वह अच्छा दिग्दर्शक है। लेकिन इससे क्या हुआ। दूसरों के प्रति भी उसे अच्छे ख्याल रखने चाहिये। वह समझता है हम चुने-दीगरे-नेस्त।" मैं और भी बोलती जाती लेकिन गिरजा घर के घंटे ने मुझे रुकने के लिए मजबूर कर दिया। हम गिरजा घर के नजदीक पहुँच गये थे। अमर ने गिरजा घर की ओर रुख नहीं किया। वह सड़क पर ही चलता गया। मुझे भी उसके साथ-साथ चलना पड़ा। गिरजा घर काफी दूर सड़क के किनारे रह गया। सड़क के किनारे एक पेड़ के नीचे हम रुक गये। अमर को मानो कुछ भूली बात याद आ गई। वह बोला, "लोगों की राय है कि समरेश प्रथम श्रेणी का दिग्दर्शक है पर मेरी राय एक दम अलग है। मैंने इतने दिन काम करके उसे परख लिया है। न तो वह झटपट निर्णय ही ले पाता है और न किसी प्रकार

की पूर्व-योजना ही बना पाता है। सारा कामसेट पर तैयार होता है। एक दम गलत तरीका है काम का। पैसे की बर्बादी, समय की बर्बादी, और मेहनत की बर्बादी। समरेश के दिग्दर्शन में इसके अलावा है ही क्या।" मुझे अमर की बातों में सच्चाई महसूस हो रही थी। काम के दौरान समरेश को मैंने देखा था। भयंकर फिजूल खर्ची होती है। उसके काम में बिचारे प्रड्यूसर की तो बारह बज जाती है। समरेश उसे तबाह करके ही छोड़ता है। मैं अमर के कथन की हामी भर कर कुछ कहना ही चाहती थी कि अमर बोल उठा, "गोदी वालाका जी जानता है। इस बार वह समरेश को फायनेन्स करते समय हजार बार सोचेगा। खैर यह गोदी वाला का जाती सवाल है। मुझे तो उससे फायनेन्स लेना नहीं। मगर 'स्वर संगम" की सफलता का सेहरा अकेला समरेश अपने सिर बांधे यह गलत है। यह झूंठ है। सरासर झूंठ...... ? समरेश अपने दिल पर हाथ रख कर कह दे-कि पटकथा को पूरा उसने ही तैयार किया। शूटिंग भी उसी ने किया।" मैं अब बोल उठी, "कैसे कह सकता है समरेश। अमर सफलता की वाहवाही खुद लेता है तो वह झूंठा है अपने आपको धोखा देता है। दुनियाँ चाहे कुछ भी नहीं जानती हो, लेकिन मैं तो असलियत जानती हूँ। मैं कम से कम धोखा नहीं खा सकती।" अब अमर जोर से बोल उठा, "तो समरेश अपने आप को क्या समझता है। मेरा इस प्रकार अपमान करने का उसे क्या अधिकार था। मेरे ही घर आकर उसने मेरा अपमान किया। मैं अपमान को मौन रह कर पी गया। कुछ भी बोला नहीं। समरेश को कुछ भी ख्याल नहीं आया। आदमी अपने स्वार्थ के घेरे में पड़ कर कितना अंधा हो जाता है। सारी बातों को कैसे एक दम भुला देता है। वह इतना नीचा गिर सकता है

मुझे कल्पना भी नहीं थी ।" मैं अमर के चेहरे की ओर देख रही थी । अमर का चेहरा तमतमा कर लाल हो रहा था । उसकी आंखों में समरेश के ओछेपन के प्रति नफरत थी । अमर ने दिन रात एक करके समरेश के साथ काम किया था और समरेश ने उसके काम को इतने थोड़े समय में भुला दिया था । समरेश के लिए प्राथमिकता थी अपने स्वार्थ की । उसे और किसी अन्य से कोई मतलब नहीं था । मैंने बोलना शुरू किया "तो अब समरेश को अच्छी तरह पता लग जाना चाहिये कि हम भी अपना चित्र बनायेंगे । पूरी तौर से सफल चित्र बनायेंगे जो बम्बई में जुवली मनायेगा । समरेश के अहम को इससे जोरदार चोट दूसरी क्या लगेगी । समरेश साफ तौर से समझ लेगा कि वह ही अकेला उच्चकोटि का दिग्दर्शक नहीं है । उसके अलावा भी योग्य समझदार और सफल दिग्दर्शक हैं । समरेश की अकड़ को सफलता के द्वारा ही सीधा किया जा सकता है बस ।" मैं बोलती २ - रुक गई । अमर और मैं गिरजा घर से प्रार्थना करके लौट रहे भक्त जनों को देख कर घर लौट पड़े । अमर थोड़ी देर न जाने क्या सोचता रहा फिर बोला, "समरेश ने अशोक कुमार को तो तय किया है । लेकिन नायिका कौन है । नायिका किसे तय करेगा वह । कुछ पता तो चले ।" मैंने बिना सोचे ही कहा, "ले लेगा किसी नई लड़की को । वह तो नायक नायिका बनाने में माहिर है नायक तो है ही । नायिका खोज निकालने में उसे देर थोड़े ही लगेगी । मैं कुछ रुकी और फिर हँसकर बोली, "फर्ज करो वह बेला को ही नायिका ले ले ।" अमर ने प्रश्न सूचक दृष्टि से मेरी ओर देखा । बेला ? कौन बेला ? ? मैंने उत्तर दिया, "बेला मांकड़ । वह जो चीनू चींचड़ के साथ काम करती है न ।" अमर चौंक पड़ा, "उस बेला को समरेश नायिका बना लेगा ! छोकरी का चेहरा तो फोटो जेनिक

है।" और कुछ गम्भीर होकर अमर बोल उठा, "तो समरेश सचमुच उस छोकरी को लेगा ?" मैं जोरों से हँस पड़ी और बोली, "अरे मैंने तो मजाक की थी और तुम सच मान गये। उस मनहूस बेला को लेकर समरेश सिर फोड़ेगा।" और मुझे अजय- का ख्याल आ गया । न जाने अजय-नागपुर था या और कहीं। बेला के चक्कर में वह कैसे फंस गया। बेला ही उसे कैसे पसन्द आ गई। मैंने प्रयत्न करके अजय को भुला देना चाहा लेकिन अजय का चेहरा मेरी आंखो के सामने मानों उभर कर आ रहा था। मैंने मन ही मन उसे भुला देने की चेष्टा की। आंखों को दोनों हाथों से ढ़क लिया और सड़क पर कुछ क्षणों के लिए ठहर गई। अमर ने मुझे छूकर पूछा, 'क्या होगया है तुम्हें " मैंने झूठ मूठ कहा, यूँ ही आंख मैं खुजली चल पड़ी थी इसलिए आंखो को ढ़क लिया है।" अमर ने अपना रूमाल देते हुए कहा, "शायद कोई धूल का कण आंख में पड़ गया होगा। लो पोंछ लो, आंख को।" मैंने हाथ फेरते फेरते कहा, "नहीं नहीं कोई खास बात नहीं है।" और मैं चल पड़ी। अजय और बेला बेला और अजय । लेकिन अजय तो नागपुर चला गया था। और बेला बम्बई में ही थी । बेला एक साधारण एक्सट्रा कलाकार लड़की। मुझे न मालूम क्यों उससे ईर्ष्या हो उठी। क्या वह भी नायिका बन सकती है। नहीं नहीं असम्भव है। उस मामूली छोकरी को समरेश हीरोइन बनाये इतना बेवकूफ समरेश भी नहीं है । उसे भी तो वर्षों का अनुभव है। वह किसी जानी पहिचानी हीरोइन को ही तय करेगा। मैंने अपने मन में उठने वाले विचारों को दबा दिया और मौन सड़क के विस्तार को नापती रही। अमर भी मौन कदम उठा रहा था। वह अपने विचारों में लीन था। मैं अपने विचारों के जाल से छुटकारा पाकर स्वतंत्र होने का प्रयास कर रही थी। दोनों

अपनी अपनी दुनियां में गिरे हुए थे । दोनों साथ साथ घर की ओर कदम बढ़ा रहे थे।

दूसरे दिन सुबह हमने बम्बई जाने का निश्चय कर लिया। श्रीमती मोदी को फोन किया । श्री मती मोदी और नीता दौड़े आये। नौकर ने गाड़ी में सामान रख दिया था । हम दोनों तैयार थे । श्रीमती मोदी ने नमस्कार करके कहा, "प्रतिभा बहन, हम भी एक सप्ताह बाद बम्बई लौट रहे हैं। वहाँ तो मुलाकात होगी ही।" नीता तो सचमुच मुझसे लिपट गई । रोनी सी सूरत बनाकर बोली, "चाची, सप्ताह भर ठहर जाती तो क्या बिगड़ जाता। साथ साथ ही लौटते।" मैंने उसे राजी करते हुए कहा, "फिर यहां रह कर तेरा काम कैसे होगा।" नीता मेरा इशारा समझ गई। नाचती हुई बोली, "तो तुम मुझे कलाकार समझती हो चाची ?" मैंने उसका ललाट चूम लिया और गाड़ी में बैठ गई । नीता और श्रीमती मोदी नमस्कार करते रहे और गाड़ी चल दी।

बम्बई लौटे एक सप्ताह हो गया। चावला और कमलानी से सूचना मिली कि उनका कार्यक्रम कुछ बिलम्ब से शुरू होगा। अच्छा मुहूर्त १०-१५ दिन के दौरान था नहीं। अच्छे मुहूर्त के लिए ही वे ठहरे थे। अमर की कुछ और ही राय थी। उसका कहना था शायद फायनेन्स की दिक्कत है। चावला कुछ व्यवस्था करने में लगा है । लुधियाना से जमींदारी की रकम आने में शायद देर हो गई होगी। खैर हमें चावला के घरेलू मामलों से कोई दिलचस्पी नहीं थी । लोनावाला एक माह से ज्यादा लग गया था । इस अर्से में जुहु का मकान तो सूना ही पड़ा था मकान को नये सिरे से सजाया गया। मेरा स्वास्थ्य भी सुधर गया था। अब अमर भी अधिकतर मेरे बंगले पर ही रहता। अजय का कोई संवाद नहीं मिला था। मैंने अपनी ओर से उसके

ब रे में कुछ भी जानने की कोशिश नहीं की थी। नागपुर में रीता को पत्र भी लिखे भी एक अर्सा हो गया था।

सुबह का समय था। मैं बगीचे में टहलने के बजाय कुर्सी पर बैठ गई। अमर गत रात्रि को अपने चाचा के यहाँ चला गया था। मैंने कृष्णा को चाय लाने का आदेश दिया और नारियल के विशाल गगन चुम्बी वृक्षों की ओर देखने लगी। दूर से समुद्र के गरजने की ध्वनि आ रही थी। पास के पेड़ों को झुरमुट से कोयल लगातार बोलती जा रही थी। बैठे २ मां की याद आ गई। वर्ष बीत गये मां का कोई संदेश नहीं मिला। नागपुरसे मां वृन्दावन गई थी। वहां से उड़ती खबर आई थी कि मां गौराँग प्रभु के क्षेत्र नवद्वीप चली गई थी। फिर एक खबर आई कि मां चार धाम की यात्रा करने निकल पड़ी थी या मां वानप्रस्थ हो गई थी। उसे गृहस्थी जीवन से कोई सरोकार नहीं था। वह अपनी जीवन यात्रा को अपने ढंग से तय कर रही थी। और मैं अपनी जीवन यात्रा को अपने ढंग से। कृष्णा चाय ले आया था। मैं अपने विचारों में बही हुई थी नागपुर के बारे में कोई नई जानकारी नही थी। रीता क्या कर रही है? अजय कहाँ है ? मेरे ससुर पांडीचेरी ही है या और कहीं ? और छाया वह अब भी फिल्मों के बारे में उतनी ही दिलचस्पी रखती है क्या ? नागपुर में क्या हो रहा है ? क्या हुआ है ? मेरी इच्छा सब कुछ जानने के लिये बलवती हो रही थी। मैंने तय किया कि रीता को ही पत्र लिखूं और उससे ही सब कुछ पूछूं। इतने बिलम्ब के बाद पत्र लिखने के लिए वह नाराज तो जरूर होगी। लेकिन अजय ने न जाने उसे क्या क्या कहा होगा और उसने मेरे बारे में क्या २ राय बनाई होगी। अजय ने सारा दोष मेरे ही सिर पर ही थोपा होगा और रीता भी उसी की बातों को सचमान बैठी हो तो। मैंने पत्र लिखने का इरादा बदल दिया।

मैं रीता को, नागपुर को, सब लोगों को भूल जाने की चेष्टा करने लगी। चाय के पॉट में से प्याले में चाय उड़ेली, शक्कर मिलाई और चाय पीने के लिए होठों से प्याले को छुआ ही कि अखबार वाले ने फाटक के ऊपर से अखबार फेंका। मैं चाय के प्याले को रखकर अखबार उठाने को झुकी। कृष्णा ने उससे पहले ही अखबार उठाकर मेरे हाथ में थमा दिया। मैंने पहले पृष्ठ को सरसरी निगाह से देखकर बीच का पृष्ठ खोला। पृष्ठ के विज्ञापन को देखकर दिल बैठ गया। पूरे दो पृष्ठों का विज्ञापन था :—

समरेश—अजय प्राडक्शन का पहला पुष्प—

"राधा ना बोली रे"

कलाकार:—अशोक कुमार, बेला कुमारी

दिग्दर्शक:—समरेश बसु !

मेरी आंखों के आगे सारा विज्ञापन मानों चक्राकर घूमने लगा। धीरे-धीरे मेरी आंखों के सामने अंधेरा बादल सा छा गया। मैं कुछ समझ नहीं पा रही थी। समरेश अजय और बेला। यह तीनों का त्रिबेणीं संगम कैसा ! तीनों एक साथ ! इतने थोड़े समय में सब कुछ तय कर डाला। यह सब कुछ कैसे हो गया। अजय रुपया कहाँ से ले आया क्या बाबा ने सारी जायदाद अजय को देदी। अजय के हाथों लाखों की सम्पत्ति आ गई। मैं कुछ समझ नही पा रही थी। मेरा दिमाग चक्कर खा रहा था। मैंने गुस्से में आकर अखबार को फेंककर विज्ञापक को पैरों से कुचल दिया। कृष्णा मेरी इस विचित्र अवस्था को देख रहा था। मैं चिल्लाई "चले जाओ" और आँखें बन्द कर कुर्सी पर पड़ रही।

मेरे मन की अशांति बढ़ती जा रही थी। अशांति को कहीं कूल किनारा नही दिखाई दे रहा था। चाय पीने को तो पी ली

लेकिन उसका स्वाद भी खराब लग रहा था। मानों जायका ही बिगड़ गया हो। बीमारी के समय डाक्टर ने शराब पीने की मना कर दी थी। कई दिनों से शराब को छुआ तक नहीं था। व्हिस्की की बोतल काफी दिनों से अलमारी में ही पड़ी थी। मैंने उसकी ओर देखा भी नहीं था। लेकिन आज अशांत मन को शांति प्रदान करने की शराब के अलावा और कोई दूसरी दवा नहीं थी। मैं उठी और ड्राइंग रूम में पहुँची। अलमारी से व्हिस्की की बोतल निकाली। फ्रिज से सोढ़े की बोतल ली और टेबल पर बैठ गई और एक के बाद एक पेग पीती चली गई। न मालूम पीते-पीते कितनी देर होगई मुझे कुछ भी पता नहीं लगा। कृष्णा एक बार कमरे में कुछ पूछने के लिये आया। लेकिन मैंने उसे जोर से डांट दिया और फिर उसकी कमरे की ओर रुख करने की हिम्मत नहीं हुई।

शराब के नशे ने अपना असर शुरू कर दिया था। दिमाग मानो आसमान की ऊँचाइयों को नापने के लिए धीरे-धीरे ऊँचा उड़ता जा रहा था। ऐसा लग रहा था मानो अजय और बेला तो घास के हल्के हल्के तिनके हैं जिन्हें हाथ के हल्के झटके से तोड़ा-मरोड़ा जा सकता है। ऐसे मामूली इन्सानों के लिए सोच-विचार हो फिजूल है। रहा समरेश तो वह भी क्या है। अमर उससे काबिल दिग्दर्शक है। अमर सफल चित्र बनाने की योग्यता रखता है। वह हालीवुड से लौटा हुआ है। समरेश क्या खाकर अमर का मुकाबला कर सकता है अखबार के मामूली विज्ञापन से अशान्त हो जाने में मजा कहाँ है। अजय बोला, और समरेश इनका यह त्रिगुट कभी सफल नहीं हो सकता इनका चित्र फ्लाप होगा। अमर दर-दर की ठोकरें खाकर फिर आयेगा और मेरे ही पैरों पड़ेगा। मैं ही उसे पनाह दूंगी। बेला तो फिर भी वही एक्सट्रा लड़की रहेगी। सात आठ रुपये रोज

पर काम करने वाली उसके बारे में सोचना ही बेकार है। मन लगातार सोचता हो चला जा रहा था। अजय—बेला व समरेश के अलावा अन्य विचार दिमाग में प्रवेश ही नहीं पा रहे थे। ग्लास से रंगीन शराब की चुस्की लेकर मैंने आलू के बेफर मुंह में रखे। न मालूम कृष्णा कब से आलू के बेफर की तस्तरी टेबल पर रख गया था। ख्यालों की धारा कृष्णा की ओर मुड़ चली। कितना समझदार नौकर है। बम्बई में नौकर मिलना मुश्किल है। और फिर समझदार नौकर-बफादार नौकर मिले यह तो बिल्कुल असंभव है। कैसा अच्छा लड़का है कृष्णा।। इस लड़के को कोई भी काम समझाने को जरूरत हीनही पड़ती मैं कोई धरेलू काम सोचूं उससे पहले तो वह लड़का काम को पूरा कर डालता है। लेकिन मैंने इसे कभी यथेष्ट इनाम नहीं दिया। मैंने जरूर इस लड़के के साथ अन्याय किया है। इसे कुछ न कुछ इनाम अवश्य देना चाहिये। मैंने अपना पर्स टटोला, पर पर्स कहां था, मैं यूं ही खाली हवा में ही टटोल रही थी। मैं उठी टेबल की ओर बढ़ी। पैरों में चलने फिरने की ताकत ही नहीं थी, जैसे तैसे मैंने ड्राअर खोला। कुछ नोट रखे थे। मैंने कृष्णा को आवाज दी, कृष्णा-ओ कृष्णा····· । कृष्णा भागा भागा आया। मुझे अपने आप से नफरत सी होने लगी। मैंने कभी इस गरीब का ख्याल नहीं किया। कितना अच्छा लड़का है कृष्णा। मैंने उससे पूछा, "कृष्णा। तू मुझे समझता है। मैं अच्छी मालकिन हूँ या बुरी। मैं तुझे आराम नहीं देती, इसलिए तू मुझे नीच, स्वार्थी समझता होगा। हां? भाई तुझे समझने का हक है। मैं बहुत नीच हूँ। अपने बफादार नौकर के कष्टों को समझने को मैंने कोशिश ही नहीं की।" कृष्णा जाने क्या उत्तर देना चाहता था। उसके होंठ हिले पर मैंने उसे हाथ से इशारा कर बोलने से रोक दिया और नोटों का बंडल उसे

देकर कहा, "ले। ये ले। तेरी तकलीफों को दूर करले। अगर इसे कम समझता है तो कल और ले लेना।" कृष्णा ने हाथ नहीं बढ़ाया मुझे गुस्सा आ गया। मैं चीख उठी, "तू क्या समझता है। मैं मजाक कर रही हूँ क्या मैं सचमुच ये नोट नहीं दे रही हूँ। अगर तू ये नहीं लेगा तो मैं तुझे अपने यहाँ नौकरी पर नहीं रखूंगी। चल जल्दी ले ले। नहीं तो मेरा गुस्सा तेज हो जायगा।" कृष्णा ने नोटों का बंडल ले लिया। मैं पुनः शराब की चुस्की लेने लगी। कृष्णा मूर्ति की तरह दरवाजे के पास खड़ा रहा। मैं उसे अब क्या कहूँ। दिमाग में कोई विचार शेष नहीं था। मुझे अब शराब की बोतल, सोड़े की बोतल और शराब ग्लास नाचते हुए नजर आने लगे। मैं लगातार उन नाचती बोतलों और ग्लासों में खो जाने की चेष्टा करने लगी।

मैंने टेबल पर सिर टिका लिया और आंखे बन्द किये न जाने कितनी देर तक यूँ ही बैठीरही। जब सिर उठाया तो देखा सामने अमर। कुर्सी पर बैठा मुझे ही देख रहा था। उसने मुझसे कुछ कहा नहीं। मैंने ही उससे पूछा, "अरे तुम कब आ गये। तुम्हारे पैरों की आहट तक सुनाई नहीं दी।" अमर फिर भी मौन रहा। मैंने सोचा शायद अमर को समरेश -अजय प्राडक्शन की घोषणा से सदमा पहुँचा है। मैंने हंसते हुए कहा, "अमर किसकी चिंता कर रहे हो। समरेश के बारे में सोच रहे हो क्या? वह तुम्हारा मुकाबिला क्या करेगा। उनका चित्र निकलेगा डब्बा। और अजय--समरेश एक साथ काम नहीं कर सकेंगे। दोनों लड़ाई झगड़ा करेंगे। सब तीन तेरह हो जायेगा। तुम भी उनके बारे में सोच कर दिमाग खराब क्यों कर रहे हो।" अमर फिर भी मौन ही बैठा रहा। मुझे लगा अमर गहरी चिन्ता में डूबा हुआ है। चिन्ता से राहत पाने के

लिए सरल दवा है शराब। पर अमर तो शराब पीता ही नहीं। लेकिन आज से पीने का श्री गणेश क्यों नहीं करे। मैंने कृष्णा को आवाज दी, कृष्णा ? ग्लास लाओ, सोड़ा लाओ और अल्मारी से व्हिस्की की बोतल निकालो।" कृष्णा तूफान की रफ्तार से सारी चीजें टेबल पर रख कर गायब हो गया। मैंने पैग गिलास में उड़ेला। ठंडा सोड़ा मिलाया और ग्लास अमर की ओर बढ़ाकर बोली, "लो इस मोहनी को हलक से थोड़ा उतार लो।" अमर ने कोई हरकत नहीं की मुझे उसका मौन रहना अखर रहा था। मैं अपनी जगह से उठी और जबर-दस्ती ग्लास अमर के होठों से लगा दिया। अमर आना कानी करने की कोशिश करने लगा लेकिन मैंने एक हाथ उसके गले में डाल दिया और दूसरे हाथ से शराब उसके होठों से लगाये कहती रही, पियो पियो, आज बिना पिलाये मैं नहीं मानूंगी। आज दोनों साथ-साथ पियेंगे। जी भर कर पियेंगे। अमर ने धीरे-धीरे गिलास खाली कर दिया। मैं उसके गले में हाथ डाले, गिलास थामे न जाने कितनी देर खड़ी रही। धीरे-धीरे सारा ग्लास खाली हो गया। मैंने धीरे से अमर के ललाट को चूम लिया। ऐसा लगा मानो किसी ने होठों में आग लगा दी। मैंने पुनः एक पेग ग्लास में डाला और सोड़े से ग्लास भर दिया। फिर वही दौर शुरू हुआ। अमर के गले में हाथ डाले डाले मैं अमर की गोद में बैठ गई और बैठी-बैठी ग्लास को उसके होठों से लगाये रही। आधी ग्लास पीने के बाद अमर ने ग्लास मेरे हाथ से लेकर मेरे होठों की ओर बढ़ाया। मैंने ग्लास का एक घूंट हलक से उतारा। ऐसा लगा मानों अमर के होठों का स्वाद मेरे हलक में उतर रहा हो। अब एक घूंट अमर लेता और एक घूंट मैं। धीरे-धीरे सारी बोतल खाली हो गई। मैं अमर की गोद में वैसे ही बैठी रही

अमर ने मुझे हाथों से उठाया। उसके पैर लड़खड़ा रहे थे। जैसे तैसे उसने मुझे पलंग पर सुलाया। और स्वयं भी पलंग पर लुढक गया।

अजय ने समरेश के साथ प्राडक्शन शुरू कर दिया और बेला को हीरोइन भी बना दिया नागपुर से पता लगा कि अजय मुझ से झगड़ कर सीधा नागपुर पहुँचा था। वहां उसे बाबा की बीमारी का तार मिला और वह सीधा पांडीचेरी पहुँचा दो दिन की बीमारी के बाद ही बाबा का देहान्त हो गया। दो दिन में ही अजय लाखों की सम्पत्ति का मालिक बन गया था। नागपुर आकर उसने कुछ जायदाद बेच डाली और उसी रकम को लेकर वह पुन: बम्बई आ गया और अपना प्राडक्शन शुरू कर दिया। समरेश मुझसे नाराज हो बम्बई आया तो अजय से उसकी भेंट हो गई। दोनों को मुझ पर क्रोध था। मुझ से घृणा थी। बस झटपट दोनों ने समाचार पत्रों में एक चित्र की घोषणा भी कर दी। उनके चित्र का मुहूर्त भी हुआ और शूटिंग का काम भी शुरू हो गया। कमलानी—चावला ने भी पन्द्रह दिन ठहर कर मुहूर्त किया और लगातार शूटिंग भी शुरू कर दी। दो माह बीत गये। अमर के० सी० प्राडक्शन के चित्र का हीरो था और मैं थी हीरोइन। लगातार शूटिंग में लगे रहने के बाद अपने प्रस्तावित चित्र की पट-कथा को तैयार करने का समय ही नहीं मिलता था। सुबह दोनों स्टुडियो के लिए साथ साथ रवाना होते और दिन भर शूटिंग के बाद थके-हारे घर लौट आते। दिन भर की थकावट के बाद शारीरिक और मानसिक काम करने को इच्छा ही नहीं होती। रात को दोनों साथ बैठ कर शराब पीते। साथ ही भोजन करते। दिन भर की थकावट को दूर करने के लिए शराब बहुत बड़ा सहारा सिद्ध हो रही थी।

लंच का समय था। स्टूडियों में ही आउट डोर का सेट था वहीं शूटिंग हो रहा था। अमर—मैं और निर्देशक श्री मलिक एक पेड़ की छाया में भोजन करने की तैयारी कर रहे थे। टेबल पर भोजन की सामग्री सजाई हुई थो। मैं हाथ पैर धोकर बैठी थी। जैसे सो हमने भोजन शुरू किया आर्ट डायरेक्टर श्री मोंनूदास आ पहुंचे। मोंनू दास, श्री मलिक के दोस्त थे और के० सी० प्राडक्शन के इस चित्र के भी आर्ट डायरेक्टर थे। आते ही श्री दास बोल उठे, वाह क्या शाट लिया है। एक शाट सात सौ फुट लम्बा। क्रेन का इतना मूवमेंट। सीने =ट्रेड में तो शायद ही किसी डायरेक्टर ने ऐसी हिम्मत की हो। श्री मलिक सुन कर बोले, मोनू किसके बारे में कह रहा है। कुछ बतलायेगा भी या यूं ही अपनी बात को घोटता चला जायगा। कहां से आ रहा है।" मोनूदास कुर्सी खींच कर बैठ गया और रूमाल से पसीना पोंछता हुआ बोला "सीधा फिल्मि-स्तान से लौट रहा हूं। आत्माराम पई से काम था। पई जबर-दस्ती उनके सेट पर ले गया। मैंने पई से कहा भैया मुझे क्यों घसीट कर ले जा रहे हो दूसरे के सेट पर। लेकिन वह भला आदमी माना ही नहीं। क्रेन का शाट था।। बेक-फारवर्ड मुव-मेंट में तीन सौ फीट हो गये और साइड मूवमेंट, अपवर्ड-डाउन वर्ड टिस्ट में बाकी चार सौ साढ़े चार सौ। मैं दाँतों तले उंगली दबा कर रह गया !" मोनूदास लगातार बोलता जाता लेकिन मलिक ने उसे रोक कर पूछा. "किसके शूटिंग की बात कर रहा है मोनू। फिल्मिस्तान का नया प्राडक्शक है क्या ? मोनूदास ने उत्तर दिया अरे फिल्मिस्तान का नहीं। समरेश ने नया चित्र चालू किया है, "राधा ना बोली रे" उसकी चर्चा कर रहा हूं।" मलिक ने कुछ भी नहीं कहा। मैं मोनूदास की बातों पर विशेष ध्यान नहीं दे रही थी। समरेश का नाम

सुनते ही मेरे शरीर में मानो आग सी लग गई। गत कुछ दिनों से जगह २ समरेश के नये चित्र की प्रशंसा सुनते सुनते मैं थक चुकी थी। अजय को यदि पहले चित्र में ही पूरी सफलता मिल जायगी तो उसका दिमाग सातवें आकाश में चढ़ जायगा। और वह बेला। उसके तो पंख निकल आयेंगे और वह आसमान में उड़ाने भरने लगेगी। मैंने अमर की ओर देखा। अमर के हाथ का कौर हाथ में ही रह गया था। उसकी अवस्था भी मेरे ही समान थी। उसने कौर को फेंका और हाथ धोने लगा। मुझे भी लगा। मुझे भी मुंह का कौर बेस्वाद लग रहा था। जैसे तैसे मैंने कौर को पानी के घूंट से गले के नीचे उतारा। मलिक को हमारी अवस्था का अन्दाज लग गया था। उसने मोंनू दास की बात को काट कर उसका मजाक उड़ाते हुए कहा, "मोनू। तेरा भी कोई जबाब नहीं है। तू भी कैसा कमाल का आदमी है। कल या परसों उस करी के नये स्टंट चित्र "लैला भी हूँ मजनू-भी हूँ" की तू जोरों से हवा बांध रहा था और आज समरेश के चित्र पर तेरी कृपा हुई। तू भी पक्का-गंगा गया गंगादास, और जमना गया जमना दास है।" मोनू को मलिक का इशारा समझ में नहीं आया वह भड़क उठा, करीम के चित्र का नाम वन्डरफुल नहीं है क्या ? साले ने क्या सोच कर नाम ढूंढ निकाला है।" लैला भी हूँ मजनू भी हूँ, वन्डरफुल कामेडी स्टंट है। मैंने तो कभी अपना चित्र बनाया तो नाम रखूंगा। शीरी भी हूँ-फरिहाद भी हूँ। लोग नाम पर ही पागल हो जायेंगे। मलिक ने मोनू के चुटकी काटते हुए कहा, "वाह क्या खूब सोचा है तू ने। मेरा ख्याल है कि तू डबलरोल में खुद शीरी और फरिहाद का काम करना। बड़ा मजा आयेगा।" अब मोंनू के समझ आया कि मलिक उससे मजाक कर रहा है। वह बनावटी नाराजी दिखलाता बोला, "तुम तो हर वक्त

मजाक करते हो मलिक। तुम गम्भीर भी रहते हो कभी ?" मलिक ने कोई उत्तर नहीं दिया और मौनू को आँख के इशारे करते हुए कहा, अच्छा तो चल उस कोने का सेट तो देख आयें। तू ने वहां का काम तो अधूरा ही छोड़ दिया है।" और दोनों उठ कर चल पड़े।

अमर मौन पेड़ों की ओर देख रहा था। मैंने उसके मौन को भंग करते हुए कहा, "हम लोग कितने लापर वाह और आलसी हैं। अभी तक पटकथा को भी ठीक नहीं किया। समरेश का चित्र तैयार होकर रिलीज भी हो जायेगा और हम लोग सोचते ही रहेंगे।" अमर ने मेरी ओर मुंह घुमाया। वह शायद कुछ सोच रहा था। थोड़ी देर के बाद वह बोला, "काफी समय बर्बाद कर दिया। आज से ही काम में जुट जाता हूँ। एक सप्ताह में पटकथा को सम्पूर्ण कर दूंगा। किसी प्रकार की खामी नहीं रहने दूंगा।" मैंने अमर की बात में अपनी बात जोड़ कर कही" ओर अगले माह की पहली तारीख को नये चित्र का हम मुहूर्त कर देंगे। यह हमारा निश्चय है। इस निश्चय में किसी प्रकार की बाधा नहीं आयेगी।" अमर ने मेरी ओर देखा और बड़े उत्साह से बोला यह हमारा सौ प्रतिशत निश्चय है। आज से ही तैयारी में लग जाते हैं।" मैंने बिना सोचे समझे ही कहा, इस खुशी में लंच के बाद पेक-अप करो अब आज शूटिंग नहीं हो सकेगा। अमर ने मेरी ओर देखा। दूर से चावला और कमलानी आते हुई दिखाई दिये। अमर ने उनकी ओर देख कर मेरी ओर देखा। आँखों के इशारे से ही मानों उसने कहा, "बिना कारण के पेक-अप ठीक नही रहेगा। फिर कमलानी-चावला क्या कहेंगे। श्री मलिक क्या सोचेंगे।" मैं अमर के मन की भावना को समझ गई मैंने कहा, तुम कुछ चिंता मत करो।

पेक-अप करवाने के लिए मेरे पास यथेष्ट से कारण हैं। मेरे पेट में दर्द जोरों से हो रहा है । अपेन्डिसाइड की मरीज हूँ न ।" अमर ने मेरी आंखों में घूर कर देखा और मुस्करा उठा।

शूटिंग का पेक आप हो गया। एक ओर चावला ने श्री-मलिक से पूछा", आखिर क्या हो गया। मलिक साहब लंच ब्रेक तक तो सब ठीक था और एका एक तबियत कैसे खराब हो गई । मलिक ने जाने चावल को कैसे समझाया। हां एक ओर जाकर मलिक ने मौनू दास को जरूर कोसा। में सुन रही थी । मलिक मौनू दास से कह रहा था , वा मौनू, तुम्हें खबर इधर से उधर लाने के अलावा दूसरा धंधा भी है आज तूने प्रतिभा और अमर का मूड खराब कर दिया। जानता नहीं समरेश अजय से इनका झगड़ा है। उनके सामने तो समरेश अजय के चित्र को बेहूदा बकवास ही बतलाता।" मौनू ने उसे क्या उत्तर दिया। मैं सुन नहीं पाई । ड्रायवग ने आकर कहा गाड़ी तैयार है।" मैं धीरे-धीरे गाड़ी की ओर चल दी । अमर पहले ही से स्टेअरिंग पर बैठ चुका था। मैं उसकी बगल में बैठगई ।

और फिर कुछ माह बाद बम्बई में एक साथ तीनों चित्र रिलीज हुए । के० सी० प्राडक्शन का हसीनों के सुतूत, समरेश अजय प्राडक्शन का "राधा ना बोली रे" और हमारे संगम प्राडक्शन का "गोरी गोरी कलइयाँ" तीनों चित्र बड़ी धूम धाम के साथ रिलीज हुए । समाचार पत्रों में पूरे पूरे पेज विज्ञापन। बम्बई के कोने २ में विशाल बेनर। जगह २ पोस्टर । सजी सजाई मोटर गाड़ियों के जुलूस 'हसीनों के सुतूत की सप्ताह के बाद बाजार की रिपोर्ट साधारण

ठीक रही । 'राधा ना बोली रे' पहले सप्ताह में ही एक दम ठंडो हो गई । सीनेमा हाल खाली रहने लगा । चित्र की रिपोर्ट एक दम कमजोर थी । चित्र एक दम डब्बा निकला । बेला का चेहरा फोटोजेनिक था ही नहीं । बेला का चेहरा एक दम विदेशी कलाकारों जैसा था और उस चेहरे को हमारी जनता ने पसन्द नहीं किया । पहले दिन से ही सिनेमा हाल की बालकना में तो कौए बोलने लगे । "गोरी-गोरी कलइयां" के हाउस फुल जा रहे थे । अमर ने समाचार पत्रों में विज्ञापन दिया था । अगर पूरा चित्र देख लेने के बाद किसी दर्शक को 'गोरी गोरी कलईयां' पसन्द न आए तो वह दर्शक अपने टिकट का आधा काउन्टर पर दे कर पैसे वापस ले सकता है । इस विज्ञापन ने बम्बई में तूफान खड़ा कर दिया । पहले चार सप्ताह का एडवांस बुकिंग हो गया । पांचवें सप्ताह के एडवांस बुकिंग के लिए सिनेमा घर के सामने जनता की कतारें लगी रहतीं ।

'गोरी गोरी कलइयों की रिलीज के बाद मेरा बाजार भाव डेढ़ लाख से एक दम ढाई लाख हो गया । डेढ लाख ब्लेक में और एक लाख वाईट में । धडाधड़ दस नए चित्रों के लिए कान्ट्रक्ट हो गए । आधे चित्रों में तो हीरो भी अमर ही था । अपने संगम प्राडक्शन के नये चित्र "बैरन हो गई रात" की हमने घोषणा कर दी । हमने तय किया कि बैरन हो गई रात" का आधा शूटिंग तो हिन्दुस्तान में करेंगे और आधा शूटिंग यूरोप में । अमर पट कथा को तैयार करने में लग गया । कहानी थी प्रसिद्ध लेखक ख्वाजारहमत कलाम अत्तार की । संगीत प्रसिद्ध दोस्तों की जोड़ी शंकरजयकिशन का था । मुहूर्त होने के पहले ही जोरों से अखबारों में विज्ञापन शुरू कर दिये । चित्र को पहले से जोर दार बनाना जरूरी था । अभी बम्बई की ट्रेड

में ऐसे निर्देशक थे जो अपने आप को तीसमारखां समझते थे। अपने आपको कला का ठेकेदार समझते थे । उन्होंने अमर के खिलाफ अपना प्रचार आंदोलन शुरू कर दिया। उनका कहना था। अमर हालीवुड के चित्रों की सस्ती नकल कर रहा है। वह सेक्स को प्रधानता देकर नारी के अगों को भड़कीले ढ़ंग से पर्दे पर प्रस्तुत कर रहा है । और जनता की भावना गंदी बनाने का प्रयास कर रहा है। अमर का सोचने का ढंग ही भारतीय सभ्यता के विरुद्ध है। "गोरी गोरी कलइयां" में सस्ती नग्नता के अलावा और कुछ भी नहीं है।

अमर पत्रों की आलोचना को पढ़ता और रद्दी की टोकरी में समाचार पत्रों को फेंकता हुआ कहता नवीनता के दुश्मन है ये बेवकूफ। मैं तो हाथी हूँ हाथी। भोंकने दो कुत्तों को। और वह जोर जोर से हंस पड़ता।

एक साल के अर्से मैं मेरे और दो चित्र तैयार होकर रिलीज हो गए। और दोनों ही बहुत सफल रहे। विचित्रता यह थी कि इन दोनों चित्रों में अमर हीरो नहीं था । जिन चित्रों में अमर हीरो था, वे चित्र विभिन्न कारणों से रुक गये थे। उनका कार्य निकट भविष्य में आगे बढ़े ऐसी संभावना भी नहीं थी। मैं अपनी शोहरत के शिखर पर थी। चारों ओर मेरी ही चर्चा थी। अखबारों के पृष्ठों में मेरी मुलाकातों, मेरी जीवनी, मेरे शूटिंग के दृश्यों व फोटो की ही चर्चा रहती । मेरे प्रशंसकों के पत्रोंका प्रतिदिन एक ढेर लग जाता। मैं किसी किसी पत्र को पढ़ती और पत्र लेखक की बुद्धि पर तरस खा कर हंसती । कोई मुझे बहन बनाने का प्रस्ताव प्रस्तुत करता, तो कोई मुझसे शादी करने की इच्छा जाहिर करता। कोई मेरे रूम की प्रशंसा करता, तो कोई मुझे संसार की सर्वश्रेष्ठ

कलाकार घोषित करता। मैं अपने पत्रों को अमर के सामने डाल देती और अमर ही उन पत्रों का उत्तार देता।

हमारे चित्र-बैरन हो गई रात की अभी तक शुरूआत नहीं हुई थी।अमर अभी तक पटकथा तैयार करनेमें ही लगा था। चित्र को बहुत बड़े पैमाने पर बनाने की योजना थी। पहले तो युरोप में चित्र की शूटिंग करने का इरादा था लेकिन अमर का विचार बदल गया। लोकेशन शूटिंग के लिए काश्मीर का कार्य-क्रम बनाना ही तय हुआ। इस अर्से में श्रीमती मोदी और नीता से मेरा मेल जोल बढ़ गया था। एक दिन श्रीमती मोदी ने अपने मलाबार हिल के बंगले पर पार्टी का न्योता दिया। शाम को अमर और मैं श्री मोदी के बंगले पर पहुँचे। पता लगा कि नीता के जन्म दिवस की पार्टी है। विशाल आयोजन था। बम्बई के प्रसिद्ध व्यापारी, उद्योगपति, और सरकारी अफसर पार्टी में उपस्थित थे। फिल्म संसार के प्रतिनिधि सिर्फ हम दोनों ही थे। श्री और श्रीमती मोदी ने हमारा सब लोगों से परिचय कराया। नीता भी लगातार हमारे साथ चिपकी रही। पार्टी के बाद जब हम लोग घर लौटने की तैयारी करने लगे नीता दौड़ी-दौड़ी आई और बोली 'चाची थोड़ी देर ठहरो न ? तुमसे एक जरूरी बात करनी है। मैं नीता की जरूरी बात को समझ नहीं पाई फिर भी ठहर गई। श्रीमती मोदी भी आ पहुँची। मुझे जाने की तैयारी में देख बोली अरे बहिन तुम कहां चली। कितने दिनों के बाद मुलाकात हुई है। जरा थोड़ी देर तो ठहरो।" कुछ उत्तार देती लेकिन श्री मोदी आते दिखाई दिये अतः मैं मौन ही रह गई।

श्री मोदी के मकान को बंगला न कह कर महल ही कहना चाहिए। विशाल काय महल के चारों ओर विस्तृत

बगीचा सामने ही लहरें उछालता अरब सागर। समुद्रके किनारे किनारे काफी दूर फैली हुई ताड़ के वृक्षों की घनी कतार। हम लोग विशाल बालकनी में ही कुर्सियां बिछा कर बैठ गये। श्री मोदी बोले नीता बी० ए० की परीक्षा में उत्तीर्ण हो गई है। अब इसे नृत्य संगीत में विशेष चाव है। मुझे तो कल ही पता लगा कि नीता नृत्य भी जानती है। न मालूम इसने यह नृत्य की शिक्षा कहां ली। श्रीमती बीच ही में बोल उठी आपने बच्चों की ओर कभी ध्यान भी दिया है। नीता क्या पढ़ती है और गाना क्या सीखती है इस मानो आपको कोई सरोकार ही नहीं। श्री मोदी अपनी पत्नी के मुंह की ओर ही ताकते रहे और कुछ बोले नहीं। मैं ही बीच में बोल उठी बहिन जी आज कल पुरुषों को अपने काम से ही फुर्सत नहीं मिलती है फिर वे बच्चों की ओर कब ध्यान दें। आप जैसी शिक्षित पत्नी की उपस्थिति में भाई साहब को चिन्ता करने की जरूरत भी क्या है। श्री मोदी मेरी ओर देख कर मुस्कराये। उन्हें मेरी ओर से समर्थन जो प्राप्त हो गया था। श्रीमती मोदी उत्तर देने के लिये उतावली हो रही थीं। मैं उनकी मुद्रा को देख कर आगे कुछ भी नहीं बोली। श्रीमती मोदी नकली नाराजी का प्रदर्शन करते हुए बोली, लो प्रतिभा बहन ? आप भी व्यर्थ ही इनका समर्थन कर रही हैं नीता न जाने कब से इन्हें कह रही है। मुझे शम्भू महाराज के पास नृत्य की शिक्षा के लिये भेज दो लेकिन इन्होंने नीता की बात को सुना तक नहीं। मैंने ही नीता को लिच्छू महाराज के पास शिक्षा दिला कर नृत्य में दक्ष बनाया है। नीता अपनी मां की बात को ध्यान से सुन रही थी। जैसे ही श्रीमती मोदी ने सांस लिया और थोड़ी देर रुकी कि नीता बोली लेकिन मम्मी यह नृत्य और संगीत किस काम आयेंगे।

चाची को कहो न तुझे अपने नये नित्र में काम दे दें। यूं बैठी बैठी तो मैं सब कुछ भूल जाऊंगी।" और नीता ने रोने की सी सूरत बनाली। श्रीमती मोदी मुस्कराई और बारी बारी से मेरी ओर व नीता की ओर देख कर बोली" देख नीता तेरे और तेरी चाची के बीच में क्यों पड़ने लगी। तू ही अपनी चाची से तय करले। फिर श्रीमती मोदी ने अमर की ओर देखा। अमर काफी देर से मौन ही बैठा था। श्रीमती मोदी ने अमर की ओर इंगित कर कहना चालू रखा और तेरे चाचा भी सामने ही हैं। तेरे गुणों को पहचानने की इनमें योग्यता है। तू अपनी कला की एक छटा इन्हें भी बता तो सही। नीता के चेहरे पर मुस्कराहट नाच उठी। वह अपनी कुर्सी पर से कूदी और भाग कर पीछे के दरवाजे से कहीं गायब हो गई।

हम सब मौन ही बैठे रहे। मैं दूर जा रहे एक जहाज को देखने लगी। नौकर ने काफी के प्याले सामने रख दिये। पार्टीमें भोजन करने के बाद काफी की इच्छा तो नहीं थी लेकिन औपचारिकता को निभाने का प्रश्न भी सामने था। मैंने काफी का प्याला उठाने को हाथ बढ़ाया ही था कि पीछे के कमरे में घुंघुरुओं की आवाज हमारी ओर आती हुई सुनाई दी। सब की आंखें पीछे मुड़ गईं। कत्थक नर्तक की वेष-भूषा में नीता धीरे-धीरे कदम उठाती हुई हमारे सामने आ पहुँची। इस नये रूप में नीता अत्यन्त सुन्दर दिखाई दे रही थी। अमर तो आँखें फाड़ कर उसे लगातार देखता जा रहा था। मैं कुछ कहती उससे पहले ही नीता ने बोल बोलने शुरू कर दिये। जैसे ही बोल समाप्त हुए नीता के पैर द्रुत गति से चलने लगे। वाता-वरण घुंघरुओं की ध्वनि से सिक्त हो गया। न जाने कब तबला वादक भी वहाँ आ पहुँचा था। लगातार आध घन्टे तक नृत्य की महफिल ही जम गई। सारा वायुमंडल नृत्य के बोलों,

तबले की ध्वनि और घुंघरुओं की मधुरता से आच्छन्न हो गया था। जैसे ही नीता का नृत्य थमा हमें ऐसा लगा मानो हम इन्द्रपुरी में किसी अपसरा का नृत्य देखते देखते मुग्ध हो उठे थे और गहरी नींद से एक झटके के साथ जाग गये थे। अनायास ही मेरे मुंह से "वाह वाह" निकल पड़ी। मैंने कुर्सी से उठ कर नीता को गले से लगा लिया। अमर ने भी उठ कर नीता के कंधे पर थपकी लगा कर वाहवाही में योग दिया। नीता काफी थक चुकी थी। मैंने उसे कुर्सी पर बिठाया। अमर मेरी ओर लगातार देख रहा था। मैं कुछ समझ नहीं पा रही थी। नीता के नृत्य से मुझे विश्वास हो गया था कि नीता फिल्मों में आकर सफल कलाकार बन सकती है। मैं चाह रही थी कि अमर ही कहे कि हम नीता को अपने नये चित्र में काम देने को राजी हैं लेकिन अमर तो मेरी ओर देखता जा रहा था। आखिर मैं ही बोली नीता सही अर्थ में कलाकार है। हमारे नये चित्र में नीता का अवश्य महत्वपूर्ण कार्य रहेगा। और मैंने अमर की ओर इंगित कर कहा क्यों अमर मैंने ठीक ही कहा है न। अमर के होठ हिले नीता जरूर नाम रोशन करेगी हम नीता को हीरोइन की बहन का रोल देंगे। बड़ा महत्वपूर्ण रोल है। अमर और आगे बोलता उससे पहले ही नीता कुर्सी से उछली और मुझसे लिपट गई। मुझे कुर्सी से खींच कर वह नाचती हुई और चिल्लाती गई चाची तुम कितनी अच्छी हो, चाची तुम कितनी अच्छी हो। मैं बड़ी मुश्किल से उससे छुटकारा पा सकी। काफी रात बीत चुकी थी। हम घर के लिए रवाना हुए।

× × × ×

"बैरन हो गई रात" का शूटिंग शुरू हो गया था। चित्र

का कथानक बड़ा दिलचस्प था । दो बहिनें एक ही व्यक्ति से प्रेम करती हैं । बड़ी बहन अध्यापिका और छोटी प्रसिद्ध नर्तकी । हीरो को बड़ी बहन से ही प्रेम है लेकिन छोटी इस तथ्य को नहीं जानती । उसे यह बात तब मालूम होती है जब वह हीरो और अपनी बड़ी बहन को एक दिन आलिंगन में बद्ध देखती है । वह बड़ी निराश हो कर आत्म हत्या कर लेती है। छोटी बहन के लिए थी नीता । और नायक था अमर ।

बम्बई में बीस दिन शूटिंग करने के बाद हमने काश्मीर में आउटडोर शूटिंग का कार्यक्रम तय किया। हमारा पूरा यूनिट श्रीनगर पहुंच गया । दिन में हम अलग-अलग जगहों में शूटिंग करते और शाम को अपने शिकारों में आकर करते । उस दिन झेलम में नावों की दौर का एक सीन था । लगभग पचास नावें थी । दिन भर के कठिन परिश्रम के बाद पूरा सीन शूट हो सका । अमर नीता और मैं एक ही शिकारे में थे । अमर और मैं एक ही कमरे में रहते थे । अंधेरी रात थी । दिन भर काम करने के बाद मैं काफी थक गई थी । मैं तो भोजन के बाद पलंग पड़ कर सो गई । रात को लगभग दो बजे मेरी आंख खुली । कमरे में अमर नहीं था । मैं पलंग पर से उठी और खिड़की के पास आ गई । अंधेरे में दूर तक झेलम का फेलाव था । कई शिकारे झेलम की गोद में झपकियां ले रहे थे । एक ओर बिशाल शाहबतूल के दरखतों के झुंड अंधकार से एकात्व स्थापित कर रहे थे । शराब का नशा मेरे दिमाग पर सवार था । मुझे ऐसा महसूस हुआ कि मैं अलकापुरी की अप्सरा हूँ और अपने पंख पसार कर झेलम के असीम विस्तार को नापने के लिए उड़ने की तैयारी कर रही हूँ । अपनी कल्पनाओं में खोई जा रही थी कि किसी की धीमी सी आवाज सुन कर चौंक

उठो। आवाज परिचित थी। शायद नीता धीमे बोल रही थी मैंने पीछे मुड़ कर देखा और ख्याल आया कमरे में अमर नहीं था। तो शायद नीता और अमर ही बातें कर रहे थे। लेकिन रात को दो बजे क्या बातें हो रही हैं। क्या यह हो बात करने का अवसर मिला है इन दोनों को। शंका की इक विद्युत रेखा मेरे दिमाग में कौंध गई। मैंने धीरे से कमरे का दर-वाजा खोला और धीरे-धीरे कदम बढ़ाती हुई उस कोने की ओर चल पड़ी जिस ओर से बात चीत का स्वर सुनाई पड़ रहा था। मैं जैसे ही कोने के नजदीक पहुँची दूमरे कोने से दो आकृतियाँ एक दूसरे से अलग हो अंधकार में बिलीन हो गई।

मैं अपने कमरे की ओर लौटा। हमारे पास का कमरा अमर का लिखने पढ़ने का कमरा था। मैं उस कमरे के आगे से ज्यों ही गुजरी अमर ने दरवाजा खोला। उसके हाथ में फाउन्टेनपेन और पटकथा की पुस्तक थी। उसने मेरी ओर देखा और पूछा "तुम्हें नींद नहीं आई अभी तक" मैं कुछ भी नहीं बोली। सोचती रही तो क्या शराब के नशे में मुझे भ्रम हो हुआ। अमर फिर बोला कल के शाट के लिए शुटिंग स्क्रिप्ट तैयार कर रहा था। तुम्हारे पैरों की आवाज सुनकर दरवाजा खोला। मैं फिर भी कुछ नहीं बोली। अमर के चेहरे पर किसी प्रकार के भय या शंका के चिन्ह नहीं थे। मुझे अपनी आंखों पर ही अविश्वास हो रहा था, मैं मौन अपने कमरे में आ गई अमर मेरे पीछे-पीछे आया और आकर पलंग पर सो गया।

हम काश्मीर से लौट आये। रणजीत स्टूडियो में शूटिंग चालू हो गया। अमर और नीता पर लगातार मेरा संदेह बढ़ता जा रहा था। शूटिंग के दौरान नीता और अमर की आंखों में मुझे विचित्र सा चमक मालूम होती थी। जब कभी अमर

नीता को छू लेता तो नीता के गालों पर लाली दौड़ जाती। और ऐसा लगता है मानो नीता के रोएं रोएं खड़े हो गए हैं। ऐसी स्थिति में मुझे इन दोनों पर बड़ा गुस्सा आता लेकिन अपने गुस्से को बाहर प्रदर्शित करने के लिए कोई खुला कारण मेरे पास नहीं था। अमर के ऊपरी व्यवहार में मुझे कोई अंतर नहीं दिखाई दे रहा था। वह अब भी मेरे साथ ही रहता था। लेकिन कभी-कभी कोई बहाना बना कर काफी रात बीतने पर घर आता। वह कोई न कोई ऐसा कारण बता देता कि मैं निरुतर हो जाती। कभी मुझे अपने सोचने के तरीकों पर ही गुस्सा आ जाता। मैं सोचती शायद शंका ने मेरे मन में घर कर लिया है। मैं फिजूल इन दोनों पर शक कर रही हूँ पर दूसरे ही क्षण मेरे सामने सेट पर का अमर और नीता का विचित्र व्यवहार सामने आ जाता और मेरी शंकाएं घनीभूत हो जाती। मैं दिन रात अपनी शंकाओं के कष्ट में घुली जा रही थी। इन दिनों मुझे मेरे नौकर कृष्णा में अद्‌भुत परिवर्तन दिखाई दिया। कृष्णा नियमित तौर से दाढ़ी मूंछे साफ करने लगा। कृष्णा का भरा हुआ सुडौल शरीर मुझे बड़ा आकर्षक लगने लगा था। कभी कभी निगाह चुरा कर वह मेरी ओर देखता और मैं जानती हुई भी अनजान बनी रहती। फिर जैसे ही कृष्णा अपनी निगाहें दूसरी ओर करने का इरादा करता मैं शरीर को इस प्रकार हिलाती कि कृष्णा झट किसी काम में उलझने का उपक्रम करने लगता। मुझे इस लुकाछिपी में बड़ा आनन्द आता। फिर एकदम बुद्धि मन को झकझोर कर कहती अरी बेशर्म कृष्णा तेरा नौकर है। तू अपने नौकर से प्यार करती है छिः? और मैं मन ही मन अपने आप को दुतकारती। लेकिन फिर

दूसरे दिन वही लुका छिपी का नाटक शुरू हो जाता।

अमर और नीता के प्रति जिस गति से मेरी शंकाएं बढ़तीं जा रही थीं उससे यही अर्थ निकाला जा सकता था कि मैं नीता से ईर्षा करती हूँ और मेरी वह ईर्षा शायद घृणा का रूप ले रही है। अजय के प्रति विद्रोह करके स्वतन्त्र हो जाने के बाद मेरा अहम अमर के पैरों में दंडवत करने को तैयार नहीं थी। मैंने अमर पर हुकूमत की थी और उसी हुकूमत को कायम रखना चाहती थी। मेरा अहम मुझे कहीं गलत रास्ते पर ले जा रहा था। अमर मेरी हुकुमत को ऊपरी तौर से मान कर मन ही मन मुझसे दूर होकर नीताको अपना रहा था। अपने अहम को अजेय बतलाने के लिए मैं कृष्णा से नाटक करती जा रही थी। बैरन हो गई रात''संपूर्ण हो गया। कृष्णा घरेलू कामों के नौकर से मेरा ड्रायवर बन गया। अब वह कभी-कभी मेरी बातों के बीच में अपनी सलाह भी देने लगा। पर मैं हंस कर उसे टाल देती। अमर इस परिवर्तन को देखता और कभी कभी तिरस्कार की नजरों से सब कुछ देख कर मुंह फिरा कर चल देता।

"बैरन हो बई रात" का उद्घाटन हुआ। राज्य के गवर्नर के हाथों उद्घाटन हुआ। चित्र की रिपोर्ट 'साधारण ठीक निकली। पर चित्र में किय गये नीता के अभिनय की समाचार पत्रों ने जोरदार प्रशंशा की। नीता के बारे में समाचार पत्रों ने लिखा-इस कलाकार के हृश्य में एक महान कलाकार छिपा हुआ है। भविष्य ही उस कलाकार का अनावरण करेगा। एक सप्ताह बाद पत्रों ने लिखा नीता को अमर इस चित्र में इस पात्र के रूप में प्रस्तुत नहीं किया जाता तो चित्र की बछिया बैठ जाती। मेरे बारे में इन्हीं पत्रों ने लिखा-प्रतिभा उच्चतम

शिखर पर पहुँच कर पुनः काफी नीचे उतर आई है। प्रमुख नायिका के रूप में प्रतिभा को प्रस्तुत करके चित्र का मूल्य कम ही किया गया है। पत्रों की आलोचना पढ़कर मेरा मन आक्रोश कर उठा। मुझे लगा जरूर अमर ने मुझसे अच्छा काम नहीं लिया। उसका मन भी नीता पर था। उसने जानबूझ कर मुझे नीचे गिराया है। मैं अमर से झगड़ना चाहती थी लेकिन उद्‌घाटन के दूसरे दिन अपने चाचा से मिलने का बहाना करके वह राजकोट चला गया। मुझे नीता पर गुस्सा आ रहा था। पर वह भी मुझे उद्‌घाटन के बाद दिखाई नहीं दी।

साँझ धीरे-धीरे कदम बढ़ाती मेरे बंगले में प्रविष्ट हो गई थी। अखबार बाले ने 'ईबनिंग न्यूज' को मेरे बगीचे में फेंका। मैंने कृष्ण को अखबार उठा लानें के लिए आवाज दी पर कृष्णा घर में नहीं था। मैंने ही उसें शराब लाने के लिए अंधेरी भेजा था। मैं बगीचे में पहुँची और अखबार को हाथ में उठा कुर्सी पर बैठ गई। अखबार काफी देर हाथ में ही पड़ा रहा। मैंने उसें उठा कर देखा तक नहीं। थोड़ी देर में कृष्णा शराव की तीन बोतलें लेकर लौटा। कमरे में आकर मैंने बोतलों को कागज के आवरण से बाहर किया और हतबुद्धि सो रह गई। तीनों देशी केशर कस्तूरी के अद्धे थे। मैंने गुस्से में कृष्णा की ओर देखा। कृष्णा अपनी मुद्रा में बोला क्या करता। भटक २ कर हार गया। बड़ी मुश्किल से उस ढोंढीवा की झोंपड़ी में यह केसर कस्तूरी ही मिली। देशी माल तो नाम को है विदेशी माल को ठोकर मारता है ढोंढीवान ने अकड़ कर जब कहा तो मैं ये तीन अद्धे ले आया। मैं कुछ कहने के लिए सोचना चाहती थी कि हाथ में ईवनिंग न्यूज के पहले पृष्ठ के ऊपर नजर जाकर रुक गई। सबसे ऊपर के दाहिने कोने में छपा था।

"आज सुबह ११।। बजे फर्स्ट क्लास मजिस्ट्रेट के कोर्ट में प्रसिद्ध निर्देशक अभिनेता अमर और नवोदिता तारिका नीता सिविल मैरेज की रीति के अनुसार विवाह बंधन में बँध गये।"

चौकोर आकार की छपी खबर के छपे अक्षर बड़ी तेज गति से मेरी आंखों के सामने घूमने लगे। मेरे अंग अंग में आग की लपटें उठ खड़ी हुई। मेरी आंखों के सामने आग बरसने लगी। मैं अपने आप को सम्हाल नहीं पारही थी। मैंने मन ही मन अमर और नीता के मुंह पर बार बार थूंका और उन्हें निकृष्टतम गालियां दी। कृष्णा सामने के गोलाकार टेवल पर केसर कस्तूरी की वोतलें रख कर फ्रिज से सोड़े की बोतलें निकाल रहा था। मुझे शराब का एक अद्धा पी लेने में कुछ देर नहीं लगीं। कृष्णा मेरी विचित्र अवस्था को देख कर जाने लगा पर मैंने उसे आदेश देकर रोक लिया। थोड़ी देर में दूसरा अद्धा भी खत्म होता नजर आने लगा। मुझ पर शराब का नशा सवार होने लगा था। कृष्णा अभी भी सामने खड़ा था। मुझे कृष्णा बहुत खूबसूरत जवान नजर आ रहा था। उसका भरा हुआ चेहरा पुष्ट बाजू और चौड़ी छाती। बड़ी-बड़ी आँखें संवारे हुए घने बाल। अमर में कृष्णा की जैसी फड़कती युवावस्था का रूप कहां था! मुझे अमर का चेहरा याद आ गया और घृणा से मानों मुझे कै सी होने लगी। कृष्णा के रूप में जो ताजगी थी, जो आकर्षण था। मैं लगातार कृष्णा के रूप को निहारती जा रही थी। कृष्णा कुछ सहम सा गया। मुझे उसका खड़ा रहना अखर रहा था। मैंने उसका हाथ पकड़ कर पास की कुर्सी पर बैठा दिया। और उसे आदेश के स्वर में कहा कि तुम भी पियो। कृष्णा उठ खड़ा हुआ। मुझे गुस्सा

आ गया। मैं चिल्लाई "बैठ जाओ"। और कृष्णा सहम कर बैठ गया। मैंने दूसरी ग्लास में शराब उड़ेली और कृष्णा के मुंह से लगा दी। जो कृष्णा पहले सहम रहा था वही कृष्णा आराम से पूरा पेग पी गया। मैंने दूसरा पेग उड़ेला। कृष्णा उसे भी साफ कर गया एक साथ दो पेग शराब पीने के बाद कृष्णा बहक गया। उसने मेरी कुर्सी से अपनी कुर्सी चिपका ली। और मेरी कमर पर जोर से थप्पी लगा कर हंसा मेम साहब। हां तुमको मेम साहब ही कहूंगा। शराब पीने के बाद क्या अमीर और क्या गरीब। हाँ तो तुमने आज मुझे पहचाना मैं तुम्हारी आँखों के सामने हमेशा खड़ा रहता था लेकिन तुम अपने बडप्पन के नशे में मेरी आत्मा को पहचान ही नहीं सकी। खैर। कोई बात नहीं।" कृष्णा बोलता बोलता रुक गया। उसने बोतल में से शराब ली और ग्लास को मुंह से लगाकर पी गया। दूसरा पेग मेरी ग्लास में उड़ेला और ग्लास को मेरे मुंह से लगा दिया। मैंने एक सांस ही में ग्लास को साफ कर दिया। कृष्णा कुर्सी से उठा और मेरी कुर्सी के सहारे खड़ा हो मेरे सामने झुका और बोला अमर और नीता हनीमून को गए। शायद उटकमंड गये हैं।" अमर और नीता का नाम सुनते ही ईर्षा की आग भड़क उठी। मैं चिल्लाई "उनका नाम मत लो। धोखेबाज नीच घिनौने कीड़े।" कृष्णा झुका ही झुका बोला "अब उनकी असलियत समझ में आई है। सुबह का भूला शाम को लौटा तो भी भूला नहीं कहलाता। खैर। यह भी ठीक हुआ।" और कृष्णा ने मेरा हाथ पकड़ मुझे कुर्सी से खींचा। मैं लगभग लुढक सी गई। कृष्णा ने मुझे सहारा देकर खड़ा किया और पुनः कुर्सी पर बिठा दिया। मैंने कृष्णा की ओर आंखें फाड़कर देखा कृष्णा आंखों में अपनी नजरे गड़ा कर

बोला—"क्या देख रही हो मेम साहिब इस प्रकार आँखें फाड़कर।" मैंने मुँह खोला और होठों से जैसे ही निकला कृष्णा? कृष्णा ने मेरे मुंह पर अपना हाथ रख दिया और बड़ नाटकीय ढंग से सी···ई···ई···ई····ई···ई···की आवाज निकाल कर बोला" कृष्णा नहीं। आज से कृष्णाराव। कृष्णाराव रेड्डी!! मैं मौन रह गई। कृष्णा फिर बोला "क्यों कृष्णाराव कहते कष्ट होता है। खैर जाने दो नाम में धरा ही क्या है। कृष्णा ही सही।" मुझे कृष्णा की इस बहक पर हंसी आ रही थी। पर मैं हंसी नहीं। कृष्णा का यह अद्भुत रूप मुझे बड़ा लुभावना लग रहा था। मैंने कृष्णा के हाथ को अपने हाथ में लिया और उसकी हथेली में धीमे धीमे अंगुलियाँ फिराने लगी गुदगुदी कृष्णा के अंग अंग में दौड़ गई। उसने इस बार जोर से मुझे अपनी ओर खींचा और मुझे अपनी छाती से लगा लिया। मैंने अपने आपको उसके हाथ में छोड़ दिया था। उसने मुझे अपने हाथों में उठाया और धीरे-धीरे कोई तेलगू गीत गा कर नाचने लगा। मुझे गीत के स्वर वहुत मधुर लग रहे थे। जैसे ही गीत खत्म हुआ कृष्णा के पैर लड़खड़ाये पर वह सम्हल गया और मुझे बाहों में उठाये ही फर्श पर बैठ गया। मैं उसकी गोद में थी, उसके अधिकार में थी वह आंखें फाड़े मेरे अंगों को देखता जा रहा था और मेरी बांहों पर अपनी उंगलियां फिराता जा रहा था।

× × × ×

उपसंहार

ले: अजय कुमार भादुड़ी
साकिन : नागपुर
हाल मुकाम : जुहू, बम्बई

मैं नहीं जानता था कि प्रतिभा की आत्मकथा का उप-संहार मुझे लिखना पड़ेगा। मैंने इस दिन की कल्पना भी नहीं की थी। प्रतिभा से झगड़ा करके मैं नागपुर लौट आया था। मेरा मन क्रोध में जल रहा था। मैं प्रतिभा को नीचा दिखाने का निश्चय कर चुका था। नागपुर में मालूम हुआ कि बाबा की पांडीचेरी में तबियत एक दम खराब हो चुकी है। मैं सीधा पांडीचेरी पहुँचा। बाबा के दर्शन ही हो सके। बाबा उसी दिन शाम को चल बसे, जिस दिन पांडीचेरी पहुँचा। मैं एक दम लाखों की सम्पत्ति का मालिक बन गया था। मैंने काफी सम्पत्ति को बेच डाला। और नागपुर से फिर बम्बई लौट आया। भाग्यवश समरेश भी फिर मिल गया। वह भी प्रतिभा से नाराज था। हमने मिल कर अपने प्राडक्शन की घोषणा कर दी। प्रतिभा को नीचा दिखाने के लिये बेला को नायिका चुन लिया। नायक अशोककुमार था।

मैं उपसंहार लिख रहा हूँ। बेला सामने बैठी है। बंगला वही है जिसमें प्रतिभा के साथ में एक अर्से तक रहा हूँ। प्रतिभा के साथ घटी एक एक घटना मुझे याद आ रही है। पर मानों

सब कुछ कल ही हुआ था। जीती-जागती मुस्कराती प्रतिभा कभी ड्रॉइंग रूम से बगीचे की ओर जाती थी तो कभी बगीचे की कुर्सी को घसीटती हुई दालान में आकर बैठती लेकिन अब प्रतिभा कहां। दस दिन हो होगये प्रतिभा की देह को अपने हाथों घोड़ बन्दर रोड़ स्थित बाघजी भाई की बाडी में जला कर आया हूँ। मरते दम तक प्रतिभा टकटकी लगा कर मेरी ओर देखती रही। जब मृत देह को चिता पर रखा तो मुझे लगा प्रतिभा अभी बोलेगी। इसी क्षण बोल उठेगी। उसका चेहरा ऐसा जीवन मय लग रहा था मानों वह किसी भी क्षण उठ कर बातें करने लगेगी। लेकिन सब भ्रम था, मेरी आंखों का महज भ्रम।

मैंने ईर्षा और क्रोध के वशीभूत हो नये प्राडक्शन की घोषणा तो कर दी लेकिन लगातार जो अनुभव हो रहे थे उससे मैंने तय किया कि किसी प्रकार यह प्राडक्शन पूरा हो जाय कि बस गंगा नहाये। इसके बाद प्राडक्शन का नाम तक नहीं लूँगा। हमारा चित्र असफल ही रहा। मेरे लिए चित्र का असफल रहना वरदान सिद्ध हुआ। बेला को भी इस असफता ने मेरे साथ बांध दिया था। चित्र के असफल होते ही मैंने नागपुर लौटने का निश्चय किया लेकिन नागपुर लौटते हुए शर्म महसूस हो रही थी। न तो प्रतिभा को तलाक ही दे सकता था और न बेला के साथ विवाह ही कर सकता था। ऐसी स्थिति में समाज में रहना बड़ा कठिन था मैं ऐसे शहर में जाकर रहना चाहता था जहां मेरी पहचान का कोई नहीं हो। पर किस शहर में जाकर रहूँ कुछ तय नहीं कर पा रहा था। आखिर बम्बई के ही उपनगर दहीसर में एक बंगला किराये पर ले

लिया और वहीं रहने लगा। दहीसर यूं तो बम्बई का उपनगर है लेकिन है इतना दूर की बम्बई के कर्मसंकुल जीवन से आदमी को राहत मिल जाती है। मैंने बंगला भी काफी दूर एकांत में लिया।

मैं लिखने तो बैठा था प्रतिभा की आत्मकथा का उपसंहार और लिखने लगा हूँ अपनी ही आत्मकथा। बेवकूफ हूँ मैं। बात यूं हुई कि सुबह का समय था। मैं अपने बगीचे में में घूम रहा था। बेला अपनी नियमित पूजा में लगी थी। मैं उसके भजन की पंक्ति स्वामी पाप हरो देवा, श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ सन्तन की सेवा।

ओम जय जगदीश हरे...... ....को बड़ गौर से सुन रहा था। बेला फिल्म के जीवन को पूर्णतः भूल कर अपनी गृहस्थी में लीन थी मैं सोच रहा था जीवन कैसे-कैसे परिवर्तन आते हैं। आदमी सोचता क्या है और हो जाता क्या है। मैंने बेला की कभी जीवन में कल्पना भी नहीं की थी और बेला ने स्वप्न में भी मेरे बारे में नहीं सोचा होगा लेकिन आज हम दोनों एक साथ हैं, प्रतिभा के साथ जिस जीवन-बन्धन में बंधा था वह बंधन कैसे टूट गया। लेकिन दोनों बन्धन मुक्त होकर भी औपचारिक तौर पर बन्धन मुक्त नहीं हैं। समाज ने दोनों की बन्धन मुक्ति पर अपनी मुहर कहां लगाई। बेला भी समाज की नजरों में मेरे साथ वैधनानिक तौर पर कहाँ बंध पाई है। तो क्या यह व्यापार इसी प्रकार चलता रहेगा। लेकिन यह सब चलेगा कैसे। बेला के सन्तान हुई तो समाज की नजरों में उसका स्थान कहां होगा वह कानूनन मेरी और बेला की सन्तान नहीं मानी जायेगी। यह दुविधा पूर्ण स्थिति कब तक चलती रहेगी! इससे विस्तार कैसे होगा।

मैं इन्हीं विचारों की उधेड़ बुन में लगा कि पोस्टमेन ने आवाज दी, "बाबूजी तार लीजिए, आपका तार है । मैंने आगे बढ़ कर तार लिया और उसे खोला । संदेश था प्रतिभा सख्त बीमार है, नानावटी हास्पिटल फौरन पहुँचो । तार देने वाला था समरेश बसु । मैं तार के सन्देश को देखता ही रहा । कुछ तय नहीं कर पा रहा था । प्रतिभा सख्त बीमार है । नानाबटी हास्पिटल में है और तार देने वाला समरेश है । यह सब चक्कर क्या है । तीन साल से ज्यादा हो गया । मैंने कभी प्रतिभा से बात तक नहीं की । हां दो चार बार होटलों में देखा जरूर था । मुझे देख कर वह मुंह छिपा कर भाग खड़ी होती और मैं ऐसी मुखमुद्रा बनाता मानों मैंने उसे देखा भी नहीं हो । लेकिन आज यह एका एक तार कैसे आगया । मैं सोचता ही जा रहा था कि बेला आगई । मुझे मौन खड़ा देख कर उसने मेरे हाथ से तार ले लिया । सन्देश पढ़ कर बोली, अरे देख क्या रहे हो, समरेश का तार है, जरूर प्रतिभा की हालत नाजुक है । ऐसे मौके पर वह और किसको याद करेगी । शायद अन्तिम घड़ियाँ ही गिन रही हो । मुझे तब ऐसा लगा मानो प्रतिभा किसी दुर्घटना को शिकार हो गई है और अपनी जीवन की अन्तिम घड़ियां गिन रही है । हम दोनों बम्बई जाने के लिए तैयारियां करने लगे ।

मोटर गाड़ी सड़क पर दौड़ती जा रही थी । दोनों ओर कभी जंगल की हरियाली आ जाती सो कभी मकानों की एक लम्बी कतार । मैं सोचने लगा- जीवन भी कैसी द्रुत गति से भागता जाता है । तीन साल पहले प्रतिभा और अजय एक थे । अलग होने की कोई कल्पना नहीं कर सकता था और फिर एक ही दिन में, नही नही, एक ही पल में दोनों अलग हो

गये। मानों जबरदस्त बाढ़ आ गई और नदी के दोनों किनारे एकाएक एक दूसरे से बहुत दूर चले गए। शायद बाढ़ उतरने को है और दूर हटे हुए किनारे नजदीक आने की तैयारी कर रहे हैं। इन तीन सालों में क्या हुआ। प्रतिभा के बारे में मैं क्या-क्या नहीं सुनता रहा। प्रतिभा प्रसिद्धि के शिखर पर पहुँच गई। फिल्म संसार की सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री। जगह-जगह समय-समय पर जिसका सम्मान हुआ। अखबारों ने उसकी प्रशंसा में पृष्ठ रंग डाले। एक के बाद दूसरा, दूसरे के बाद तीसरा प्रतिभा के चित्र सफल निकलते गये। और जब असफलता का आरम्भ हुआ तो कैसा। अमर ने नीता से शादी कर ली। प्रतिभा को दूध की मक्खी की तरह निकाल कर दूर फेंक दिया। अमर ने नीता को शोहरत की सीढ़ी पर बिठाया और आज उसे ऊंचा चढ़ाने में अपनी पूरी ताकत लगाता जा रहा है। प्रतिभा एक भूल भुलैया के चक्कर में उलझी और ऐसी उलझी कि अन्दर ही अन्दर फंसती रह गई। आज इसी भूल भुलैया से बाहर न निकल पाने का पछतावा उसके मन पर भार बना होगा और उसी भार को दूर करने के लिए, मन को हल्का करने के लिए, वह शायद मुझे अपने मन की बातें कहे।"

एक जगह गाड़ी रुक गई थी। बस और मोटर सायकिल की जबरदस्त दुर्घटना हो गई थी। मोटर साइकिल बस के इंजिन में फंस गई थी। मोटर साइकिल सवार की स्थिति की कल्पना कर मेरा रोआं-रोआं खड़ा हो गया। मैं कांपने लगा। शायद प्रतिभा ऐसी ही घड़ियों का इंतजार कर रही होगी-मैंने ड्रायवर को ताकीद की गाड़ी चल पड़ी।

मेरे मन को पंख लग गये थे। वे भूतकाल के विस्तार-मय आकाश में उड़ानें भर रहे थे। प्रतिभा के एक के बाद एक बाद इस प्रकार चार चित्र असफल हुए। जो प्रतिभा एक दिन रजतपट की साम्राज्ञी मालूम हो रही थी वही प्रतिभा उसी रजतपट की घसियारिन बना दी गई। हीरोइन के पद से उतार कर उसे साइड रोल करना पड़ रहा था। उसके प्रशंसकों ने उसे छोड़ दिया था। किसी समाचार पत्र में कहीं भी उसका चित्र दिखाई नहीं देता। मैंने प्रतिभा को अब कभी देखा तो ड्रायवर के स्थान पर पुराने नौकर कृष्णा के साथ ही देखा। प्रतिभा और कृष्णा के रिश्ते के बारे में प्रारम्भ में तो काफी चर्चा हुई लेकिन धीरे-धीरे लोग उसे भूल गये। यह कितना सत्य है कि आप यदि प्रसिद्धि के शिखर पर हैं तो आपके प्रशं-सकों तथा आलोचकों की संख्या बढ़ती जाती है। जिस दिन आप उस शिखर से नीचे गिरे आपके प्रशंसक और आलोचक तमाशबीनों की तरह क्षण भर में बिखर जाते हैं।

साल भर से तो मैंने प्रतिभा के बारे में कुछ भी नहीं सुना। हां उसका आखिरी चित्र देखा था। उसमें प्रतिभा को बुढ़िया का रोल दिया गया था। न जाने किन परिस्थितियों के चक्कर में पड़ कर प्रतिभा ने बुढ़िया का रोल स्वीकार किया था। मुझे प्रतिभा का चेहरा देख कर ही महसूस हो रहा था कि प्रतिभा मन ही मन निर्देशक को हजारों गालियाँ दे रही है। सफेद विग को सिर पर रखते समय मेक मैंन से उसने अवश्य झगड़ा किया होगा और बुढ़िया का मेकअप करते समय जब हाथों पर गले पर, मुँह पर अंडों का रस लगाया गया होगा तब तो प्रतिभा ने मेकअप मेन को परेशान कर दिया होगा। उसी चित्र में प्रतिभा को जवान भी बताया गया था।

शायद इस जवान युवती के रौल के लालच में पड़ कर ही उसने बुढ़िया बनना स्वीकार था। निर्देशक भी पूरा हरफन मौला था। उसने भी प्रतिभा को जोरदार धोखा दिया। बुढ़िया स्त्री के रोल को ही प्रमुख रूप में प्रस्तुत कर दिया। अभिनय उच्च कोटि का था लेकिन प्रतिभा के अहम पर इस चित्र ने जोरदार चोट की होगी। उस चित्र के बाद वह किसी चित्र में दिखाई नहीं दी। बीच में साल भर तक वह बम्बई से कहीं बाहर चली गई थी। शायद देशाटन को निकल पड़ी हो या अपनी मां से मिलने वृन्दावन ही चली गई हो।

मोटर कार की गति धीमी करनी पड़ी थी। फिल्मिस्तान के आगे काफी भीड़ भाड़ थी। स्टुडियो के मजदूर और अभिनेताओं के दल खड़े खड़े न जाने क्या बहस बाजी कर रहे थे। स्टुडियो के आगे ही पुराने परिचित श्री पई दिखाई दिये। मैं श्री पई को टालना चाहता था। श्री पई की आदत है साधारण सी बात को लम्बी चौड़ी बना कर कहना। बस शुरू हुए तो कार में आकर बैठ जायेंगे। और सारे रास्ते में अपनी कथा का चक्कर चलाते जायेंगे। लेकिन अच्छा ही हुआ। श्री पई की नजर मेरी कार पर नहीं पड़ी। वे स्टुडियो में ही चले गये। कार आगे बढ़ी। फिल्मिस्तान स्टुडियो ने फिर फिर पुरानी स्मृतियों को जागृत कर दिया..........लगभग दस बजे थे। उस दिन प्रतिभा आ गई थी। मेरे सर में दर्द था अतः मैं ठहर कर शूटिंग में आया। कुछ दिनों से फिल्मिस्तान में ही शूटिंग चल रही थी। जैसे ही मैं सेट पर गया तो देखा कि अमर प्रतिभा को सीने से लगाये सेट पर खड़ा है। मेरे अंग-अंग में आग लग गई। मुझे कई दिनों से अमर और प्रतिभा का मेल जोल अच्छा नहीं लग रहा था। मैं प्रतिभा को

स्पष्ट कहना चाहता था। वह स्टूडियो के अलावा अमर से मिले नहीं लेकिन कई बार तय करके भी कहने की हिम्मत नहीं बटोर पाया मैं। सोचता था शायद मेरी शंका निर्मूल हो और प्रतिभा मेरी बेवकूफी पर हंस नहीं पड़े। लेकिन उस दिन मैंने तय कर लिया आज प्रतिभा को स्पष्ट कहूंगा। और समरेश से भी बात करूंगा मुझे इस तरह के दृश्य पसंद नहीं हैं। मैं ऐसे दृश्यों को फिल्माने के लिए राजी नहीं हो सकता। मैं सोच रहा था उतने समय में तो शाट समाप्त हो गया। मुझे देख कर प्रतिभा सेट पर से भागती आई और मुझे पकड़ कर अपने मेकअप के कमरे में ले गई। बोली—"पहले यह बताओ अब तुम्हारा सरदर्द तो ठीक है न ?" प्रतिभा ने कुछ इस प्रकार खुले दिल से पूछा कि मैं अपने निश्चय को भूल ही गया। मैंने उत्तर दिया "मामूली सा दर्द था। ठीक हो गया।" पर प्रतिभा यूं थोड़े ही मानने वाली थी बोली—"नहीं यूं ही बैठे रहो मैं सिर पर मालिस किये देती हूं। यू डी कोलोन है। अभी सिर दर्द भाग खड़ा होगा।" मैंने प्रतिभा को रोकने की कोशिश की पर वह सस्ते में ही मान जाने वाली थोड़े ही थी। मुझे मूर्तिवत बैठना ही पड़ा। मैं सोच रहा था। अगर किसी ने पति पत्नी का यह रूप स्टुडियो में देख लिया तो मजाक उड़ायेंगे। पर प्रतिभा को समझाता भी कैसे। आखिर हुआ यह कि दरवाजा खुला और समरेश ने प्रवेश किया मैं शर्म से पानी पानी हो रहा था पर प्रतिभा बिना किसी हिचक के सिर पर मालिस किये जा रही थी। मैंने उसका हाथ पकड़ कर कहा "अब रहने दो प्रतिभा। अब एक दम ठीक है।" समरेश ने मेरी ओर देखा और मुस्करा कर बोला "अजय बाबू बड़े भाग्यवान हो कि प्रतिभा सी पति परायण पत्नी मिली।" मैंने नजर उठा

कर समरेश की ओर देखा और मन ही मन महसूस किया—मैं कितना भाग्यवान हूं। बेकार फिल्मों के अभिनय को देख कर बहक जाता हूं। प्रतिभा पर शंका कर बैठता हूँ। समरेश लौट ही रहा था कि अमर भी आ पहुँचा अमर को आया देख मैं बड़ा खुश हुआ। प्रतिभा के द्वारा मालिस मुझे बड़ी आनन्द-दायक मालूम होने लगी। समरेश के आगमन से जो लज्जा महसूस हुई थी वह क्षण भर में ही गायब हो गई। मैंने मन ही मन चाहा कि अमर कुछ देर रुक कर पति पत्नि के सच्चे प्रेम देखे। लेकिन समरेश के साथ ही अमर लौट गया। मैंने प्रतिभा का हाथ पकड़ कर उसे सामने के सोफे पर बैठा दिया। मैंने अपनी शंका का प्रतिभा के सामने अनावरण करते कहा "तुम्हारे इस प्रेम भरे अभिनय को सेट पर देख कर मेरे मन में आग लग गई थी। मैं भी कैसा बेबकूफ हूँ। अभिनय को सत्य समझा। बड़ा मूर्ख हूं मैं।" प्रतिभा पहले तो कुछ झिझकी और फिर जोरों से हंसी बिखेरती हुई बोली—"अभिनय को देखते देखते अभिनय को ही सत्य मत समझ लेना। तुम्हारी यही तो कमजोरी है।" प्रतिभा के इशारे को समझ कर मुझे अपनी मूर्खता पर शर्म महसूस होने लगी। मैंने अपनी शर्म को प्रतिभा का हाथ अपने हाथ में दबा कर दूर कर दिया। मैं शायद प्रतिभा को अपनी ओर खींच कर सीने से भी चिपका लेता पर उसी समय दरवाजे पर खट खट की आवाज हुई। मैं अपनी कुर्सी पर सीधा वैठ गया। दरवाजा खुला। सामने सहयोगी निर्देशक खड़ा था उसने कहा मैडम आप तैयार हैं क्या? सब रेडी है। प्रतिभा ने उत्तर दिया—"अभी आ रही हूं। मेकअप को टच करना है।" दौड़ी दौड़ी मेकअप करने वाली लड़की मेरिया आ गई। मैं उठ कर सेट की ओर बढ़ चला।

अब सोचता हूँ प्रतिभा उन दिनों दो किनारों के बीच चक्कर काट रही थी। मैं पति था अतः उसके परम्परा गत सामाजिक विश्वास मुझसे बंधे रहने के लिए उसको घसीट रहे थे। वह अपने कर्तव्य का पालन करने के लिए मेरे प्रति अपनी भक्ति को अधिक प्रदर्शित करना चाहती थी। दूसरी ओर उसे अमर से भी लगाव था। लेकिन वह लगाव अपनी प्रारम्भिक अवस्था में ही था। मैं मन की गहराइयों को समझ पाऊं इतना ज्ञान, इतना जीवन का अनुभव, मेरे पास नहीं था। मैं शंका और ईर्षा के बीच सदैव हिचकोले खाता रहा। कभी प्रतिभा से साधारण सी बात पर रूठ जाता तो कभी बिना कारण ही बे मौके ही उससे उलझ जाता। कभी इस प्रकार से मीठी मीठी बात करता कि प्रतिभा को तो क्या मुझे भी वे बातें बे मतलब की, और नाटकीय लगने लगतीं। मेरा ऐसा कोई मित्र भी नहीं था जिससे मैं अपनी बातों का निराकरण करवाता या जो मुझे अपनी सच्ची सलाह देकर मेरी मदद करता। मैं बड़ी विचित्र परिस्थिति में मकड़ी जाल में उलझता जा रहा था।

जुहू तट पर लहरों में फंसने और प्रतिभा को बचा लेने के बाद मुझे ऐसा महसूस हुआ कि मैंने प्रतिभा को खोया ही नहीं है। प्रतिभा मेरी है और बनी रहेगी। लेकिन न तो मेरे पास भाषा की ऐसी प्रौढ़ता है कि मैं अपने भावों को उपयुक्त रूप से व्यक्त कर सकूँ न मेरे पास अभिव्यक्ति का दूसरा माध्यम ही है। मैं प्रतिभा को पाकर भी पूर्ण रूपेण पा नहीं सका था। उस दिन अमर सुबह सुबह मोटर कार लेकर आ गया। मुझे उसका आना अच्छा नहीं लगा। मैंने कृष्णा से उसे कहला दिया—"आप जाइये प्रतिभा ठहर कर आयेगी।" अमर तो

बिना कुछ पूछे-ताछे लौट गया लेकिन प्रतिभा को यह व्यवहार असभ्यता पूर्ण लगा। उसने कहा–"यह कैसी आदत है तुम्हारी, घर पर आये व्यक्ति का इस प्रकार अपमान तो नहीं करना चाहिये। मुझे ही कह देते मैं स्वयं कोई बहाना ढूंढ़ निकालती।" मैंने प्रतिभा को उत्तर नहीं दिया। प्रतिभा बोलती गई—"तुम अविश्वास की लपटों में दहक रहे हो। तुम्हारे इस शंकाशील दग्ध-मन के लिए मैं अब कौनसा शीतल लेप लगाऊं। भगवान तुम्हें किसी प्रकार सुबुद्धि दे।" उत्तर देने के लिए मेरे पास उपयुक्त शब्द नहीं थे। और न उपयुक्त विचार ही थे। अगर मेरे पास उपयुक्त अभिव्यक्ति का संबल होता तो मैं प्रतिभा को निरुत्तर कर देता। मेरे कार्य के औचित्य को सिद्ध कर देता। लेकिन क्या करूँ। मेरे जीवन की विडम्बना तो यही है। मैं मौन प्रतिभा की ओर देखता रहा और फिर रूठ कर मुंह फिरा कर बगीचे में घूमने लगा। प्रतिभा मेरे पीछे-पीछे आई और बोली—"यूँ रूठ कर क्यों मन की पीड़ा को घनीभूत कर रहे हो। मुझे स्पष्ट तो कहो जो कुछ कहना है। मैं तुम्हारे मन की भावनाओं को समझ सकूं ऐसी कोई तरकीब तो बताओ। बस कुछ कहा और रूठ गए। मौन रह गये।" मैं निरुत्तर था। मेरे मस्तिष्क में न जाने कैसे धुंधले-धुंधले कुहरे के पर्दे फैलते जा रहे थे। मुझे बगीचे में ठहरना तक नागवार गुजर रहा था। प्रतिभा मेरे उत्तर की राह देख रही थी। और मैं उस दूभर स्थिति से नजात पाने की राह ढूंढ रहा था। पीछे से कृष्णा ने टेबल लाकर रखी और पूछा–"मेम साहब नास्ता यहीं ले आऊं।" प्रतिभा उसे कुछ आदेश देने के लिय मुड़ी। मैंने बाहर निकलने का उचित अवसर पाया और फाटक को खोल कर समुद्र की ओर चल पड़ा। प्रतिभा पीछे-पीखे भागती आई।

दोनों समुद्र तट पर मौन घूमते रहे। मौन ही लौट आये और स्टूडियो चल पड़े।

मानव मन की गहराईयों की थाह पाना कठिन है। मैं प्रतिभा के अत्यंत निकट रह कर भी उसकी अन्तरात्मा की भावनाओं को कभी ठीक तौर से समझ नहीं पाया। नागपुर की सीधी सादी, संकोचशील प्रतिभा फिल्मी दुनियां में आकर कहां से कहां पहुँच गई। मैं प्रतिभा को इस स्थिति के लिये अपने आप को भी उत्तर दायी मानलू तो भी अनुचित नहीं है। मैं जब किसी बात को छेड़ता और वह बात प्रतिभा को पसन्द नहीं आती तो प्रतिभा मौन धारण कर लेती थी। मैं अपनी बात को घसीटता ही जाता और प्रतिभा की प्रतिक्रिया की ओर ध्यान नहीं देता था। प्रतिभा की प्रकृति अ तमु खी थी। वह चिन्तन ज्यादा करती और कह कर कम प्रकट करती थी। मैं उसके साथ रह कर भी उसके मन में उतर नहीं पाया। नागपुर की ही घटना है। दुर्गा पूजा के उत्सव पर एक नृत्य नाटिका का आयोजन किया गया था। कालेज के दिनों में प्रतिभा नाटकों में अभिनय करती थी। अतः उसकी सहेलियों ने इस नृत्य नाटिका में प्रमुख कार्य करने के लिए उसे दबाया। प्रतिभा ने मुझसे सहमति मांगी। मुझे इसमें कुछ गलत नहीं लगा नृत्य नाटिका हुई और बड़ी सफल रही। चारों ओर से प्रशंसा के फूल बरसने लगे। अखबारों ने भी अपने कला विवेचन के कालमों को भर कर छापा। एक साप्ताहिक ने बड़े भेहूदे ढंग से विवेचन किया। मेरे बाबा को यह अखबारी विवेचना बड़ी बुरी लगी। उन्होंने दूसरे दिन मुझे बुला कर कहा "अजय, मेरे बुढ़ापे को शांति के साथ गुजरने दोगे या नहीं?" मैं बाबा के प्रश्न को समझ नहीं पाया। बाबा ने पुनः आदेश दिया—"प्रतिभा

को बुलाओ।" मैं प्रतिभा को बुला लाया। बाबा ने प्रतिभा की ओर देखा। प्रतिभा सिर झुकाये कुर्सी पर बैठी थी। बाबा काफी देर मौन बैठे रहे और फिर बोले, "बेटी तुम्हें तो शायद बुरा लगेगा लेकिन मैं स्पष्ट कहता हूँ। अपने विचारों को सदैव स्पष्ट कहने में ही विश्वास रखता हूँ। तुमने उस साप्ताहिक में नाटिका का विवेचन पढ़ा ही होगा। मैं मानता हूँ कि इस समाचार पत्रों को कीचड़ उछालने में ही आनन्द आता है लेकिन समाज हर घटना की पूरी गहराई में नहीं जाता। व्यर्थ ही मेरे जैसे बूढ़े के मन में उथल पुथल मच जाती है। इस विवेचन ने मेरी मानसिक शांति को भंग किया है।" प्रतिभा सिर झुकाये हुए सुनती रही। बाबा बोलते "रहे तुम्हें मेरे मन की शांति का ख्याल रखना ही होगा।" बाबा इससे आगे कुछ नहीं बोले। प्रतिभा बाबा की भावनाओं को समझ गई। उस घटना के बाद से दो महोत्सव आये लेकिन प्रतिभा ने किसी कार्य-क्रम में कोई विशेष दिलचस्पी नहीं दिखाई। नीता ने भी कई बार कहा। अन्य सहेलियों ने भी ताने दिये, फिर भी वह मौन रही मैं यह नहीं समझ पाया कि प्रतिभा मन ही मन अपने आप को कुचल रही है। उसके मन में अन्य सहेलियों का अभिनय देख कितना दर्द होता रहा होगा मैंने कभी कल्पना नहीं की थी। बाबा सारे काम को छोड़ गृहस्थ जीवन से अवकाश ले, वानप्रस्थ बन कर, पांडीचेरी चले गये। हम दोनों सामान्य गति से जीवन यापन करते जा रहे थे कि समरेश आ पहुँचा। प्रतिभा के जीवन में मोड़ आगया। अभिनय क्षेत्र में प्रसिद्धि प्राप्त करने की प्रतिभा की आन्तरिक इच्छा तो थी ही मैं भी मौका देख कर लालच में पड़ गया। सोचा मैं भी निठल्ला बैठा हूं। क्यों नहीं पैसे ही कमाये जावें। एक दो चित्रों में काम

करने पर प्रतिभा के लाखों रुपये इकट्ठे हो जायेंगे। और तब हम लौट कर नागपुर आ जायेंगे। लेकिन मेरा सोचना कितना गलत था। प्रतिभा ने स्वयं के अनुशासन में अपने आप को बांध रखा था। उस अनुशासन की लक्ष्मण रेखा को लांघने के बाद पुनः लक्ष्मण रेखा के घेरे में लौट पाना कठिन है इसे मैं समझ नहीं पाया। जीवन में इस गति से मोड़ आये कि मैं अपने आप सम्भल ही नहीं सका। प्रतिभा बड़ी दुरगति से नये क्षेत्र के अन्तर में प्रवेश करके आगे बढ़ती गई। मैं मुंह बाये देखता ही रहा! देखता ही रहा! सब कुछ मेरी आंखों के सामने होता रहा। जब मुझे कुछ समझ में आया, परिस्थितियों ने ऐसी पेचदिगियां पैदा कर दी थी ऐसी उलझन भरी गांठे कस दी थीं, मुझमें सुलझाने की शक्ति ही नहीं रही। मैं मन ही मन कुढ़ता रहा। मेरी स्थिति उस मल्लाह की सी थी जिसकी नाव समुद्र में लहरों के थपेड़े खाये जा रही। थी लेकिन जिसके बल्ले टूट चुके थे।

मेरी मोटर कार तेज रफ्तार में आगे बढ़ती जा रही थी। मेरे विचार भी मोटर के साथ ही सरपट भागते जा रहे थे लेकिन मेरे विचारों की दिशा पीछे की ओर थी। दायें बांये दूध वालों के बड़े बड़े तबेले जिनमें मोटी ताजी भैंसों में एक भैंस की ओर देखने लगा। भैंस रस्सी तुड़ा कर तबेले से भाग निकली थी और सड़क पर दौड़ती हुई चली आ रही थी। गाड़ी के लिए खतरा पैदा हो गया था। यंत्र की शक्ति को बाहुबल से भय था लेकिन बड़ा अच्छा हुआ कि भैंस के पीछे एक कुत्ता जोरों से लपका। भैंस उछली और सड़क से उतर कर पास के खुले मैदान में सरपट भागने लगी। क्षण भर में हमारी मोटर आगे निकल गई।

मैं खोया खोया सा बैठा था। बेला ने मेरे कंधे पर हाथ रखा। मैं चौंक पड़ा। बेला मेरी ओर देख कर बोली–"कितना अर्सा बीत गया, हमने प्रतिभा के बारे में कुछ सुना ही नहीं है" मैं बेला की ओर देखता रहा लेकिन कुछ बोला नहीं बेला बोलती गई–"अमर कितना स्वार्थी निकला। नीता के साथ शादी की पर किसी को पता तक नहीं लगने दिया। मैंने तो जब उसे पहले दिन देखा, समझ लिया था यह अमर बड़ा होशियार और स्वार्थी है। इस आदमी को अपनी उन्नति से ही मतलब है। इसे सहायता के लिए सीढ़ी की जरूरत है। एक बार ऊँचा चढ़ गया तो सीढ़ी बनने वाले को लात मार गिरा देगा।" मैं मौन सुनता जा रहा था। न तो हां कहने की इच्छा हो रही थी और न ही ना कहने की। बेला बोलती गई—"जिस समरेश ने अमर को अपना शागिर्द बनाया, दिग्दर्शन के काम में पारंगत बनाया, रजतपट का हीरो बनाया उसी समरेश को इस अमर ने भुला दिया। भुलाया ही नहीं धोखा दिया। प्रतिभा के साथ तो अमर ने जैसा सुलूक किया है वैसा कोई भी आदमी किसी के साथ नहीं करेगा। प्रतिभा के सिवा कौन अमर को अपने चित्रों में हीरो बनाता। लेकिन कितना ओछा और घिनौना प्राणी निकला यह अमर। और अब हालीवुड में घुस रहा है। उस नीता को साथ लिए।" मैं नहीं चाहता था कि बेला भूत काल के हृदय को कुरेदे। मुझे ऐसा महसूस हो रहा था मानों सुई की तीखी नोक से मेरे मन का कोई गहरा घाव कुरेदा जारहा है। कुछ बोलने की फिर भी इच्छा नही हो रही थी। बेला बोलती गई–"अमर ने सोने के अंडे देने वाली मुर्गी फंसाई है। नीता का बाप लाखों करोड़ों मालिक है। उसी के पैसों के सहारे अमर अमरीका में मौज

कर रहा है। वह जानता है कि ये करोड़ों रुपये तो समाप्त होंगे नहीं और उसके आनन्द में बाधा पड़ेगी नहीं लेकिन मैं तो मानती हूँ ऐसे लोग हमेशा सुखी नहीं रह सकते। ना मालूम यह आदमी कब नीता को भी धोखा दे दे। ऊपरी तौर से भले ही नीता से प्यार करता रहेगा लेकिन अन्दर ही अन्दर वह नई प्रेमिकाओं से रंगरेलियां मनाता रहेगा। ऐसे आदमी तो प्याज के समान होते हैं जिनके न मालूम कितने आवरण होते हैं। एक छिलका उतारो तो दूसरा तैयार है। दूसरा उतारो तो तीसरा आवरण तैयार है। इनका शरीर तो आवरणों से बना रहता है। साक्षात छल और कपट के अवतार होते हैं ऐसे लोग।" बेला मेरी ओर देखती मौन हो गई। बिना कुछ सोचे ही मेरे होठों से निकला—"चाहे कितने आवरण हों लेकिन आवरणों के उतरने पर ऐसे लोगों की काया तो क्षीण होती है, और एक दिन अन्त भी।" मैं फिर मौन हो गया। बेला आगे कुछ नहीं बोली। हमारी कार अंधेरी से गुजर रही थी।

मैं सोचने लगा बेला ने प्रतिभा के विरुद्ध कुछ भी नहीं कहा। शायद बेला ने ऐसे मौके पर कुछ कहना उचित नहीं समझा हो। प्रतिभा की हालत गंभीर है। और उससे मिलने के लिए हम लोग जा रहे हैं, ऐसी स्थिति में बेला कहे भी क्या। मेरी नजर आगे के बस स्टेन्ड पर पहुँची। क्यू में चीनू चीचड़ खड़ा था। बेचारा चीनू चीचड़। उम्र भर फिल्मों में कमेडियन का साधारण काम करता रहा और कर रहा है। किसी ने इसे ऊंचा नहीं उठाया। अन्य अभिनेताओं के मोटरें हैं। बंगले हैं, और चीनू जैसे लोग अभी भी केवल एक कमरे में जीवन व्यतीत करते हैं और बम्बई नगर की विशाल दूरियों को बसों

के सहारे पार करते रहते हैं। बेला की नजर भी चीनू की ओर पहुँची। चीनू अपने आप में खोया सामने पेड़ की ओर देख रहा है। उसका ध्यान हमारी ओर कैसे जाता। बेला ने कहा, " चीनू कितना भला और सद् विचारों वाला आदमी है। इसने कभी मेरे साथ मजाक तक नहीं किया। एक उस बदमाश रेवाकिशन ने मुझसे छेड़खानी की थी तो चीनू ने मुझे बचाया। फिर तो प्रतिभा ने भी रेवा किशन की अच्छी तरह से खबर ली थी। प्रतिभा का वह रूप याद करके कभी कभी मैं हैरत में पड़ जाती हूँ। चरित्र के सम्बन्ध में ऐसी कठोर होकर भी प्रतिभा के जीवन में कैसे परिवर्तन आ गया। वह क्यों अपने आपको सम्हाल नहीं पाई।" बेला आगे बोलती ही जाती लेकिन नानावटी अस्पताल आ गया था और हमारी कार फाटक में प्रवेश कर रही थी। मुझे प्रतिभा के कमरे का पता तक नहीं था। मेरे मन में जोरों से हलचल मच रही थी। न जाने प्रतिभा किस हालत में होगी। कौन उसके पास होगा। वह मुझे क्या कहेगी। बेला को साथ देखकर उसकी क्या प्रतिक्रिया होगी। मैं कुछ भी समझ नहीं पा रहा था। गाड़ी पोर्च में रुकी। बेला और मैं नीचे उतरे और सामने की सीढ़ियों की ओर बढ़े। सीढ़ियों पर ही समरेश मिल गया। समरेश के साथ डा० कोठावाला थे। हम चारों मौन चलते गये।

हमने जैसे ही कमरे में प्रवेश किया प्रतिभा ने आंखें खोलीं। उसने पलंग से उठने की कोशिश की पर पास बैठी नर्स ने उठने से रोक दिया। लगभग सारा शरीर पट्टियों से बंधा था शरीर से काफी खून निकला था। चेहरा एक दम पीला पड़ गया था। आंखों में विशेष प्रकार की चमक थी। प्रतिभा की ओर लगातार मैं देखता रहा। लम्बे अर्से के बाद प्रतिभा की

देखा था अतः कुछ अजीब सा लग रहा था। प्रतिभा के होंठ हिले। वह शायद बोलने का प्रयास कर रही थी। डाक्टर ने उसे हाथ से मौन रहने का इशारा किया। प्रतिभा यूं भी इतनी कमजोर हो गई थी कि होठों से शब्द निकल ही नहीं पा रहे थे। मैं आहिस्ते आहिस्ते पलंग के नजदीक आया और प्रतिभा के ललाट पर हाथ रखा। ललाट तवे की तरह जल रहा था। शायद प्रतिभा को जोरदार बुखार था। मैंने घूम कर डाक्टर की ओर देखा डाक्टर ने मेरे आशय को समझ लिया। चिन्ता की बात नहीं है। साधारण बुखार है। ठीक हो जायेगा। अभी अभी खून दिया है। मेरी शंका ने ज़ोर से झटका लगाया तो प्रतिभा को खून दिया गया है और खून देने के बाद इतना जोरदार बुखार है। स्थिति अत्यन्त नाजुक है। प्रतिभा जीवन और मृत्यु के बीच झूल रही थी। मैं समरेश के पास खड़ा हो गया। बेला कुर्सी खींच कर प्रतिभा के पास बैठ गई।

× × × ×

मैं कमरे के बाहर आ गया। समरेश डाक्टर से बातें कर रहा था। मैंने उसके पास पहुँच कर पूछा डाक्टर साहब कैसी हालत है?" डाक्टर ने उत्तर दिया–"देखिये हम पूरी कोशिश कर रहे हैं, लेकिन शरीर से खून काफी मात्रा में निकल चुका है शायद और भी खून देने की आवश्यकता पड़े। मैंने व्यंग होते हुए कहा, "आप खून की चिंता मत करिए डाक्टर साहब। खून मैं देने को तैयार हूँ। मेरे शरीर में काफी खून है।" डाक्टर ने मेरी ओर देखा और फिर प्रश्न सूचक दृष्टि से देखा। समरेश ने कहा—"डाक्टर आप प्रतिभा देवी के पति हैं। श्री अजय भादुड़ी।" डाक्टर के चेहरे पर सहानुभुति की

रेखायें खिंच गईं। उसके मुंह से केवल यही शब्द निकले—"अच्छा तो आप इनके पति हैं।" मैंने कोई उत्तर नहीं दिया। डाक्टर के शब्दों का अर्थ था कि पति होकर भी तुम अब आये हो। अब तो मामला नाजुक है। मैं क्या उत्तर देता। डाक्टर ने समरेश से कहा—"मैं आध घंटे बाद चक्कर लगाता हूँ।" समरेश ने डाक्टर को नमस्कार किया। मैंने भी नमस्कार के लिए हाथ उठाये लेकिन तब तक डाक्टर चल दिया था।

समरेश और मैं सामने की बालकनी में खड़े हो गये। सामने ही समुद्र तट स्थित बंगलों और नारियल के पेड़ों के झुंड स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। सामने फ्लाइंग क्लब का पुराना डकोटा जहाज जमीन पर उतरने का प्रयत्न कर रहा था। मैं समरेश की ओर देखने लगा। समरेश थोड़ी देर तो मौन खड़ा फिर बोला, "न जाने कैसे शकुन लेकर घर से निकला था। जुहू पहुँचते ही बांई आंख फड़कने लगी। कल प्रतिभा और गोदीवाला से चौपाटी में आराम होटल में भेंट हुई थी। आज सुबह मिलने का निश्चय किया था। मैं बड़े सबेरे प्रतिभा के बंगले पर पहुँच गया। जैसे ही फाटक खोला तो देखा प्रतिभा का ड्राइवर कृष्णा खून से भरा चाकू लिए भागता हुआ आ रहा है। मैं सम्हलता उससे पहले तो कृष्णा ने मुझे जोर का धक्का दिया। मैं रास्ते से हट गया। कृष्णा सीधे सड़क की ओर भागा। पीछे खून से भरा गोदीवाला सेठ निकला। मुझे देख कर चिल्लाया खून ? खून ? ? पकड़ो-भागो-कृष्णा को पकड़ो। मैं सम्हला और उसके पीछे चिल्लाता हुआ भागा। खून। खून। हत्यारा ? पकड़ो-पकड़ो ? ? मैं भागता हुआ सड़क पर पहुँचा। सड़क पर काफी भीड़ हो चुकी थी। कृष्णा बेतहाशा भागा जा रहा था। कुछ लोग उसके पीछे भाग रहे थे। जब पीछा

करने वाले कृष्णा के एक दम पास पहुँच गये तो वह चाकू हवा में घुमा कर खड़ा हो गया और चिल्लाया 'कोई आगे आया तो मैं उसे चाकू मार दूंगा।' अजीब दृष्य उपस्थित हो गया कोई आगे नहीं बढ़ रहा था। सड़क के किनारे की मजदूरों की झोपड़ियों में तेलगू मजदूरों की भीड़ लगी थी। वे भी इसी दृष्य को देख रहे थे। न मालूम कैसे एक थका मांदा मजदूर तेंदुए की तरह लपका। उसने कृष्णा को धर दबाया। शरीर का मजबूत कृष्णा क्षण भर में जमीन पर आ गया। फिर तो भीड़ के लोग उस पर टूट पड़े वह पकड़ लिया गया और पुलिस आ गई थी उसे पुलिस स्टेशन पहुँचा दिया गया।

मैं लौट कर प्रतिभा के बंगले पर आया। गोदीवाला फाटक के बाहर धूल में बेहोश पड़ा था। मेरे साथ काफी भीड़ थी। हम बंगले में घुसे। ड्राइंग रूम खून से भरा था। फर्श पर प्रतिभा औंधी पड़ी थी। शरीर में जगह जगह पर चाकू के घाव थे। प्रतिभा का शरीर एक दम ठंडा हो गया था। बर्फ की नांई। ऐसा लग रहा था कि प्रतिभा तो बस मिनटों की ही मेहमान है। हां पड़ौसी भी तब तक आ चुके थे। गोदीवाला होश में आ गया था। एम्बुलेंस को फोन कर दोनों को यहां लाया गया। गोदीवाला तो होश में है अब।

समरेश बोलता बोलता रुक गया। उसके चेहरे पर भय, आतंक, घृणा के भावों का सम्मिश्रण स्पष्ट दिखाई दे रहा था। मैं उसके बोलने की राह देखने लगा। लेकिन वह मौन ही रहा। मैं पास पड़ी बेंच पर बैठ गया। समरेश बोला। गोदीवाला को देखोगे। मैंने सम्मति सूचक सिर हिलाया। हम दोनों एक ओर चल दिये। गोदीवाला के कमरे में उसके रिश्तेदारों की भीड़ लगी थी। गोदीवाला ने पलंग से उठ कर

मुझे नमस्कार किया उसके हाथों में पट्टियां बंधी थी। पर उसके चोट बहुत मामूली लगी थी। उसने समरेश से पूछा–"प्रतिभा कैसी है। साले राक्षस ने ऐसा हमला किया कि मैं तो सम्हल ही नहीं पाया। शराब के नशे में पागल न जाने कहां से लपक कर आ गया और चाकू से हमला कर बैठा।" गोदीवाला और बोलता जाता पर पास बैठे युवक ने उससे कहा–"चाचा शांति रखिये। उत्तेजना से तबियत खराब हो जायेगी। ब्लड प्रेसर बढ़ जायेगा।" गोदीवाला मौन हो गया। मैंने वहां ठहरना उचित नहीं समझा। समरेश और मैं प्रतिभा के कमरे की ओर चल पड़े।

प्रतिभा, गोदीवाला, और कृष्णा के बारे में कुछ मालूम हुआ वह इस प्रकार है।......

अमर से निराश हो प्रतिभा ने बम्बई छोड़ दिया था। अब कृष्णा उसका ड्रायवर और प्रायवेट सेक्रेटरी था। प्रतिभा और कृष्णा सारे भारत में साल भर तक घूमते रहे। इस परिभ्रमण में प्रतिभा की काफी पूंजी समाप्त हो गई। उसे पुनः रुपयों का महत्व महसूस हुआ। वे बम्बई लौट आये। बम्बई में सेठ गोदीबाला से मुलाकात हो गई। गोदीवाला को प्रतिभा ने नया चित्र फायनेन्स करने को राजी कर लिया। गोदीवाला और प्रतिभा की घनिष्टता बढ़ने लगी। कृष्णा अब तक प्रतिभा पर अपना पूरा अधिकार समझने लगा था वह ईर्षा की आग में जलने लगा। प्रतिभा और कृष्णा में झगड़े भी हुए। प्रतिभा ने कृष्णा को दुत्कार दिया। कृष्णा अन्दर अन्दर जल रहा था। गोदीवाला अब अधिकतर प्रतिभा के यहां ही रहने लगा था। कृष्णा शराब पीकर आया और प्रतिभा को चाकू मार मार कर मृत सा बना दिया। गोदीवाला बाथरूम में था। जैसे ही वह

बाहर निकला कृष्णा और गोदीवाला में हाथापाई हो गई। कृष्णा ने गोदीबाला को भी घायल किया और भाग निकला।

अब प्रतिभा मौत के कगार पर थी। समरेश, बेला और मैं तीनों प्रतिभा के पलंग के पास बैठे थे। प्रतिभा मौन-सुस्त पड़ी थी, एक दम निष्प्राण सी।

एकाएक प्रतिभा की आंखों में विचित्र सी ज्योति चमक उठी। उसका ललाट उज्जवल हो गया। उसके होंठ हिले मैंने उसे मौन रहने का इशारा किया पर उसके होंठ जोर से हिले। प्रतिभा ने बोलने के लिए जोर लगाया। आखिर वह बोलने में सफल हो गई। मुझे सम्बोधन कर बोली-"अजय मेरी भूतकाल की भूलों को माफ कर सकोगे ? मैंने तुम्हारे साथ बड़ी बेवफाई की है मैं किस मुंह से तुमसे माफी मांगू। अब मैं मौत की मेहमान बनने वाली हूँ, अतः मुझे माफी मांगने में संकोच नहीं है।" प्रतिभा की जबान अटक गई। मेरा गला भर आया था। मैं कुछ बोलना चाह रहा था। लेकिन मेरे गले में शब्द अटक रहे थे। प्रतिभा ने पुनः प्रयास किया और बोलने लगी-"मुझे अपने पापों का फल मिल गया। मेरी जैसी स्त्री को यही सजा मिलनी चाहिए। मैं इसी के योग्य थी। मैंने सबसे पहले तुम्हें बुलाने के लिये कह तो दिया पर फिर विचार आया क्या तुम मुझ जैसी पापिन, अधोगामी कुलटा का मुंह देखना भी पसन्द करोगे। लेकिन फिर विचार आया नहीं अजय का हृदय विशाल है। वह मेरे अपराधों को क्षमा कर देगा। आखिर मैं उसकी वाग्दत्ता पत्नी हूँ। अजय के दर्शन बिना मैं उस लोक में भी सुखी कैसे रह सकूंगी और मेरे मन की प्रार्थना को तुमने स्वीकार कर लिया। प्रतिभा ने अपने तकिये के नीचे हाथ डाला लेकिन उसका हाथ वैसे ही रह गया। हाथों में शक्ति

कहां थी। समरेश ने आगे बढ़ कर पूछा–"क्यों चाभी निकाल दूं और वह लिफाफा भी।" प्रतिभा ने आंखों के इशारे से स्वीकृति दी। समरेश ने चाभी और एक बड़ा लिफाफा निकाला। प्रतिभा ने मेरी ओर इशारा किया। मैं हक्का बक्का प्रतिभा की ओर देखने लगा। प्रतिभा को बोलने में बड़ा कष्ट महसूस हो रहा था। जब भी वह बोलती ऐसा लगता मानों उसके शरीर की सारी नसें खिंच रही हैं। गला दब रहा है। इस बार उसने प्रयत्न करके कहा–"अजय इसे स्वीकार कर लो। यह मेरी तिजोरी की चाभी है। और इस लिफाफे में मेरा बसियतनामा है। इसे अस्वीकार मत करना तुम्हारी स्वीकृति मेरी आत्मा को शांति प्रदान करेगी।" प्रतिभा ने आंखें घुमाई और बेला की ओर देखा। बेला की आंखों में आंसू थे। प्रतिभा ने पुनः बड़े प्रयास के बाद कहना शुरू किया–"बेला ही सच्ची स्त्री है। स्त्री धर्म को इसी ने निभाया। अब मैं कानूनी बाधा नहीं रहूंगी। तुम बेला से विवाह कर लेना अजय। भगवान तुम्हारी जोड़ी पर आशीर्वाद की वर्षा करेगा।" प्रतिभा की जुबान पुनः अटक गई। मैंने उसे कुछ कहना चाहा पर उसी क्षण वह हिचकियां लेने लगी। समरेश भागा डा० कोठीवाला को बुलाने। मैंने पास पड़ी दवा का एक चम्मच प्रतिभा के गले में उड़ेला, लेकिन हिचकियां रुकी नहीं।

प्रतिभा की आंखों में विचित्र रोशनी आ गई थी। उसका ललाट तपे सोने सा चमकने लगा था बेला शोकातुर हो मेरी ओर देख रही थी। नर्स उठ कर कोरोमिन ड्राप्स लेने चली। मैंने प्रतिभा के ललाट पर हाथ रखा। वह लगातार मेरी ओर देख रही थी। मेरी आंखों से आंसू बहने की तैयारी कर रहे थे। और मैं उन्हें जबरदस्ती रोकने का प्रयास कर रहा था।

डाक्टर कोठावाला और समरेश ने जैसे ही कमरे में प्रवेश किया प्रतिभा की हिचकियां तेज हो गईं। डाक्टर ने नर्स को आदेश दिया—"कोरोमिन इंजेक्शन तैयार करो।" नर्स ने सीरिंज में इंजेक्शन भर डाक्टर के हाथ में दिया। डाक्टर ने प्रतिभा के चेहरे की ओर देखा। आखिरी हिचकी आई और प्रतिभा का सिर तकिये पर लुढ़क गया। सीरिंज डाक्टर के हाथ में ही रह गयी। और डाक्टर उठ कर कमरे के बाहर चला गया।

मेरी आंसुओं की बाढ़ रुक नहीं सकी। मैं जोर से रो पड़ा। समरेश मुझे बाहों में थामे कमरे के बाहर ले आया।

बाघजी भाई की बाड़ी में जो चिता की ज्वाला धूं धूं करके जली वह अब भी मेरी आंखों के सामने घूम रही है। प्रतिभा की तिजोरी में अभिनेत्री की आत्म-कथा व पचास हजार के नोट निकले। वसीयत नामे में मेरे नाम जुहू का बंगला और लोनावाला में एक बंगला किया गया था। मैं सोच रहा हूं, प्रतिभा की सम्पत्ति को बेच कर उसकी स्मृति में पाठशाला शुरू कर दूं। बेला की भी यही राय है। समरेश का सहयोग तो सदैव मिलेगा ही। मैं कुर्सी पर बैठा यही सोच रहा हूं। पाठशाला का धुंधला चित्र मेरी आंखों के सामने उभर कर आ रहा है। और उसके साथ प्रतिभा के जीवन के विभिन्न चित्र भी। तिजोरी से प्राप्त अधूरी अभिनेत्री की आत्म-कथा को मैंने प्रकाशित करने का इरादा किया है।

उपसंहार के साथ।—